४०३१

॥ओ३म्

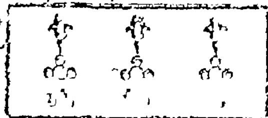
दर्शनं देवदेवस्य दर्शनम् पापनाशनम्
दर्शनं स्वर्ग सोपानं दर्शनम् मोक्ष साधनम्
दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वंदनेन च
न चिरं तिष्ठति पापं हस्ते छिद्र हस्ते यथोदकम्
वीतराग मुखं दृष्ट्वा पद्मराग समप्रभम्
नैक जन्म कृतं पापं दर्शनेन विनश्यति
दर्शनं जिनसूर्यस्य

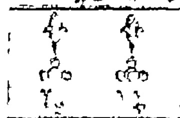
ओ३म्

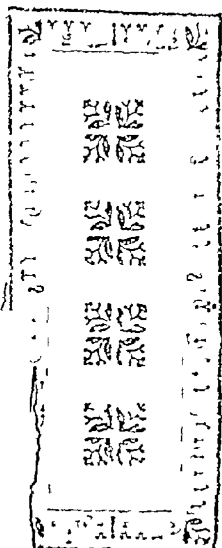
नर तन पाय यतन कर ऐसा जिसमे वाह करतार मिले, ऐसो उत्तम जन्म पदारथ फिर न वारम वार मिले, बने है पूरब कर्म जो उत्तम उसकी है यह पुन्याई, जो तैने संसार मे सुन्दर नर देही पाई, पाय के ऐसी (उत्तम काया) अज्ञान करो हर को भाई

जनम जनम की बिगड़ी हुई सब याही जनम मे बन जाई सुख दुख भोग पिता और माता और सकल संसार मिले, ऐसो उत्तम जन्म पदारथ फिर नही वारम् वार मिले

मिला तुझे अनमोल अब उपाय तु ऐसो कर, त्याग सकल कामना जग की हरि







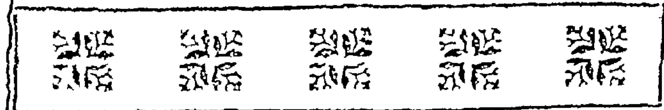


जैनार्णव ।



की० १)

चन्द्रसेनजैन वैद्य, इटावा



स्व० आचार्य श्री [illegible] जी म० के शिष्य पं० श्री मानचन्द्र जी म० के शिष्य पं० श्री [illegible] जी म० की ओर से सादर भेंट

* श्रीमद्जिनवरेभ्यः *

जैनार्णव ॥

जिसको

बाबू चन्द्रसेन जैन वैद्य ने संग्रह

कर छपाया ॥

द्वितीयावृत्ति २०००	सन् १९१२	न्योछावर एक रुपया

मिलने का पता—

बाबू चन्द्रसेन जैन वैद्य

जैन पुस्तकालय—इटावा ॥

Printed by Pandit B. D. S.

at the Brahm Press Etawah

ससकुंजरधवलधुरंधरो ॥ केहरिकेसर शोभित नख शिख सुंदरो ॥ कञ्जनकलश न्हौनदुतिदाम सुहावने ॥ रवि शशि मण्डलसधुर मीनयुगपावने ॥ पावन कनकघटयुग्म-पूरण कमल सहित सरोवरो ॥ कल्लोलमालाकुलितसागर सिंह पीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरवितान फणपति भवन रविछवि छाजिये ॥ रुचिररत्नराशि दिपन्तिपावक तेजपुंज विराजिये ॥ ३ ॥ ये शुभ सोलहस्वप्नेसूतीशयन मे । देखेमायमनोहर पिछली रैन में ॥ उठ प्रभात पिय पूछत अवधि प्रकाशियो ॥ त्रिभुवन पति सुत होय सुफल तिहि भाषियो ॥ भाषो सोफल तिहि चित्त दम्पति परम आनन्दित भये ॥ छहमास पर नवमास वीते रैन दिन सुख सों गये ॥ गर्भावतार महन्त महिमा सुनत अतिसुख पाइयो ॥ भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥ ४ ॥

॥ इति श्रीजिनेन्द्र गर्भकल्याणक मंगलं समाप्तम् ॥



अथ जन्मकल्याणक ।

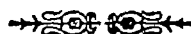
मति श्रुति अवधि विराजत जिन जब जन्मियो ॥ तीन लोक भये हर्षित सुरगण भर्मियो ॥ कल्पवासी घर

घंटा अनहद बाजियो ॥ ज्योतिषी घर हरिनाद सहज गल गाजियो ॥ गाजो सहजही शंख भावन भवन शब्द सुहावने ॥ व्यतर निलय पटु पटह बाजे कहत किम म-हिमा बने ॥ कम्पे सुरासन अवधि बलकर जन्म निश्चय जानियो ॥ धन राज तब गजराज माया मयी निर्भय आनियो ॥ १ ॥ योजन लक्ष गजेन्द्र बदन सो निर्मये । बदन बदन बसु दन्त दन्त प्रति सर ठये ॥ सर सर सो पन वीस कमलनी छाज ही ॥ कमलनी कमलनी कमल पचीस बिराजही ॥ राजन्ति कमलनि प्रति अठोत्तर सौ मनोहर दल बने ॥ दल दलनि अप्सरा नचहिं नवल सुहाव भाव सुहावने ॥ मणि किरण ककणावन विचित्रय अमर मण्डप सोहिये ॥ घटघट चमर ध्वजा पताका देख त्रिभुवन मोहिये ॥२॥ तापर हर चढ़ आइयो सब परि-बार सो ॥ पुरहि प्रदक्षिण देत्रय जिन जय जयकारसो ॥ गुप्त जाय जिनजननी सुख निद्रा रची ॥ मायामय शिशु राखतो प्रभु आने शची ॥ आने शची जिन रूप निर-खत नयन तृप्त न हूजिये ॥ तब परम हर्षित होय हरिने सहस लोचन कीनये ॥ पुनकर प्रमाण सो प्रथम इन्द्र उ-च्छगधर प्रभु लीनये ॥ ईशान इन्द्र सुचन्द्र छवि शिर छत्र

प्रभुके दीनये ॥३॥ सनत्कुमार महेन्द्र चमर दोउ ढारही ॥ शेष शक्र सुर जय जय शब्द उच्चारही ॥ उत्सव सहित चतुर विधि सुर हर्षित भये ॥ योजन सहस्र निन्न्यानवे गगन उलंघ गये ॥ गये सुर गिरि जहां पाडुक वन विचित्र विराजही ॥ पांडुक शिला जहा अर्धचन्द्र समान रवि छवि छाज हीं ॥ योजन पचास विशाल दुगुन आयाम वसु ऊंची गिनी ॥ वर अष्ट मगल कनक कलशा सिंह पीठ सुहावनी ॥४॥ रच मणिमण्डित सोहत मध्यसिंहासनो ॥ थापे पूर्व दिशि मुख प्रभु कमलासनो ॥ वाजत ताल मृदंग भेरि वीणाघने ॥ दुंदुभी शब्द मधुर ध्वनि बाजें बाजने ॥ व जहि बाजे शची सब मिल धवल मगल गावही। जहा करे नृत्य सुरागना सब देव कौतुक लावहीं ॥ भरि क्षीरसागर जल सुहस्ता हस्त सुरगण लावहीं। सौ धर्म और ईशान इन्द्र सो कलश ले प्रभु नहावही ॥ ५॥ बदन उदर अवगाह कलशगत जानियो ॥ एक चार वसु योजन मान प्रमाणियो ॥ सहस्र अठोत्तर कलशा प्रभु जी के शिर ढुरे। पुन शृंगार प्रमुख आचार सवैं करे ॥ कर कर आचार सो प्रमुख महिमा आनि पुनि मातहि दिये॥ धनपति सेवा राखि सुरपति आप

सुर लोकै गये ॥ जन्माभिषेकमहत्त महिमा सुनत अति सुख पाइयो ॥ भण रूप चन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥ ६ ॥

इति श्री जिनेन्द्र जन्मकल्याणकमंगलं समाप्तम् ॥



अथ दीक्षा कल्याणक ।

अमजलरहित शरीर सदा सब मल नहीं । क्षीरवरण वर रुधिर प्रथम आकृति ठहीं ॥ प्रथम सार संहनन स्वरूप विराजही ॥ सहज सुगंध सुलक्षण मंडित छाजही ॥ छाजे अतुल बल परमप्रिय हित मधुर वचन सुहावने ॥ दश सहज अतिशय सुभग मूरत बाललील कहावने ॥ अब बाल कालत्रिलोक पतिजन रुधिर उचित सो नित नये ॥ अमरो पुनीत पुनीत अनुपम सकल भोगन भोगिये ॥ १ ॥ भव तन भोग विरक्त कदाचित चिन्तये ॥ धनयौवनप्रिय पुत्र सकल अनित्यये ॥ कोई नहीं शरण मरण दिन दुख चहुंगतिभरो ॥ दुख सुख एकही भुगते जीव विधिवश परो ॥ परो विधिवश जीव चेतन अन्य जड़ जो कलेवरो ॥ तन अशुचि परसे होय आस्रव परिहरे सोसंवरो ॥ निर्जरा तप बल होय समकित बिन

सदा त्रिभुवन भ्रमो ॥ दुर्लभ विवेक विना न कवहूं पर
म धर्म विषैं रमो ॥२॥ यह प्रभु वारह भावन भावना
भाइयो ॥ लौकान्तिक वरदेव नियोगहि आइयो ॥ कु-
सुमांजलि भर चरण कमल शिर नाइयो। स्वयं वुद्धि प्र-
भुस्तुतिकर तिन समझाइयो ॥ समझाय प्रभू को गये
निजपुर पुनि महोत्सवहरि कियो॥ रुचि रुचिरचित्रवि
चित्र शिविका कर सुनन्दन वन लियो॥ तहां पञ्चमुष्टी
लोच कीनी प्रथम सिद्धन नुति करी ॥ मण्डे महाव्रत
पञ्च दुद्धर सकल परिग्रह परिहरी ॥ ३ ॥ मणिमय भा-
जन केश परी ठये सुरपती ॥ क्षीर समुद्र जल क्षिप कर
गये अमरावती ॥ तप संयम वल प्रभु को मन पर्यय
भयो ॥ मौन सहित तपकरतकाल कछु तहांगयो। गयो
तहां कछु काल तप वल ऋद्धि वसु गुण सिद्धिया॥ पुन धर्म
ध्यान वलेन क्षय गई सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥ क्षिपि
सातवें गुण यत्न विन तहा तीन प्रकृति जु वुधि वढ़े॥
कर करण तीन प्रथम शुकल वल क्षपक श्रेणी प्रभु चढ़े
॥ ४ ॥ प्रकृति छत्तसी नवें गुणस्थानविनाशियो। दशवे
सूक्ष्म लोभ प्रकृति तहा नाशियो ॥ शुकल ध्यान पद
दूजो पुनि प्रभू पूरियो ॥ वारहवें गुण सोलह प्रकृतें चू-

रियो ॥ चूरियो त्रेसठ प्रकृति यह विधि घातिया कर्मों तनी ॥ तप कियो ध्यान पर्यंत बारह बिधि त्रिलोक शिरोमणी ॥ निःकर्म कल्याणक सुमहिमा सुनत अति सुख पाइयो ॥ भणि रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥ ५ ॥

इति श्रीजिनेन्द्र दीक्षा कल्याणक मंगलं समाप्तम्

अथ ज्ञान कल्याणक ।

तेरहवें गुणस्थान संयोग जिनेश्वरो । अनंत चतुष्टय मण्डित भये परमेश्वरो ॥ समोशरण तब धनपति बहु बिधि निर्मयो । आगम युक्त प्रमाण गगन परतल ठयो ॥ तल ठयो चित्र बिचित्र मणिमय सभामण्डप सोहियो । तहां मध्य बारह बने कोठे बनक सुर नर मोहियो ॥ मुनि कल्पबासिनी अर्यिका तहां ज्योतिषी भवनत्रिया । पुनि भवन भौमिक कल्प सुर नर नर पशुन कोठे बैठिया ॥१॥ मध्य प्रदेश तीन मणि पीठ तहां बने । गन्धकुटी सिंहासन कमल सुहावने ॥ तीन छत्रशिर शोभित त्रिभुवन मोहिये । अन्तरिक्ष कमलासन प्रभु तहां सोहियो ॥ सोहिये चौसठ चमर ढुरे अशोक तरु तहा छाजते । पुन दिव्य ध्वनि प्रति शब्द नित तहा देव दुन्दुभी बाजते ॥

सुर पुष्प वृष्टि जो प्रभा मण्डल कोटि रवि छवि लाजते । इस अष्ट अनुपम प्रतीहार्यवर विभूति विराजते ॥२॥
सौ योजन तहा होत सुभिक्ष चहुं दिशि । गगन गमन पुन प्राणीबध नही होयसी ॥ निरुप सर्ग निराहार सदा जिन पेखिये । आनन चार चहूं दिशि शोभित देखिये ॥ दीखें अशेष विशेष विद्या विभव वर ईश्वर पनो । छाया विवर्जित शुद्ध स्फटिक समान तनु प्रभुको वनो ॥ नही नयन पलक लगें कदाचित् केश नख सम छाजिये । इस घातिया क्षय जान अतिशय दश विचित्र विराजिये ॥३॥
सकल अर्थ मय मागधी भाषा जानियो। सकल जीव गत मैत्रीभाव बखानियो ॥ सब ऋतु के फल फूल वनस्पति मन हरै । दर्पण सम भूमान पवन गत अनुसरैं । अनुसरहि परमानन्द सब का नारिनर ते सेवते । योजन प्रमाण धरा सम्हारत जात मारग देवते ॥ पुनि करहि मेघकुमार गन्धोदक सुवृष्टि सुहावनी । पदकमल तब सुर रचहिं कमल सो धरनी शशि शोभावनी ॥ ४ ॥ अमल गगन तल अरु दिशि तेहि अनुसार ही । चतुर निकाय के देव सो करन हकार ही ॥ धर्म चक्र चले आगे रवि जहा लाज ही । पुनि भृंगार प्रमुख वसु मगल राज

हो ॥ राजहीं दश अरु चार अतिशय देवर चित सुहाव- ने । जिन राज केवल ज्ञान महिमा और कहत कहां वने ॥ तव इन्द्र आन कियो महोत्सव सभा शोभित अ- तिबनी । धर्मोपदेश दियो तहा उचरी सो वाणी जि- नतनी ॥५॥ क्षुधा तृषा अरु राग द्वेष असुहावने । जन्म जरा अरु मरण त्रिदोष भयावने ॥ रोग शोक भयवि- स्मय अरु निद्राहनी । खेद स्वेद मद मोह अरति चिन्ता गनी ॥ जिनिये अठारह दोष तिनकर रहित देव निरं- जनो ॥ श्रीज्ञान कल्याणक सो महिमा सुनत सव सुख पाइयो । भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥ ६ ॥

इति श्रीजिनेन्द्र ज्ञानकल्याणक मङ्गल समाप्तम् ॥

अथ निर्वाण कल्याणक ।

केवल दृष्टि चराचर देखो जार सो । भव्यन प्रति उपदेशो जिनवर तारसो ॥ भवभय भीत भविकजन श- रण जे आइयो । रत्नत्रय दशलक्षण पन्थ ते ल्याइयो ॥ लाइयो पथ ते भविक पुनि प्रभु तृतीय शुक्लारं भयो । तहा तेरवे गुण स्थान अन्तह वहत्तर प्रकृतहिं क्षयो ॥

पुन चौदवें गुण प्रकृति तेरह तुरिय शुक्ल बलं हती। हत घाति वसुविधि कर्म पहुंचे समय में पञ्चमगती ॥१॥ लोक शिषिर तनु वात बलय में सांठियो ॥ धर्म द्रव्य विन आगे गमन नहीं कियो ॥ मयन रहित मुखोदर अंबर जारि सो। किमपि हीन निज तनु से भये प्रभु तारि सो ॥ तारि अविचल द्रव्य पर्यय अर्थ पर्यय क्षण क्षई। निश्चय नयेन अनन्त गुण व्यवहार नयवसु गुण मई ॥ वस्तु स्वभाव विभाव विरहित शुद्ध परणति परणये। चिद्रूप परमानन्द मन्दिर सिद्ध परमातम भये ॥ २ ॥ तनु परमाणु गगन में तब सब खिरगये। रहे शेष नख केश रूप जे परिणये ॥ तब हरि प्रमुख चतुर विधि सुर गण सब संचो। माया मय नख केश सहित निज तनु रचो ॥ रचि अगर चन्दन प्रमुख परिमल दिव्य ध्वनि जय कारियो। पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुविधि सस्कारियो ॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पाइयो। भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥३॥ मैं मतिहीन भक्तिवश भावना भाइयो। मंगल गीत प्रवन्ध सो जिन गुण गाइयो ॥ जे नर सुनहिं वखानहीं स्वर धरि गावहीं। मन वाञ्छित फल ते

नर निश्चय पावहीं ॥ पावैं ते आठो सिद्धि नवनिधि मन प्रतीत जो आनिये । भ्रम भाव छूटे सकल मन के जिन स्वरूप ये जानिये ॥ पुनि हरैं पातक टरत विघ्न सो होय मंगल नित नये । भण रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंगहि जये ॥ ४ ॥

इति श्रीजिनेन्द्र निर्वाण कल्याणक मगलं समाप्तम् ।



(२) देवशास्त्रगुरु पूजा ।

अडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेवअरहन्तसुश्रुतसिद्धान्तजू ।
गुरुनिर्ग्रन्थमहन्तमुक्तपुरपन्थजू ॥
तीन रत्न जगमाहि सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा

पूजू पद अरहन्तके, पूजू गुरुपद सार ।
पूजू देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह । अत्र अवतर अवतर । संवौषट्
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

पुन चौदवें गुण प्रकृति तेरह तुरिय शुक्ल वलंहती। इस घाति वसुविधि कर्म पहुंचे समय में पञ्चमगती ॥१॥ लोक शिषिर तनु वात वलय में सांठियो ॥ धर्म द्रव्य विन आगे गमन नहीं कियो ॥ मयन रहित मुखोदर अंबर जारि सो। किमपि हीन निज तनु से भये प्रभु तारि सो ॥ तारि अविचल द्रव्य पर्यय अर्थ पर्यय क्षण लई। निश्चय नयेन अनन्त गुण व्यवहार नयवसु गुण मई ॥ वस्तु स्वभाव त्रिभाव विरहित शुद्ध परणति परणये। चिद्रूप परमानन्द मन्दिर सिद्ध परमातम भये ॥ २ ॥ तनु परमाणु गगन में तब सब खिरगये। रहे शेष नख केश रूप जे परिणये ॥ तब हरि प्रमुख चतुर विधि सुर गण सब संचो। माया मय नख केश सहित निज तनु रचो ॥ रचि अगर चन्दन प्रमुख परिमल दिव्य ध्वनि जय कारियो। पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुवि-धि सस्कारियो ॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पाइयो। भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मंगल गाइयो ॥३॥ मैं मतिहीन भक्तिवश भावना भा-इयो। मंगल गीत प्रवन्ध सो जिन गुण गाइयो ॥ जे नर सुनहिं बखानहीं स्वर धरि गावहीं। मन वाञ्छित फल ते

न [illegible] ॥ दायि मैं [illegible] सिद्धि [illegible]
[illegible] नो जानिये । [illegible]
[illegible] स्वरूप वे जानिये ॥ [illegible]
सो होय मंगल नित नये । [illegible]
जिनदेव चौसंगहि [illegible] ॥ ४ ॥

इति श्रीजिनेन्द्र निर्वाण कल्याणक मंगल समाप्तम् ।



(२) देवशास्त्रगुरु पूजा ।

अडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेवअरहन्तसुश्रुतसिद्धान्तजू ।
गुरुनिर्ग्रन्थमहन्तमुकतिपुरपन्थजू ॥
तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा

पूजूं पद अरहन्तके, पूजूं गुरुपद सार ।
पूजूं देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह । अत्र अवतर अवतर । संवौषट्
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

उत्तम छहों रस युक्त नित नैवेद्यकर घृत में पचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थपद पूजा रचूं ॥

दोहा

नानाविधि संयुक्तरस, व्यञ्जन सरस नवीन ।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु लीन ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जे त्रिजग उद्यमनाशकीनों मोहतिमिरमहाबली ।
तिहिकर्मघातीजातिदीपप्रकाश जोतिप्रभावली ॥
इहिभांति दीपप्रजालकंचनके सुभाजनमें खचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनितपूजा रचूं ॥

दोहा ॥

स्वपरप्रकाशन जोति अति, दीपक तमकर हीन ।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु लीन ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जे कर्म ईंधन दहन अग्नि समूह सब उद्धृतलसै ।
वर धूपतास सुगन्धताकर सकलपरिमलता हसै ॥
इह भांति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमांहिं नहीं पचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनितपूजा रचूं ॥

दोहा ॥

अग्निमाहि परिमल दहन, चन्दनादि गुण लीन।
जासों पूजूं परम पद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥७॥

ओंह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपंनिर्वपामीति स्वाहा ॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी सकल फल गुणसार हैं॥
सो फल चढावत अरथ पूरन, सकल अमृतरससचूं।
अरहतश्रुत सिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनितपूजा रचूं

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण रसलीन।
जासों पूजो परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्पचरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध बहुजनमके पातक हरूं॥
इहभांतिअर्घचढायनितभवि करत शिवपंकति मचूं।
अरहत श्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनित पूजा रचूं॥

दोहा ॥

वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥

अथ जयमाल ॥

॥ दोहा ॥

देवशास्त्रगुरुरत्नशुभ, तीनरतनकरतार ।
भिन्नभिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार॥१॥

॥ पद्धड़िछन्द ॥

चउकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोषराशि
जे परमसुगुणहैंअनंतधीर।कहवतकेछयालिसगुणगंभीर॥२॥
शुभसमवशरणशोभा अपार । शत इन्द्र नमतकर शी-
सधार । देवाधिदेव अरहत देव । वंदों मन वच तनकर
सुसेव ॥ ३ ॥ जिनकीधुनि है ओंकाररूप । निरअक्षर-
मय महिमा अनूप। दशअष्टमहाभाषासमेत। लघुभाषा
सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥ सो स्याद्वादमय सप्तभंग ।
गणधर गूंथे बारह सुअंग। रवि शशिनहरैसोतम हराय।
सोशास्त्रनमूं बहुप्रीतल्याय ॥५॥ गुरु आचारज उवझा-
यसाध । तन नग्न रत्नत्रयनिधिअगाध। संसारदेह वैरा-
गधार । निरवांछितपें शिवपद निहार ॥ ६ ॥ गुण छ-

त्तिस पच्चिस आठवीस। भवतारण तरणजिहाज ईस।
गुरुकीसहिमावरणीनजाय। गुरुनामजपोंमनवचनकाय॥७॥

घत्ता—सोरठा

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै।
द्यानत श्रद्धावान, अजर अमर पद भोगवै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति देवशास्त्रगुरुकी समुच्चय भाषा पूजा समाप्त ॥

(३) सिद्धपूजा ॥

ऊर्द्ध्वाधोरयुतं सविन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं।
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्वान्वितम्।
अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुत ह्रींकारसंवेष्टितम्
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ओंह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते। सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर। सवौषट्। ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते। सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते। सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(ऐसा कहकर सिद्धयन्त्र की स्थापना करना चाहिये)

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाल ॥

॥ दोहा ॥

देवशास्त्रगुरुरत्नशुभ, तीनरतनकरतार ।
भिन्नभिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार॥१॥

॥ पद्धड़िछन्द ॥

चउकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोषराशि
जे परमसुगुणहैंअनंतधीर।कहवतकेछयालिसगुणगंभीर॥२॥
शुभसमवशरणशोभा अपार । शत इन्द्र नमतकर शीसधार । देवाधिदेव अरहत देव । वंदों मन वच तनकर सुसेव ॥ ३ ॥ जिनकीधुनि है ओंकाररूप । निरअक्षरमय महिमा अनूप। दशअष्टमहाभाषासमेत। लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥ सो स्याद्वादमय सप्तभंग। गणधर गूंथे बारह सुअंग। रवि शशिनहरैंसोतम हराय। सोशास्त्रनमूं वहुप्रीतल्याय ॥५॥ गुरु आचारज उवझायसाध। तन नग्न रत्नत्रयनिधिअगाध। संसारदेह वैरागधार। निरवांछितपें शिवपद निहार ॥ ६ ॥ गुण छ-

त्तिस पच्चिस आठवीस। भवतारण तरणजिहाज ईस।
गुरुकीमहिमावरणीनजाय। गुरुनामजपोंमनवचनकाय॥७॥

घत्ता—सोरठा

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै।
द्यानत श्रद्धावान, अजर अमर पद भोगवै॥ ८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति देवशास्त्रगुरुकी समुच्चय भाषा पूजा समाप्ता॥

(३) सिद्धपूजा॥

ऊर्द्ध्वाधोरयुतं सबिन्दुसपरंब्रह्मस्वरावेष्टितं।
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्वान्वितम्।
अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुत ह्रींकारसंवेष्टितम्
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः॥

ओंह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम्॥ १॥

(ऐसा कहकर सिद्धयन्त्र की स्थापना करना चाहिये)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं। हानादिभावरहितं भववीतकायम् ॥ रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानां। नीरै र्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा। आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं सम्यक्त्वशर्मगरिम जनमार्तिशीतं। सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम्। सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानाम् पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ।३ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञम् द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम्। मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनाम् पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥४॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा। ऊर्द्ध्वस्वभाव गमनं सुमनोव्यपेतम् ब्रह्मादिबीजसहित गगनावभासम्। क्षीरान्नसाज्यवटकैरसपूर्णगर्भैः, नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥५॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा । आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम् । कर्पूरवर्ति बहुभिः कनकावदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥६॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने मोहान्धकार विनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा॥ पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितान्तम् त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् । सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥७॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतयेसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपंनिर्वपामीति स्वाहा । सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रैर्ध्येय शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् । नारिङ्गपूगकदलीफलनालिकेरैः सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं-सिद्धचक्राधिपतयेसिद्धपरमेष्ठिनेमोक्षफल प्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा । गन्धाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनम् पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्य चरुं दीपकम् । धूपंगन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥९॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेअनर्घ्यपदप्राप्तये

अर्घनिर्वपामीतिस्वाहा॥ ज्ञानोपयोगविमल विशदात्म रूपम् सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम्। कर्मौघलक्षदहन सुखशस्यबीजम् वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥९॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीम्।
येनाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाव्याबाधताद्यैर्गुणैर्
युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥१०॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला

विरागसनातनशान्तनिरंश। निरामय निर्भयनिर्मल हंस। सुधामविबोधनिधान विमोह। प्रसीदविशुद्धसुसिद्धसमूह ॥१॥ विदूरितसंसृतभाव निरङ्ग। समामृतपूरित देव विसङ्ग॥ अबन्धकषायविहीनविमोह। प्रसीदविशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥ निवारितदुःकृतकर्मविपाश। सदामलकेवलकेलिनिवास॥ भवोदधिपारगशान्त विमोह। प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥३॥ अनन्त

सुखामृतसागर धीर। कलङ्करजोमलभूरिसमीर॥ विखण्डितकाम विरामविमोह। प्रसीदविशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥ विकारविवर्ज्जित तर्जितशोक। विवोधसुनेत्र विलोकत लोक ॥ विहार विराव विरङ्ग विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥ रजोमलखेदविमुक्त विगात्र। निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र॥ सुदर्शनराजितनाथविमोह। प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥ नरामरवन्दित निर्मल भाव। अनन्तमुनीश्वरपूज्यविहाव॥ सदोदय विश्वमहेश विमोह। प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥७॥ विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र। परापर शङ्कर सारवितन्द्र॥ विकोपविरूपविशङ्कविमोह। प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥ जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिंतित निर्मल निर्हङ्कार अचिन्त्यचरित्र विदर्भविमोह। प्रसीदविशुद्धसुसिद्धसमूह ॥९॥ विवर्णविगन्धविमानविलोभ। विमायविकायविशव्द विलोभ। अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥ १० ॥

घत्ता।

अतमसमयसारं चारुचैतन्यचिन्हं परपरणतिमुक्तंपद्मनन्दीन्द्रवन्द्यम्॥ निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रंविशुद्धं स्मरति नमति यो वा स्तौति सोभ्येतिमुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओंह्रींसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा

अडिल्लछन्द ।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो ।
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥
शुद्धबोध अविरुद्धअनादि अनंत हो ।
जगत्शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥
ध्यानअगनिकर कर्म कलङ्क सवै दहे ।
नित्य निरञ्जनदेव सरूपी हो रहे ॥
ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकै ।
सो परमातम सिद्ध नमूं सिरनायकै ॥ २ ॥

दोहा ।

अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनन्त की खान ।
ध्यान धरै सो पाइये, परमसिद्ध भगवान ॥३॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(४) सप्त ऋषि पूजा ।



॥ छप्पय ॥

प्रथम नाम श्री मन्व दुतिय स्वर मन्व ऋषीश्वर । तीसर मुनि श्री निचय सर्व सुंदर चौथो वर ॥ पंचमश्री

जयवान विनय लालस षष्टम भनि। सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र धाम गनि॥ ये सातों चारण ऋद्धि धरकरों तास पद थापना। मैं पूजों मन बच काय कर जो सुख चाहूं आपना॥ ओं ह्रीं चारण ऋद्धि सहित भ्राजमान सप्त ऋषीश्वर जिनाय अत्र अत्र वतर संवौ षटह्वानन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन अत्र मम सन्निहिता भव भव बिषट सधीश करणं॥ अथाष्टक गीता छंद॥ शुभतीर्थ उद्भव जल अनूपम मिष्ट शीतल ल्यायके। भव तृषा कद निकद कारण शुद्ध घट भरवायके॥ मन्वादि चारण ऋद्धि धारक मुनिन की पूजा करों। ता करें पातिक हरें सारे सकल आनंद बिस्तरों॥ ओं ह्रीं श्री मन्वस्वरम न्व निचय सर्वसुंदर जयवान विनय लालस जय मित्र सप्त चारण ऋषिभ्यो जल ॥१॥ श्रीखण्ड कदली नद केसरि मन्द मन्द घिसायके। तसु गंध प्रसरित दिग दिगंतर भरि कटोरी भाय के॥ मन्वादि० ॥ सुगंधं ॥२॥ अति धवल अक्षित खण्ड बरजित मिष्ट राजन भोग के। कल धौत थारा भरित सुन्दर चुनित शुभ उपयोग के॥ मन्वादि० ॥ अक्षतं ॥३॥ बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे अमल कमल गुलाबके। केतुकी चम्पा चारु मरुआ चुने निजकर चालके॥ मन्वादि० ॥ पुष्प ॥४॥ पक्वान्ननाना भाति

चातुर रचित शुद्ध नये २। सद्शिष्ट लाडू आदि भर बहु पुरटके थारा लए ॥ मन्वादि० ॥५॥ कल धौत दीपक जड़ित नाना भरि गो घृत सार सो। अति ज्वलित जग मग जोति याकी तिमिर नाशन हार सो॥मन्वादि० ॥दीपं॥६॥ दिक चक्र गंधित होत जाकर धूप दशअंगी कही॥ सो ल्याय मन बच काय शुद्ध लगाय कर खेऊं सही ॥ मन्वादि ॥ धूपं ॥७॥ बर दाख खारक अमित प्यारे मिष्ट २ चुनायके । द्रावड़ी दाड़िम चारु पुंगी थाल भर भर भायके ॥ मन्वादि० फल ॥८॥ जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु बर दीप धूप सुल्यावना। फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित अर्घकीजे पावना॥मन्वादि०॥ अर्घं॥

[जयमाल] त्रिभंगी छन्द॥ वन्दों ऋषिराजा धर्म ज-हाजा निज पर काजा करत भलें। करुणाके धारी गगन बिहारी दुख अपहारी भरमदलें॥काटत यम फन्दा भव जनवृन्दा करतअनन्दा चरणनमे। जो पूजै ध्यावैं मंगल गावैं फेर न आवैं भव बन में ॥ [पद्धड़ीछन्द] जय श्री मन्व मुनिराजा महंत। त्रस थावरकी रक्षा करत ॥जय मिथ्या-तम नाशक पतंग। करुणा रस पूरित अंग अंग॥१॥जय श्री स्वर मन्व अकलंक रूप। पद सेव करत नित अमर भूप

जय पच अत्त जीते महान। तप तपत देह कंचन समान ॥२॥ जय निश्चय सप्त तत्वार्थ भ्यास। तप रमा तनो मनमें प्रकाश॥ जय विषय रोध सम्वोध भान। पर पर णति नाशन अचल ध्यान ॥३॥ जय जयहि सर्व सुन्दर दयाल। लखि इन्द्र जालवत जगत जाल॥ जय तृष्णाहा-री रमण राम। निज परणात में पायो आराम ॥४॥ जय आनन्द घन कल्याण रूप। कल्याण करत सबको अनूप जय मद नाशन जयवान देव। निरमद विचरत सब करत सेव ॥५। जय जय विनय लालस असान। सब शत्रु मित्र जातन समान॥ जय कृशित काय तप के प्रभाव। छवि छटा उठति आनन्द दाय॥६॥ जय मित्र सकल जग के सुमित्र। अन गिनत अधम कीने पवित्र॥ जयचन्द्र वदन राजीव नयन। कबहू विकथा बोलत न बयन॥७॥ जय सातों मुनिवर एक सग। नित गंगण गमन करते अभंग॥ जय आये मथुरापुर मझार। तहां मरी रोगका अति प्रचार ॥८॥ जय जय तिन चरणोंके प्रसाद। सब मरी देव कृत भई वादि॥ जय लोक करे निर्भय समस्त। हम नवत सदा तिन जोड़ हस्त ॥९॥ जय ग्रीष्म ऋतु पर्वत मझार। नित करत अतापन योग सार॥ जय तृषा

चातुर रचित शुद्ध नये २। सदशिष्ट लाडू आदि भर बहु पुरटके थारा लए ॥ मन्वादि० ॥५॥ कल धौत दीपक जड़ित नाना भरित गो घृत सार सो। अति ज्वलित जग मग जोति याकी तिमिर नाशन हार सो॥मन्वादि० ॥दीपं॥६॥ दिक चक्र गधित होत जाकर धूप दशअंगी कही॥ सो ल्याय मन बच काय शुद्ध लगाय कर खेऊं सही ॥ मनवादि ॥ धूपं ॥७॥ बर दाख खारक अमित प्यारे मिष्ट २ चुनायके । द्रावड़ी दाड़िम चारु पुंगी थाल भर भर भायके ॥ मन्वादि० फल ॥८॥ जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु बर दीप धूप सुल्यावना। फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित अर्घ कीजे पावना।।मन्वादि०॥ अर्घं॥

[जयमाल] त्रिभंगी छन्द॥ वन्दों ऋषिराजा धर्म जहाजा निज पर काजा करत भलें। करुणाके धारी गगन बिहारी दुख अपहारी भरमदलें॥काटत यम फन्दा भव जनवृन्दा करतअनन्दा चरणनमे। जो पूजै ध्यावें मंगल गावे फेर न आवें भव बन मे ॥ [पद्धड़ीछन्द] जय श्री मन्व मुनिराजा महंत। त्रस थावरको रक्षा करत ॥जय मिथ्या-तम नाशक पतंग। करुणा रस पूरित अंग अंग॥१॥जय श्री स्वर मन्व अकलंक रूप। पद सेव करत नित अमर भूप

परीषह करत जेर। कहुं रंच चलत नही मन सुमेर ॥१०
जय मूल अट्ठाइस गुणन धार।तप उग्र तपत आनन्दकार।
जय वर्षा ऋतुमे वृक्ष तीर। तहां अति शीतल झलत समीर ॥११॥ जय शीतकाल चौपट मझार। के नदी सरोवर तट विचार ॥ जय निवशत ध्यानारूढ होय। रंचक नहीं भटकत रोम कोय ॥१२॥ जय मृतकासन वज्रासनीय। गौ दूहन इत्यादिक गनीय ॥ जय आसन नाना भांति धार। उपसर्ग सहित ममता निवार॥१३॥ जय जपत तिहारो नाम कोय। लख पुत्र पौत्रकुल वृद्धि होय। जय भरे लक्ष अतिशय भंडार। दारिद्र तनो दुख होय छार।।१४।। जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच। अरु ईति भीति सब नसत सांच॥ जय तुम सुमरत सुख लहत लोक। सुर असुर नवत पद देत धोक ॥ १५॥

। घत्ता छन्द ।

ये सातों मुनिराय महा तप लक्ष्मी धारी। परम पूज्य पद धरे सकल जगके हितकारी। जो मन वच तन शुद्ध होय सेवे अरु ध्यावें। सो मन रंग लाल अष्ट ऋद्धिन को पावे ॥

॥ दोहा ॥

नमन करत चरणनि परत, अहो गरीवनिवाज।
पच परा वर्तननि से निरवारो ऋषिराज ॥ इति।

(५) अथ शान्तिपाठ ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथों से पुष्पवृष्टि करते जाना)

दोधकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिर्म्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्च्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम्॥१॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरंप्रणमामि ।२।
दिव्यतरुःसुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।।
आतपवारणचामरयुग्मेयस्य विभाति च मण्डलतेजः ।३।
तं जगदर्च्चितशान्तिजिनेन्द्र शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमांच॥४

वसन्ततिलकावृत्तम् ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैःशक्रादिभिःसुरगणैःस्तुत पादपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थङ्कराः सततशान्तिकराभवन्तु ॥ ५ ॥

उपजातिवृत्तम् ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञःकरोतु शान्तिंभगवान्जिनेन्द्रः६

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारीक्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रंप्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥७ ॥

॥ श्लोक ॥

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥

अथेष्टप्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासोजिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदार्य्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भव भवे यावदेतेऽपवर्गाः ॥१०॥

आर्यावृत्तम्

तव पादौ मम हृदये, ममहृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ११ ॥

प्राकृत आर्य्यावृत्तम्

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।

तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दितु ॥१२॥

दुःक्खक्खओ कम्मखओ समाहि मरणं च वोहिलाहोय
मम होउ जगतबंधव जिणवर तव चरणसरणेण ॥१३॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

अथ विसर्जनं

ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्ज्जन न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तुयथास्थितिम् ।४।

इति नित्यपूजाविधानं समाप्तम् ।

॥ ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥

(६) सहस्त्रनाम

स्तोत्रम् ।



स्वयंभुवेनमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।

स्वात्मनैव तथोद्भूतंवृत्तये चित्तवृत्तये । १ ।
नमस्तेजगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोनमः ।
विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर । २ ।
कामशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानुमःसुरैर्मौलिस्रग्मालाभ्यर्चितक्रमम् । ३ ।
ध्यानदुर्घणनिर्भिन्नः घनघातीमहातरुः ।
अनन्तभवसन्तानजयोप्यासीरनन्तजित् । ४ ।
त्रैलोक्यविजयेनोस दुर्दर्प्यमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजंविजित्यासीज्जन्ममृत्युञ्जयोभवान् ॥ ५ ।
विधूताशेषसंसारो बन्धुर्नोभव्यबान्धवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमीशोसि जन्ममृत्युजरान्तकृत् । ६ ।
त्रिकालविषयाशेष तत्त्वभेदात्त्रिधोच्छिदम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोसि त्वमीशिता । ७ ।
त्वामन्धकान्तकंप्राहुर्मोहान्धसुरमर्द्दनात् ।
अर्द्धन्ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोस्यत ॥ ८ ॥
शिवः शिवपदाध्यासाद्दुरितारिहरोहरः ।
शङ्करःकृतशंलोके संभवस्त्वंभवन्सुखे ॥ ९ ॥
वृषभोसि जगज्ज्येष्ठः गुरुर्गुरुगुणोदयैः ।
नभियो नाभिसंभूतेरिक्ष्वाकुः कुलनन्दनः ॥ १० ॥

त्वमेकः पुरुषस्कन्धस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वंत्रिधाबुधसन्मार्गस्त्रिधास्त्रिज्ञानधारकः ॥ ११ ॥
चतुःशरणमाङ्गल्य मूर्त्तिस्त्वं चतुरः सुधीः ।
पञ्चब्रह्ममयोदेवः पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥ १२ ॥
स्वर्गावतारणे तुभ्यं सद्योजातात्मनेनमः ।
जन्माभिषेकवामायवामदेव नमोस्तुते ॥ १३ ॥
संनिःक्रान्ताय घोराय परं प्रशमसीयुषे ।
केवलज्ञानसंसिद्धविषाणाय नमोस्तुते ॥ १४ ॥
पुरुस्तुत पुरुषस्तुभ्यं विमुक्तपदभागिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भावनानर्घ विभ्रते ॥ १५ ॥
ज्ञानवरणनिर्ह्रास नमस्तेनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्तेविश्वदर्शने ॥ १६ ॥
नमो दर्शनमोहादिक्षायिकामलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागायमहौजसे ॥१७॥
नमस्तेऽनन्तवीर्याय नमोनन्तसुखायते ।
नमस्तेऽनन्तलोकाय लोकालोकावलोकिने ॥ १८ ॥
नमस्तेऽनन्तदानाय नमस्तेऽनन्तलब्धये ।
नमस्तेऽनन्तभोगाय नमोऽनन्ताय भोगिने ॥१९॥
नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।

नमः परमपूताय नमस्ते परमर्षये ॥२०॥
नमः परमविद्याय नमःपरमवच्छिदे।
नमः परमतत्वायनमस्तेपरमात्मने ॥२१॥
नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे।
नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥
परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषेनमः।
नमःपारेतमः प्राप्त धाम्ने ते परमात्मने ॥२३॥
नमः क्षीणकलङ्काय क्षीणबन्धनमोस्तुते।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥२४॥
नमः सुगतये तुभ्यं शोभनागतमीयुषे।
नमस्तेतीन्द्रियज्ञान सुखायानिन्द्रियात्मने ॥२५॥
कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोस्तुते।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधि योगिने ॥ २६ ॥
अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः।
नमः परमयोगीन्द्रवन्दिताङ्घ्रि द्वयायते ॥ २७ ॥
नमः परमविज्ञान नमःपरमसंयम।
नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥२८॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशकस्पृशे।
नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षणे ॥ २९ ॥
संज्ञासंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने।

नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायकदृष्टये ॥ ३० ॥
अनाहरायतृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताशेषदोषाय भवाद्धिपारमीयुषे ॥ ३१ ॥
अजराय नमस्तुभ्यंनमस्तेऽतीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२ ॥
अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावकागुणाः ।
त्वन्नामस्मृतिमात्रेण परमंशंप्रशास्महे ॥ ३३ ॥
प्रसिद्धाष्टसहस्त्रेद्धलक्षणास्त्व गिरांपतिः ।
नाम्नामष्टसहस्त्रेणत्वां स्तुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ ३४ ॥
एवंस्तुत्वा जिनदेवं भक्त्यापरमया सुधीः
पठेदष्टोत्तरं नाम्नांसहस्रं पापशान्तये ॥ ३५ ॥
श्रीमान् स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्र(भु) भःप्रभुर्भोक्ताविश्वभूरपुगर्भवः ॥ ३६ ॥
विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद्विश्वविद्येशोविश्वयोनिरनीश्वरः ॥३७ ॥
विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशोविश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतोविश्वतोमुखः ॥ ३८ ॥
विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृक्विश्वभूतेशोविश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ३९ ॥
जिनोजिष्णुरमेयात्मा विष्णुरीशोजगत्पतिः ।

अनन्तजिदचिंत्यात्माभव्यबंधुरबंधनः ॥ ४० ॥
युगादिपुरुषोब्रह्मापंचब्रह्ममयः शिवः ।
परःपरतरः सूक्ष्मःपरमेष्ठीसनातनः ॥ ४१ ॥
स्वयंज्योतिरजोजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः ।
मोहारिविजयोजेताधर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ४२ ॥
प्रशातारिरनंतात्मायोगीयोगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्वज्ञोब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ४३ ॥
सिद्धो बुद्धःप्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धसिद्धान्तविद्ध्येयःसिद्धसाध्योजगद्धितः ॥ ४४ ॥
सहिष्णुरच्युतोऽनतः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोजर्योभ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ४५ ॥
विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ ४६ ॥
॥ इति श्रीमच्छतं ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षादमीश्वरः ॥ ४७ ॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजाविरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशान्तः पूजार्हः स्नातकोमलः ॥ ४८ ॥
अनंतदीप्तिर्ज्ञानात्मास्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।

भक्तःशक्तोनिराबाधोनिष्कलोभुवनेश्वरः ॥ ४९ ॥
निरंजनोजगज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यःकूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ५० ॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ताधर्मपतिर्धर्मोधर्मात्माधर्मतीर्थकृत ॥ ५१ ॥
वृषध्वजोवृषाधीशोवृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषोवृषपतिर्भर्तावृषभांकोवृषोद्भवः ॥ ५२ ॥
हिरण्यनाभिर्भूतात्माभूतभृद्भूतभावनः ।
प्रभवोविभवोभास्वान्भवोभावोभवांतकः ॥ ५३ ॥
हिरण्यगर्भःश्रीगर्भःप्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथोजगत्प्रभुः ॥ ५४ ॥
सर्वादिः सर्वदृक्सर्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मासर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित॥ ५५ ॥
सुगतिः सुश्रुत.सुश्रुक्सुवाक्सूरिर्वहुश्रुतः ।
विश्रुतोविश्वतः पादोविश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ ५६ ॥
सहस्त्रशीर्षा क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्त्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ५३ ॥

इति दिव्याशतम् ॥ २ ॥

स्थविष्ठः स्थविरोज्येष्ठः प्रष्ठःप्रेष्ठोवरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठोगरिष्ठोबंहिष्ठःश्रेष्ठोनिष्ठोगरिष्ठगीः ॥

विश्वभृद्विश्वसृट्विश्वेट्विश्वभुग्विश्वनायकः ।
विश्वाशीविश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितांतकः ॥५९॥
विभवोविभयोवीरोविशोको विजरोजरन् ।
विरागोविरतोसंगोविविक्तोवीतमत्सरः ॥ ६० ॥
विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।
वियोगोयोगविद्विद्वान्विधातासुविधिः सुधीः ॥६१॥
शांतिभाक्पृथिवीमूर्तिःशांतिभाक्सलिलात्मकः
वायुमूर्तिरसगात्मावन्हिमूर्तिरधर्मधृक् ॥ ६२ ॥
सुयज्वायजमानात्मासुत्वासुत्रामपूजितः ।
ऋत्विक्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगममृतंहविः ॥ ६३ ॥
व्योममूर्तिरमूर्तात्मानिर्लेपोनिर्मलोचलः ।
सोममूर्तिःसुसौम्यात्मासूर्यमूर्तिर्महाप्रभुः ॥ ६४ ॥
मंत्रविन्मंत्रकृन्मंत्रीमंत्रमूर्तिरनंतकः ।
स्वतंत्रस्तंत्रकृत्स्वांतः कृतांतांतः कृतांतकृत् ॥ ६५ ॥
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्योमृत्युंजयोमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥ ६६ ॥
ब्रह्मनिष्ठःपरंब्रह्मब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ ६७ ॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।

प्रशमात्माप्रशांतात्मापुराणपुरुषोत्तमः ॥ ६८ ॥

॥ इतिस्थविष्ठशतं ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोशोक-कःस्त्रष्टापद्मविष्टरः ।
पद्मेशःपद्मसंभूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ ६९ ॥
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्होहृषीकेशोजितजेयःकृतक्रियः ॥ ७० ॥
गणाधिपोगणाज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरोगुणांभोधिर्गुणज्ञोगुणनायकः ॥ ७१ ॥
गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यःपुण्यवाक्पूतोवरेण्यः पुण्यनायकः ॥ ७२ ॥
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामोगुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ७३ ॥
पापापेतोविपापात्माविपाप्मावीतकल्मषः ।
निर्द्वंद्वोनिर्मदः शांतोनिर्मोहोनिरुपद्रवः ॥ ७४ ॥
निर्निमेषोनिराहारोनिःक्रियोनिरुपप्लवः ।
निष्कलंकोनिरस्तैनानिर्धूतागोनिराश्रयः ॥ ७५ ॥
विशालोविपुलज्योतिरतुलोऽचिंत्यवैभवः ।
सुसंवृतःसुगुप्तात्मा सुवृत्सुनयतत्ववित् ॥ ७६ ॥
एकविद्योमहाविद्योमुनिःपरिवृढःपतिः ।
धीशोविद्यानिधि,साक्षीविनेताविहतान्तकः ॥ ७७ ॥

पितापितामहः पातापवित्रः पावनोगतिः ।
त्राताभिषक्वरोवर्योवरदः परमः पुमान् ॥ ७८ ॥
कविः पुराणपुरुषोवर्षीयानृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठा प्रभवोहेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ७९ ॥
॥ इति महाशतं ॥ ४ ॥
श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णोलक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षःपुण्डरीकाक्षः पुष्कलःपुष्करेक्षणः ॥ ८० ॥
सिद्धिदःसिद्धसंकल्पःसिद्धात्मा सिद्धिसाधनः ॥
बुद्धबोध्योमहाबोधिर्वर्धमानोमहर्धिकः ॥ ८१ ।
वेदांगोवेदविद्वेद्योजातरूपोविदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वयंवेद्योविवेदोवदतांवरः ॥ ८२ ॥
अनादिनिधनोव्यक्तोव्यक्तवाक्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ८३
अतीन्द्रोतीन्द्रियोधींद्रोमहेंद्रोतींद्रियार्थदृक् ।
अनिंद्रियोहमिंद्रार्च्योमहेंद्रमहितोमहान् ॥ ८४
उद्भवः कारणकर्तापारगोभवतारकः ।
अगाह्योगहनंगुह्यं परार्ध्यः परमेश्वरः ॥ ८५ ॥
अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिंत्यर्द्धिः समग्रधीः । प्राग्रयः
प्राग्रहरोभ्यग्रयः प्रत्यग्रयोगरयोग्रिमोग्रजः ॥ ८६ ॥
महातपामहातेजामहोदर्कोमहोदयः ।

महायशामहाधामामहासत्वोमहाधृतिः ॥ ८७ ॥
महाधैर्योमहावीर्यो महासपन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महामूतिर्महाद्युतिः ॥ ८८ ॥
महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महोदयः ।
महाप्राज्ञोमहाभागो महानन्दोमहाकविः ॥ ८९ ॥
महामहामहाकीर्त्तिर्महाकातिर्महावपुः ।
महादानोमहाज्ञानोमहायोगोमहागुणः ॥ ९० ॥
महामहपतिःप्राप्त महाकल्याणपंचकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशोमहेश्वरः ॥ ९१ ॥

॥ इति श्रीवृद्धशत ॥ ५ ॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानीमहादमः ।
महाक्षमोमहाशीलो महायज्ञोमहामखः ॥ ९२ ॥
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकातिधरोऽधिपः ।
महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायोमहोदयः ॥ ९३ ॥
महाकारुणिकोमता महामंत्रोमहामतिः ।
महानादोमहाघोषो महेज्योमहसापतिः ॥ ९४ ॥
महाध्वरधरोधुर्यो महौदार्योमहष्टवाक् ।
महात्मातपसाधाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ९५ ॥
महाक्लेशाकुशःशूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ९६ ॥

महाभवाब्धिसन्तारिर्महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरःक्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥ ९७ ॥
महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मामहाव्रतः ।
महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवोमहेशिता ॥ ९८ ॥
सर्वक्लेशापहःसाधुः सर्वदोषहरोहरः ॥
असंख्येयोप्रमेयात्मा शमात्माप्रशमाकरः ॥ ९९ ॥
सर्वयोगीश्वरोचिन्त्यः श्रुतात्माविष्टरश्रवा ।
दांतात्मादमतीर्थेशोयोगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥१००॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिःपरमःपरमोदयः ।
प्रक्षीणबन्धःकामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥ १०१ ॥
प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणप्रणिधिर्दक्षोदक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥ १०२ ॥
आनंदोनंदनोनंदोवंद्योनिंद्योभिनंदनः ।
कामहाकामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥ १०३ ॥

इतिमहामुनिशतं ॥ ६ ॥

असंस्कृतःसुसंस्कारोप्राकृतोवैकृतांतकृत् ।
अंतकृत्कांतगुःकांतश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥ १०४ ॥
अजितोजितकामारिरमितो मितशासनः ।
जितक्रोधोजितामित्रोजितक्लेशोजितांतकः ॥१०५॥

जिनेंद्रः परमानंदोमुनींद्रोदुंदुभिस्वनः ।
महेंद्रवंद्योयोगींद्रोयतींद्रोनाभिनंदनः ॥ १०६ ॥
नाभेयोनाभिजोजातः सुव्रतोमनुरुत्तमः ।
अभेद्योनत्ययोनाश्वानधिकोधिगुरुःसुधीः ॥ १०७ ॥
सुमेधा विक्रमीस्वामीदुराधर्षोनिरुत्सुकः ।
विशिष्टःशिष्टभुक्शिष्टःप्रत्ययःकामनोनघः ॥
क्षेमीक्षेमंकरोक्षय्यः क्षेमधर्मपतिःक्षमी ।
अग्राह्योज्ञाननिग्राह्योध्यानगम्योनिरुत्तरः ॥ १०९ ॥
सुकृतीधातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरस्यश्चतुर्मुखः ॥ ११० ॥
सत्यात्मासत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीःसत्यसंधानःसत्यः सत्यपरायणः ॥ १११ ॥
स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्योगरीयसाम् ॥ ११२ ॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥ ११३ ॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तोगुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षोदमेश्वरः ॥
॥ इति असंस्कृतशतं ॥ ७ ॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषीधिषणोधीमान् शेमुषीशोगिरांपतिः ॥ ११५ ॥
नैकरूपोनयोत्तुंगोनैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञःकृतलक्षणः ॥ ११६ ॥
ज्ञानगर्भोदयागर्भो रत्नगर्भःप्रभास्वरः ।
पद्मगर्भोजगद्गर्भो हेमगर्भःसुदर्शनः ॥ ११७ ॥
लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिनईशिता ।
मनोहरोमनोज्ञागाधीरोगम्भीरशासनः ॥ ११८ ॥
धर्मयूपोदयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधोदेवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ११९ ॥
अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोमोघशासनः ।
सुरूपःसुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥ १२० ॥
सुस्थितः स्वास्थ्यभाक् स्वस्थोनीरजस्कोनिरुद्धवः ।
अलेपोनिष्कलङ्कात्मा वीतरागोगतस्पृहः ॥ १२१ ॥
वश्येन्द्रियोविमुक्तात्मा निःसपत्नोजितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोनन्तधामर्षिर्मंगलमलहाऽनघः ॥ १२२ ॥
अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तोमूर्तिमानेकोनेकोनानैकतत्त्वदृक् ॥ १२३ ॥
अध्यात्मगम्योगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।

सर्वत्रगःसदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥
शंकरःशंभवोदान्तोदमीक्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥ १२५ ॥
त्रिजगद्वल्लभोभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रि स्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥
॥ इति बृहच्छतं ॥ ८ ॥
त्रिकालदर्शीलोकेशो लोकधाताद्दृढ़व्रतः ।
सर्वलोकातिगःपूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १२७ ॥
पुराणपुरुषःपूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
आदिदेवःपुराणाद्यपुरुदेवोधिदेवता ॥ १२८ ॥
युगमुख्योयुगज्येष्ठोयुगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णःकल्याणकल्यः कल्याणलक्षणः ॥
कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्माविकल्मषः ।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नःकलाधरः ॥ १३० ॥
देवदेवोजगन्नाथोजगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषीलोकज्ञः सर्वगोजगदग्रजः ॥ १३१ ॥
चराचरगुरुर्गोप्योगूढात्मागूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्माज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥१३२॥
आदित्यवर्णोभर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णोरुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ १३३ ॥

तपनीयनिभस्तुंगोबालार्काभोनलप्रभः ।
संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ १३४ ॥
निष्टप्तकनकच्छायःकनत्कांचनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुंभनिभप्रभः ॥ १३५ ॥
द्युम्नभाजातरूपाभोदीप्तजांबूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तोहाटकद्युतिः ॥ १३६ ॥
शिष्टेष्टपुष्टिदःपुष्टः स्पष्टस्पष्टाक्षरक्षमः ।
शत्रुघ्नोप्रतिघोमोघः प्रशास्ताशासितास्वभूः ।।
शांतिनिष्ठोमुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शांतिदः शांतिकृच्छांतिः कांतिमान्कामितप्रदः ॥
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थितः स्थावरः स्थाणुःप्रथीयान्प्रथितःपृथुः ॥

॥ इति त्रिकालशतं ॥ ९ ॥

दिग्वासावातरसनोनिर्ग्रंथेशोदिगम्बरः ।
निष्किंचनोनिराशंसोज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १४० ॥
तेजोराशिरनंतौजः ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्त्तिस्तमोपहः ॥ १४१ ॥
जगच्चूडामणिर्दीप्तःशंवान् विघ्नविनायकः ।
कलघ्निःकर्मशत्रुघ्नोलोकालोकप्रकाशकः ॥ १४२ ॥

अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रमामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥ १४३ ॥
मुमुक्षुर्बंधमोक्षज्ञोजिताक्षोजितमन्मथः ।
प्रशांतरसशैलूषोभव्यपेटकनायकः ॥ १४४ ॥
मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नोमूलकारणः ।
आप्तोवागीश्वरःश्रेयान्श्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ।
प्रवक्तावचसामीशोमारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतोहतदुर्नयः ॥ १४६ ॥
श्रीशःश्रीश्रितपादाब्जोवीतभीरभयंकरः ।
उत्सन्नदोषोनिर्विघ्नोनिश्चलोलोकवत्सलः ॥
लोकोत्तरोलोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥ १४८ ॥
प्रज्ञापारमितःप्राज्ञोयतिर्नियमितेंद्रियः ।
भदंतोभद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षोवरप्रदः ॥ १४९ ॥
समुन्मूलितकर्मारिःकर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यःकर्मठःप्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥ १५० ॥
अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १५१ ॥
समंतभद्रःशांतारिर्धर्माचार्योदयानिधिः ।

सूक्ष्मदर्शीजितानंगः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥ १५२ ॥

॥ इति दिग्वासः शतं ॥

शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।

धर्मपालोजगत्पालोधर्मसाम्राज्यनायकः ॥ १५३ ॥

॥ इति शुभंय्वष्टकम् ॥ १० ॥

धाम्नांपतेतवामूनिनामान्यागमकोविदैः ।

समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान् पूतस्मृतिर्भवेत् ॥

गोचरोपिगिरानासांत्वमवाग्गोचरोमतः ।

स्तोतातथाप्यसंदिग्धंत्वत्तोभीष्टफलंलभेत् ॥ १५५ ॥

त्वमतोसिजगद्बन्धुस्त्वमतोसिजगद्भिषक् ।

त्वमतोसिजगद्धातात्वंमतोसिजगद्धितः ॥ १५६ ॥

त्वमेकंजगतांज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।

त्वंत्रिरूपैकमुक्त्यं गं स्वोत्थानंतचतुष्टयः । १५७ ।

त्वं पञ्चब्रह्मतत्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः

षड्भेदभावतत्वज्ञस्त्वंसप्तनयसंग्रहः १५८

दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्व नवकेवललब्धिकः

दशावतारनिर्धार्यो मापाहिपरमेश्वर १५९

युष्मन्नामावलीदृब्धाविलसत्स्तोत्रमालया

भवन्तंवरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाणनः १६०

इदस्तोत्रमनुस्मृत्यपूतोभवतिभाक्तिकः ।
यः सपाठं पठत्येनं सस्यात्कल्याणभाजनम् ॥ १६१ ॥
ततःसदेदंपुण्यार्थी पुमान्पठतु पुण्यधीः ।
पौरुहूतीश्रियप्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥ १६२ ॥
स्तुत्वेतिमघवादेव चराचरजगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥ १६३ ॥
भगवन् भव्यशस्याना पापावग्रहशोषणाम् ।
धर्मामृतप्रसेकः स्यास्त्वमेव शरण प्रभो ॥ १६४ ॥
भव्यसार्थाधिपः प्रोद्यद्दयाध्वजविराजितः ।
धर्मचक्रमिदं वज्रं त्व जयोद्योगसाधनः ॥ १६५ ॥
निर्धूय मोहवृत्तान्त मुक्तिमार्गोपरोधनी ।
तवोपदिष्टसन्मार्गकालोऽय समुपस्थितः ॥ १६६ ॥
इति प्रबुद्धतत्वस्य स्वयमर्तुर्जिगीषतः ।
पुनरुक्ततरा वाचा प्रादुरासीच्च तत्कृता ॥ १६७ ॥
कृतानि जिनसेनेन जिननामानि सार्थकम् ।
अष्टोत्तरसहस्राणि सर्वाभीष्टकराणि च १६८
त्व देवत्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानंतरं ।
प्रोत्थानंतचतुष्टयंजिनमिनंभव्याब्जनं नामिना ॥
मानस्तंभविलोकनानतजगन्मान्य त्रिलोकीपतिं ।

प्रासाचिंत्यबहिर्विभूतिनतघंभक्त्याप्रवंदामहे ॥

इति श्रीजिनसेनाचार्यविरचितं जिनाष्टोत्तर सहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

॥श्रीजिनाय नमः॥

॥पण्डित हेमराज जीकृत ॥

(७) भाषा भक्तामरस्तोत्र ॥

॥ दोहा ॥

आदिपुरुषआदीशजिन, आदिसुविधिकरतार ।
धरमधुरंधरपरमगुरु, नमोंआदिअवतार ॥ १ ॥

चौपाई [१५] मात्रा

सुरतन मुकट रतन छवि करै । अंतर पाप तिमिरसब हरै । जिनपद वंदो मन वचकाय । भवजलपतत उधर नसहाय ॥ १ ॥ श्रुतिपारकइन्द्रादिक देव। जाकी थुति कीनीं करसेव ॥ शब्द मनोहर अरथ विशाल । तिसप्रभु को बरनो गुनमाल ॥ २ ॥ विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन। होय निलज थुति मन साकीन। जलप्रतिबिंबबुद्ध को गहै। शशिमंडल बालक ही चहै ॥ ३ ॥ गुनसमुद्र तुम गुन अविकार। कहत न सुरगुर पावैं पार ॥ प्रलय प-

वन वद्धत जलजंतु । जलधि तिरै को भुज बलवंतु ॥ ४ ॥ सो मैं शक्तिहीन थुति करूं । भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं ॥ ज्यों मृग निजसुतपालन हेत । मृगपति सन्मुख जायअचेत ॥ ५ ॥ मैं शठ सुधी हंसन कोधाम । मुझ तवभक्ति वुलावै राम ॥ ज्यों पिक अंवकली परभाव मधुऋतु मधुर करैआराव ॥ ६ ॥ तुम जस जंपत जिन छिनमाहिं । जनमजनम के पाप नशाहि ॥ ज्यों रवि लगै फटै तत्काल । अलिवन नील निशातमजाल ॥ ७ ॥ तुम प्रभावतैं करहु विचार । होसी ।यह थुति जनमन हार ॥ ज्यों जल कमलपत्रपै परै । मुक्ताफलकोदुत वि- स्तरै ॥ ८ ॥ तुमगुन महिमा हतदुखदोष । सो तोदूर रहो सुखपोष । पापविनाशक है तुम नाम । कमल विकाशी ज्यों रविधाम ॥ ९ ॥ नहीं अचंभ जो होंहि तुरंत । तुम से तुम गुन वरनत संत ॥ जो अधीनको आप समान । करै न सो निंदित धनवान ॥ १० ॥ इकटक जन तुमकोअविलोय । और विषैं रति करै न सोय ॥ कोकरखीर जलधिजलपान । छारनीरपीवै मतिमान ॥ ११ ॥ प्रभु तुमवीतराग गुन लीन । जिन परमानु देह तुमकी

प्रासाचिंत्यवहिर्विभूतिनतयंभक्त्यामवंदामहे ॥

इति श्रीजिनसैनाचार्यविरचितं जिनाष्टोत्तर सहस्त्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

॥श्रीजिनाय नमः॥

॥पण्डित हेमराज जीकृत ॥

(७) भाषा भक्तामरस्तोत्र ॥

॥दोहा॥

आदिपुरुषआदीशजिन, आदिसुविधिकरतार।
धरमधुरंधरपरमगुरु, नमोंआदिअवतार ॥ १ ॥

चौपाई [१५] मात्रा

सुरनत मुकट रतन छवि करै। अंतर पाप तिमिरसब हरै। जिनपद वंदो मन वचकाय। भवजलपतत उधर नसहाय ॥ १ ॥ श्रुतिपारकइन्द्रादिक देव। जाकी थुति कीनीं कारसेव ॥ शब्द मनोहर अरथ विशाल। तिसप्रभु को बरनों गुनमाल ॥ २ ॥ विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन। होय निलज थुति मन साकीन। जलप्रतिबिंबबुद्ध को गहै। शशिमंडल बालक ही चहै ॥ ३ ॥ गुनसमुद्र तुम गुन अविकार। कहत न सुरगुर पावैं पार ॥ प्रलय प-

न ॥ हैं तितने ही ते परमान । यातैं तुम सम रूप न आन ॥ १२ ॥ कहंतुममुख अनुपम अविकार । सुरनर नागनयनमनहार ॥ कहाँ चन्द्रमंडल सकलंक । दिनमैं ढांकपत्र समरंक ॥ १३ ॥ पूरनचन्द्र जोति छविवंत । तुम गुनतीन जगत लाघंत। एक नाथ त्रिभुवन आधार । तिन विचरत को करै निवार १४। जो सुरतियविभ्रम आरंभ । मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ ॥ अचलचलावै प्रलयसमीर । मेरुशिखर डगमगै न धीर ॥ १५ ॥ धूमरहित वाती गतनेह । परकाशक त्रिभुवन घरयेह ॥ वातगम्य नाहीं परचंड । अपर दीपतुम वलौ अखंड ॥१६ ॥ छिपहु न लुपहु न राहुकी छांहिं। जग परकाशक हो छिन मांहि॥ घन अनवर्त्त दाहविनिवार । रवितैं अधिक धरो गुणसार ॥१७॥ सदा उदित विदलिततममोह। विघटितमेघ राहुअविरोह॥ तुम मुखकमल अपूरवचन्द । जगतविकाशी जोति अमंद ॥१८॥ निशदिन शशिरविको नहिं काम। तुममुखचन्द हरैतमधाम॥ जो स्वभावतैं उपजै नाज । सजल मेघतैं कौनहु काज॥१९। जो सुबोध सो है तुममांहिं । हरिहर आ-

दिकमें सो नाहिं। जो दुति मणिहारन में होय। काचखंड पावैं नाहि सोय ॥ २० ॥

नाराच।

सरागदेव देख मैं भला विशेष मानिया। स्वरूपजाहि देख बीतराग तू पिछानिया। कछू न तोह देख कैं जहां तुही विशेषिया। मनोग चित्तचोर और भूलहूं न देखिया ॥२१॥ अनेक पुत्रवंतनी नितबनी सपूत हैं। न तो समान पुत्रऔर माततैं प्रसूत हैं॥ दिशा धरंत तारका अनेक कोटको गिनै। दिनेश तेजवंत एक पूर्वही दिशा जनै ॥२२॥ पुरान हो पुमान हो पुनीत पुन्नवान हो। कहैं मुनीश अंधकार नाशको सुभान हो॥ महंत तोहि जानके न होय वश्य कालकैं। न और मोखमोखपंथ देवतोहिटालके ॥२३॥ अनंत नित्य चित्तको अगम्यरम्य आदि हो। असंख सर्वव्यापि विष्णुब्रह्महोअनादिहो। महेश काम केतु जोग ईश जोग ज्ञान हो। अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ॥२४॥ तुही जिनेश बुद्ध हो सुबुद्धि के प्रमानतैं। तुही जिनेश शंकरो जगत्रय विधानतैं॥ तुही विधात है सही सुमोखपथ धा-

रतैं। नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं ॥२५॥ नमो करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो। नमो करूं सुभूरि भूमिलोकके सिंगार हो। नमो धरूं भवाब्धिनीर-रास शोख हेतु हो। नमो करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो ॥२६॥ चौपाई। तुम जिन पूरन गुनगनभरे। दोष गरभ करतुम परहरे। और देवगन आश्रय पाय। सुपन न देखे तुम फिर आय ॥ २७ ॥ तरु अशोक तस किरण उदार। तुम तन शोभित है अविकार। मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त। दिन कर दिपै तिमिरनिहनन्त। २८, सिंहासन मणि किरन विचित्र। तापर कंचनवरन पवित्र। तुमलन शोभित किरन विथार। ज्यों उदयाचल रवितमहार ॥२९॥ कुंदपहुप शितचमर ढरंत। कनकबरन तुम तन शोभंत। ज्यों सुमेरुतट निर्मलकांति। झरना झरैं नीर उमगांति ॥३०॥ ऊंचे रहैं सूरि दुति लोप। तीन छत्र तुम दिपैं अगोप। तीन लोककी प्रभुता कहै। मोती झालरसों छवि लहै ॥३१॥ दुंदभि शब्द गहरगंभीर। चहुंदिश होय तुम्हारे धीर। त्रिभुवनजन शिव-संगम करे। मानों जय जय रव उच्चरैं ॥३२॥ मंद पवन

गंधोदक वृष्ट। विविध कल्पतरु पहुपसुवृष्ट। देव करैं विकसित दल सार। मानो द्विजपंकति अवतार ॥३३॥ तुम तन भामंडल जिन चंद। सब दुतिवंत करत है मन्द। कोटि शंख रवितेज छिपाय। शशिनिर्मल निशि करत अछाय ॥३४॥ स्वर्ग मोक्ष मारग संकेत। परम धर्म उपदेश न हेत। दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध। सबभाषा गर्भित हितसाध ॥३५॥

दोहा—विकसित सुवरन कमल दुति, नख दुति मिल चमकाहि। तुम पदपदवी जहं धरैं, तहं सुर कमल रचाहिं ॥३६॥ ऐसी महिमा तुमविषैं, और धरैं नहिं कोय। सूरज में जो जोत है, नहिं तारागन होय ॥३७॥

॥ षट्पद ॥

मदअवलिप्त कपोल, मूल अलिकुल झंकारैं। तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोधउद्धृत अति धारैं। कालवरन विकराल, कालवत सनमुख आवै। ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै। देख गयंद न भय करै, तुम पद महिमा लीन। विपतिरहितसम्पतिसहित. वरतै भक्त अदीन ३८ अतिमदमत्तगयंद, कुम्भथल नखन विदारै। मोती रक्त

रतैं। नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं ॥२५॥ नमो करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो। नमो करूं सुभूरि भूमिलोकके सिंगार हो। नमो धरूं भवाब्धिनीर-रास शोख हेतु हो। नमो करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो ॥२६॥ चौपाई। तुम जिन पूरन गुनगनभरे। दोष गरभ करतुम परहरे। और देवगन आश्रय पाय। सुपन न देखे तुम फिर आय ॥ २७ ॥ तरु अशोक तस किरण उदार। तुम तन शोभित है अविकार। मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त। दिन कर दिपे तिमिरनिहनन्त। २८, सिंहासन मणि किरन विचित्र। तापर कंचनवरन पवित्र। तुमतन शोभित किरन विथार। ज्यों उदयाचल रवितमहार ॥२९॥ कुंदपहुप शितचमर ढरंत। कनकवरन तुम तन शोभंत। ज्यों सुमेरुतट निर्मलकांति। झरना झरैं नीर उमगांति ॥३०॥ ऊंचे रहैं सूरि दुति लोप। तीन छत्र तुम दिपें अगोप। तीन लोककी प्रभुता कहै। मोती झालरसों छवि लहै ॥३१॥ दुंदभि शब्द गहरगंभीर। चहुंदिश होय तुम्हारे धीर। त्रिभुवनजन शिवसंगम करे। मानों जय जय रव उच्चरैं ॥३२॥ मंद पवन

गंधोदक इष्ट। विविध कल्पतरु पहुपसुवृष्ट। देव करैं विकसित दल सार। मानो द्विजपंकति अवतार ॥३३॥ तुम तन भामण्डल जिन चंद। सब दुतिवंत करत है मन्द। कोटि शंख रवितेज छिपाय। शशिनिर्मल निशि करत अछाय ॥३४॥ स्वर्ग मोक्ष मारग सकेत। परम धर्म उपदेश न हेत। दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध। सबभाषा गर्भित हितसाध ॥३५॥

दोहा–विकसित सुवरन कमल दुति, नख दुतिमिल चमकाहि। तुम पदपदवी जहं धरैं, तहं सुर कमल रचाहिं ॥३६॥ ऐसी महिमा तुमविषैं, और धरैं नहिं कोय। सूरज में जो जोत है, नहिं तारागन होय ॥३७॥

॥ षट्पद ॥

मदअवलिप्त कपोल, मूल अलिकुल झंकारैं। तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोधउद्धृत अति धारैं। कालवरन विकराल, कालवत सनमुख आवै। ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै। देख गयंद न भय करै, तुम पद महिमा लीन। विपतिरहितसम्पतिसहित. वरतै भक्त अदीन ३८ अतिमदमत्तगयंद, कुम्भथल नखन विदारै। मोती रक्त

समेत, डार भूतल सिंगारै। बांकी दाढ़ विशाल, वदन में रसना रोलै। भीम भयानक रूप देख, जन थरहर होलै। ऐसे मृगपति पग तलें, जो नर आयो होय। सरन गये तुम चरन की, बाधा करै न सोय ॥३९॥ प्रलय पवन कर उठी, आग जो तास पटंतर। बमैं फुलिंग शिखा, उतंग परजलै निरंतर। जगत समस्त निगल्ल, भस्म करहैंगी मानों। तड़तड़ाट दव अनल, जोर चहुंदिशा उठानो। सो इक छिन में उपशमें, नाम नीर तुम लेत। होय सरोवर परिणमें, बिकसितकमलसमेत ॥४०॥ कोकिलकंठ समान, श्यामतन क्रोध जलंता। रक्तनयन फुंकार, मारविषकन उगलंता। फनको ऊंचा करै, वेगही सनमुख धाया। तब मन होय निशंक, देख फनपति को आया। जो चापै निज पांव से, व्यापे विष न लगार। नागदमनि तुम नाम की, है जिनके आधार ॥४१॥ जिस रनमांहि भयान, शब्द कर रहे तुरंगम। घन से गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम। अति कोलाहल मांहिं, बात जहं नाहि सुनीजै। राजनको परचंड, देख बल धीरज छीजै। नाथ तिहारे नाम तें, सो छिन मांहि प-

लाइ। ज्यो दिन कर परकाशतैं, अंधकार बिनशाइ ॥४२॥ मारे जहा गयंद, कुम्भ हथियार बिदारे। उमगे रुधिर प्रवाह, वेग जल से बिस्तारे। होय सिरन असमर्थ, महा जोधा बल पूरे। तिस रन में जिन तोय, भक्त जे हैं नर सूरे। दुर्जय अरिकुल जीति, के जयपावें निकलंक। तुम पदपकज मन बसैं, तेनर सदा निशंक ॥४३॥ नक्र चक्र मगरादि, मच्छकर भय उपजावे। जामें बड़वा अग्नि, दाहतैं नीर जलावे। पार न पावे जास, थाह नहिं लहिये जाकी। गरजे अतिगंभीर, लहर की गिननि न ताकी। सुखसो तिरैं समुद्र को जे तुम गुन सुमराहिं। लोल कलोलनके शिखर, पारयान ल जाहिं ॥४४॥ महा जलोदर रोगभार पीड़ित नर जे है। वात पित्त कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहे है। सोवत रहैं उदास, नाहि जीवनकी आशा। अती घिनावनि देह, धरैं दुर्गंधनिवासा। तुम पद पंकज धूल को, जो लावैं निज अंग। ते नीरोग शरीर लहि, छिन मे होय अनंग ॥ ४५ ॥ पांव कंठतें जकर, वाध सांकल अति भारी। गाढ़ी वेड़ी पैर माहि, जिन जाय विदारी। भूख प्यास चिंता शरीर, दुख जे विललाने। सरन नाहिं जिन कोय, भूपके

बंदीखाने ॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही, बंधन सब खुल जाहिं। छिनमें ते सम्पति लहैं चिंताभय विनशाहिं ॥४६॥ महामत्त गजराज, और मृगराज दवानल। फल पतिरन परचंड, नीरनिधिरोम महावल ॥ वन्धन ये भय आठ, डरप कर मानों नाशै। तुम सुमरत छिन माहिं, अभय थानक परकाशै ॥ इस अपार संसारमें, शरन माहिं प्रभु कोय। यातें तुम पद भक्त को, भक्ति सहाई होय ॥४७॥ यह गुन माल विशाल, नाथ तुम गुनन सम्हारी। विविध वर्णमय पहुप, गूंथ मैं भक्ति विथारी। जे नर पहरैं कंठ, भावना मन में भावैं। मानतुंग ते निजाधीन, शिवलक्ष्मी पावैं। भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हितहेत। जे नर पढ़ सुभावसों, ते पावैं शिवखेत ॥ ४८ ॥

॥ इति समाप्तम् ॥

(नं० ८) कल्याणमन्दिर ॥

॥ दोहा ॥

परमज्योतिः परमात्मा, परमज्ञान परवीन।
वन्दूं परमानन्दमय, घट घट अन्तरलीन ॥

॥ चौपाई ॥

निर्भय करण परम परधान । भवसमुद्र जल तारण यान शिवमन्दिर अघहरण अनिन्द । वंदूं पार्श्व चरण अरबिन्द ॥ १ ॥ कमठ मान भंजन वरवीर । गरिमा सागर गुण गम्भीर । सुरगुरु पार लहैं नहि जास । मैं अज्ञान गुण जम्पूं तास ॥२॥ प्रभुस्वरूप अतिअगम अथाह । क्यों हम से यह होय निवाह । ज्यो दिनअंध उलूको पोत । कह न सके रवि किरण उद्योत ॥ ३ ॥ मोहहीन जाने मनमाहिं । तोहि न तुम गुण वरणे जाहिं ॥ प्रलयपयोधि करै जलवौन । प्रगटहि रत्न गिने तिहं कौन ॥ ४ ॥ तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मतिहीन कहूं निजवान ॥ ज्यों वालक निज वाहिं पसार । सागर परिमित कहे विचार ॥ ५ ॥ जो योगीन्द्र करहि तप खेद । तेउ न जानहिं तुम गुण भेद । भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्योपछी वोलैं निज भाष ॥६॥ तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार ॥ आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपत निवारे सोय ॥७॥ तुम आवत भविजन मनमाहिं । कर्म निवन्ध शिथिल हो काहिं ।

ज्यों चन्दनतरु बोलें मोर। डरहिं भुजंग चलैं चहुंओर॥८॥
तुम निरखत जन दीनदयाल। संकट तैं छूटें तत्काल॥
ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर। ते तज भागहि देखत
भोर॥९॥ तुम भविजन तारक किम होय। ते चितधार
तिरहि लै तोय॥ यह ऐसे करु जान स्वभाव। तरहिं
मशक ज्यों गर्भित बाव॥१०॥ जिन सब देव किये वश
वाम। ते छिन में जीतो सो काम॥ ज्यों जल करे अग्नि
कुल हान। बड़वानल पीवै सो पान॥ ११॥ तुम अन-
न्त गुरुवा गुण लिये। क्योंकर भक्त धरैं निज हिये॥ ह्वै
लघु रूप तरहिं संसार। यह प्रभुमहिमा अगमअपार॥१२॥
क्रोध निवार कियो मनशान्त। कर्मसुभट जीते किहभान्त॥
यह पटुतरदेखहुसंसार। नील वृक्ष ज्यों दहै तुपार॥१३॥
मुनिजन हिये कमल निजटोहि। सिद्धस्वरूप सम ध्यावैं
तोहि। कमल कर्णिका बिन नहिं और। कमल बीज
उपजन को ठौर॥१४। जब तुम ध्यान धरे मुनि कोय।
तब विदेह परमातम होय॥ जैसे धातुशिला तन त्याग।
कनक स्वरूप धवै जब आग॥ १५॥ जाके मन तुम क-
रहु निवास। विनश जाय सब विग्रह तास॥ ज्यों महत

विच आवै कोय। विग्रहमूल निवारे सोय॥ १६ ॥ करहिं विविध जो आतम ध्यान। तुम प्रभाव तें होय निदान॥ जैसे नीर सुधा अनुमान। पीवत विष विकार की हान ॥१७॥ तुम भगवन्त विमल गुणलीन। समल रूप मानहिं मतिहीन॥ ज्यों नलिया रोग दृग् गहै। वर्ण विवर्ण शंख सो कहै ॥१८॥

॥ दोहा ॥

निकट रहित उपदेश सुन, तरुवर भयो अशोक। ज्योंरवि उगते जीव सब, प्रगट होत भुविलोक॥१९॥सुमनवृष्टि ज्यो सुर करहिं, हेठबीठ सुख सोय। त्यों तुम सेवत सुमन जन बध अधोमुख होय ॥२०॥ उपजी तुम हिय उदधितें, वाणी सुधा समान। जिहि पीवत भविजनलहैं, अजर अमर पदथान २१ करहि सार तिहूंलोक को, यह सुर चामरदोय। भाव सहित जो जिन नमै, तिसगति ऊरध होय ॥२२॥सिंहासन गिरि मेरुसम प्रभुधन सुरजत घोर। श्याम सुतन घनरूपलख, नाचतभविजनमोर॥२३॥छविहतहोय अशोक दल, तुम भामंडल देख। वीतराग के निकट रह, रहै न राग विशेष ॥२४॥ सीख कहै तिहूं लोकको, यहसर

दुंदुभिनाद। शिव पथ सारथ बाह जिन, भजोतजोपरमाद ॥२५॥ तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छवि देत। त्रिविध रूपधर मनहु शशि, सेवतनखत समेत ॥२६॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

प्रभु तुम शरीर दुतिरत्न जेम, परताप पुंज जिमि शुद्ध हेम। अति धवल सुयश रूपा समान, तिनके गुण तीन बिराजमान ॥२७॥ सेवहि सुरेन्द्र कर नमत भाल, तिन सीस मुकट तज देय माल। तुम चरण लगत लहलहै प्रीत, नहिं रमहिं और जन सुमन रीत ।२८। प्रभु भोग विमुख तन कर्म दाह, जन पार करत भवजल निवाह। ज्योंमाटी कलश सुपक्व होय, लेभार अधोमुख तिरै सोय ॥२९॥ तुम महाराज निर्धन निरास, तुम तज विभव सब जग प्रकाश। अक्षर स्वभाव सेहि लिखेन कोय। महिमा अनंत भगवंत होय ॥३०॥ कोपियो कमठ निज बैर देख। तिन करी धूलि वरषा विशेष॥ प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन सो भयो पापि लंपट मलीन॥३१॥ गरजत घोर घन अन्धकार। चमकत विद्यु जल मुसलधार ॥ वरषंत कमठ धर ध्यान रुद्र। दुस्तरकरंतनिज भव समुद्र ॥ ३२ ॥

॥ वस्तु छन्द ॥

भेजे तुरत पिशाच गण। नाश पास उपसर्ग कारण ॥ अग्नि जाल मूकंत मुख। धुनि करंत जिमि मत्तवारण॥ काल रूप विकराल तन रुण्डमाल निज कंठ ॥ तुम निशंक यह रक निज करै कर्म दिढ़ गंठ ॥३३॥

॥ चौपाई ॥

जे तुम चरण कमल तिहुंकाल। सेवहिं तज माया जंजाल ॥ भाव भक्ति मन हर्ष अपार। धन धन जगमें तिन अवतार ॥३४॥ भव सागर महि फिरत अजान। मैं तुम सुयश सुनो नहि कान ॥ जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै। तासों विपति भुजंगनि डरै ॥ ३५ ॥ मन वाञ्छित फल जिन पद माहिं। मैं पूरब भव पूजे नाहि ॥ माया मगन मैं फिरो अज्ञान। करहिं रंकजन मुझ अपमान॥३६॥ मोह तिमिर छाये दृग् मोहि। जन्मान्तर देखो नहिं तोहि तो दुर्जन सगति मुझ गहै। मरम छेद के कुवचन कहै३७ सुनो कान यश पूजे पाय। नैन न देखो रूप अघाय ॥ भक्ति हेतु न भयो चितचाव। दुःख दायक क्रिया विन भाव ॥३८॥ महाराज शरणागत पाल। पतित उधारण

दीनदयाल। सुमरण करू नाय निज सीस। मुझ दुःख दूर करो जगदीश ॥३९॥ कर्म निकंदन महिमासार। अशरण शरण सुयश विस्तार। नहिं सेवूं तुमरे प्रभु पाय। तो मुझ जन्म अकारथ जाय ॥४०॥ सुर पति वन्दित दया निधान। जगतारण जग पति जगयान ॥ दुःख सागर ते मोह निकास। निर्भयथान देहु सुखरास ॥४१॥ मैं तुम चरण कमल गुणगाय। बहु विधि भक्ति करी मन लाय ॥ जन्म जन्म प्रभु पाऊं तोह। यह सेवा फलदीजे मोह ॥४२॥

॥ रोडक छन्द ॥

इहि विधि श्री भगवत सुयश जे भवि जन भाषहिं। ते निज पुण्य भंडार संच चिर पाप प्रणाशहिं॥ रोम रोम हुलसन्त अत प्रभु गुण मनध्यावैं। स्वर्ग सम्पदा भुंजवेग पञ्चम गतिपावैं ॥ ४३ ॥

॥ दोहा ॥

यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्ध

भाषा कहत बनारसी, कारण समकित शुद्ध ॥४४॥

इति सम्पूर्णम् ॥

९ विषापहार स्तोत्र भाषा।

॥ दोहा ॥

आतम लीन अनन्त गुण, स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र। नित्यप्रति बन्दित चरण युग, सुर नागेन्द्र नरेन्द्र ॥१॥

॥ चौपाई ॥

विश्व सुनाथ विमल गुण ईश। विहर मान बन्दोंजिन बीस॥ गणधर गौतम शारदमाय। वर दीजै मोहि बुद्धि सहाय ॥ २ ॥ सिद्ध साधु सत गुरु आधार। करूं कवित्त आत्म उपकार ॥ विषापहार स्तवन उद्धार। सुक्ख औषधी अमृतसार ॥ ३ ॥ मेरा मन्त्र तुम्हारा नाम। तुम हो गारुड़ गरुड़ समान ॥ तुमसम वैद्य नहीं संसार। तुम स्याने तिहुं लोक मझार ॥ ४ ॥ तुम विष हरण करन जग सन्त। नमो नमो तुम देव अनन्त॥ तुम गुण महिमा अगम अपार। सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार ॥५॥ तुम परमातम परमानन्द। कल्पवृक्ष मह सुखके कन्द ॥ मुदित मेरु नय मण्डित धीर। विद्यासागर गुण गम्भीर ॥६॥

तुम दधि मथन महावरबीर । संकट विकट भय भंजन भीर ॥ तुम जग तारण तुम जगदीश । पतित उधारण विश्वे बीश ॥७॥ तुम गुण मणि चिन्तामणि राशि । चित्रवेलि चितहरण चितास ॥ बिघ्न हरण तुम नाम अनूप मन्त्र यन्त्र तुम ही मणिरूप ॥ ८॥ जैसे बज्र पर्वत परिहार । त्यों तुम नाम जु विषापहार ॥ नाग दमन तुम नाम सहाय । विषहर विष नाशक क्षणमाय ॥ ९ ॥ तुम सुमरण चिन्ते मनमाहि । विषपीवे अमृत होजाहि ॥ नाम सुधारस वर्षे जहां । पाप पङ्क मल रहै न तहां ॥१०॥ ज्यों पारसके परसे लोह । निज गुण तज कंचन समहोहि ॥ त्यों तुम सुमरण साधे सूच । नीच जो पावे पदवी ऊंच ॥११॥ तुमहि नाम औषधि अनुकूल । महा मन्त्र सर जीवन मूल ॥ मूरख भर्म न जाने भेद । कर्म कलंक दहन तुम देव ॥ १२ ॥ तुम्ही नाम गारुड़ गहगहे । काल भुजंगम कैसे रहै ॥ तुम्ही धनन्तर हो जिनराय । मरणान पाव को तुम ठाय ॥ १३ ॥ तुम सूरज उदया घटजास । संशय शीत न व्यापे तास ॥ जीवे दादुर वर्षं तोय । सुनवाणी सरजीवन होय ॥१४॥ तुमविन कौन करे सुभ

सार। तुम कर्त्ता हर्त्ता किरपाल ॥ १५ ॥ शरण आयो तुम्हरी जिन राज। अब मो काज सुधारो आज ॥ मेरे यह धन पूंजी पूत। साह कहै घर राखो सूत ॥१६॥ करों वीनती बारंबार। तुम बिन कौन उतारे पार ॥ तुमबिन जिनवर साहस जगधीर। तुम बिन को मेटै मम पीर॥१७॥ विग्रह ग्रह दुःख विपति वियोग। और जु घोर जलंधर रोग॥ चरण कमल रज टुक तन लाय। कुष्ठ व्याधि दीरघ मिट जाय ॥१८॥ मैं अनाथ तुम त्रिभुवन नाथ। मात पिता तुम सज्जन साथ ॥ तुम सा दाता कोई न आन। और कहां जाऊं भगवान॥१९॥ प्रभु जी पतित उधारन आह। बांह गहेकी लाज निवाह ॥ जहां देखों तहां तूही आय। घट घट ज्योति रही ठहराय ॥२०॥ बाट सुघाट विषम भय जहां। तुम बिन कौन सहाई तहां॥ बिकट व्याधि व्यंतर जल दाह। नाम लेत क्षण मांहि विलाह ॥ २१ ॥ आचार्य मान तुंग अवसान। शंकट सुमिरो नाम निधान॥ भक्तामर की भक्ति सहाय। प्रण राखे प्रगटे तिस ठाय॥२२॥ चुगल एक नृप विग्रह ठयो। वादि राज नृप देखन गयो ॥ एकी भाव कियो

निसंदेह । कुष्ट गयो कंचन सम देह ॥२३॥ कल्याण मदिर कुमुद चन्द्र ठयो । राजा बिक्रम विस्मय भयो ॥ सेवक जान तुम करी सहाय । पारस नाथ प्रगटे तिस ठाय ॥२४॥ गई व्याधि विमल मति लही। तहांपुनि सनिधि तुम ही कही ॥ भवसुदत्त श्रीपाल नरेश । सागर जल शंकट सुविशेष ॥२५॥ तहां पुनि तुम ही भये सहाय । श्रानन्द से घर पहुंचे जाय ॥ सभा दुश्शासन पकड़ो चीर । दुपदी प्रण राखो कर धीर ॥२६॥ सीता लक्ष्मण दीनो साज । रावण जीत विभीषण राज ॥ सेठ सुदर्शन साहस दियो । शूली से सिंहासन कियो ॥२७॥ वारिषेन नृप धरियो ध्यान ।ततक्षण उपजो केवल ज्ञान॥ सिंह सर्पादिक जीव अनेक । जिन सुमिरे तिन राखी टेक ॥२८॥ ऐसी कीरति जिन की कहूं । साह कहै शरणागत रहूं ॥ इस अवसर चीवे यह बाल । मुझ सदेह मिटे तत्काल ॥ २९ ॥ बन्दी छोड़ विरद महाराज । अपना विरद निवाहो आज ॥ और आलंब न मेरेनाहिं मैं निश्चय कीनो मन मांहि ॥३०॥ चरण कमल छोड़ों ना सेव । मेरे तो तुम सत गुरु देव॥ तुम ही सूरगातुम

ही चद । मिथ्या मोह निकन्दन कन्द ॥ ३१ ॥ धर्मचक्र तुम धारण धीर । विषहर चक्र बिड़ारन वीर ॥ घोर अग्नि जल भूत पिशाच । जल जंघम अटवी उदवास ॥३२॥ दर दुशमन राजा वश होय । तुम प्रसाद गर्जे नही कोय हय गय युद्ध सबल सामंत । सिंह शार्दूल महा भयवंत ॥ ३३ ॥ दृढ़ बंधन विग्रह विकराल । तुम सुमरत छूटें तत्काल ॥ पांयन पनही नमक न नाज । ताको तुम दाता गजराज ॥३४॥ एक उथाप थप्यो पुन राज । तुम प्रभु बड़े गरीब निवाज ॥ पानीसे पैदा सब करो । भरीडाल पुन रीती भरो ॥३५॥ हर्त्ता कर्त्ता तुम किरपाल । कीड़ी कुंजर करत निहाल ॥ तुम अनंत अल्प मो ज्ञान । कहं लग प्रभु जी करों वखान ॥ ३६ ॥ आगम पथ न सूझे मोहि । तुम्हारे चरण विना किम होहि ॥ भये प्रसन्न तुम साहस कियो । दयावन्त तब, दर्शन दियो ॥ ३७ ॥ साह पुत्र जब चेतन भयो । हंसत हसत वह घर तब गयो ॥ धन्य दर्शन पायो भगवन्त । आज अंग सुख न-यन लसंत ॥ ३८ ॥ प्रभु के चरण कमल मैं नयो । जन्म कृतारथ मेरो भयो ॥ कर युग जोड़ नवाउं शीस । मुझ

अपराध क्षमो जगदीश ॥ ३९ ॥ सत्रह सौ पन्द्रह शुभ थान । नारनौल तिथि चौदस जान ॥ पढ़े सुने तहा परमानन्द । कल्प वृक्ष महासुख कंद ॥ ४० ॥ अष्ट सिद्धि नव निधि सो लहै । अचल कीर्ति आचार्य कहै ॥ यासे पढ़ो सुनो सब कोइ । मन वांछित फल सहजें होइ ॥४१॥

॥ दोहा ॥

भय भंजन रंजन जगत विषापहार अभिराम ।
संशय तज सुमरो सदा श्रीजिनवर को नाम ॥४२॥

इति श्री विषापहार भाषा स्तोत्र सम्पूर्ण ॥



१० एकीभाव स्तोत्र भाषा ॥

॥ दोहा छन्द ॥

वादराज मुनि राज के, चरण कमल चितलाय ।
भाषा एकी भाव की करूं स्वपर सुखदाय ॥

॥ चौबीस मात्रा काव्य छन्द ॥

जो अति एकी भाव भयो मानो अनिवारी । सो मुझ कर्म प्रबंध करत भव २ दुखभारी ॥ ताहि तिहारी भक्ति जगत रवि जो निरवारै । तौ अब और कलेश कौन सो

नाहिं विदारै ॥ १ ॥ तुम जिन जोति स्वरूप दुरित अं धियारि निवारी । सो गणेश गुरु कहैं तत्व विद्याधन धारी ॥ मेरे चित घर माहिं बसौ तेजो मय यावत । पाप तिमिर अवकाश तहां सो क्योंकर पावत ॥ २ ॥ आनद आंसू वदन धोय तुम सों चित साने । गद गद सुरसों सुयश मंत्र पढ़ पूजा ठानै ॥ ताके बहुविधि व्याधव्याल चिरकाल निवासी । भजैं थानक छोड़ देह बंबई के बासी ॥ ३ ॥ दिवतैं आवनहार भये भवि भाग उदय बल । पहले ही सुर आय कनक मय कीय मही-तल ॥ मन गृह ध्यान दुवार आय निवसे जगनामी । जो सुवर्ण तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥ प्रभु सब जग के विना हेतु बंधव उपकारी । निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी ॥ भक्ति रचित ममचित सेज नित बास करोगे । मेरे दुख संताप देख किन धीर धरोगे ॥ ५ ॥ भवभव में चिरकाल भ्रमों कछु कहिय न जाई । तुम थुति कथा पियूष बापिका भाग न पाई शशि तुषार घनसार हार शीतलनहिं जासम । करत न्हौन तामाहि क्यों न भव ताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री

विहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग। कमल कनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग॥ मेरो मनस- र्वंग परस प्रभुको सुख पावै। अब सो कौन कल्याण जो न दिनर ढिग आवै॥ ७॥ भव तज सुख पद बसे काम मद सुभट संघारे। जो तुम को निर्खत सदा प्रियदास तिहारे॥ तुम वचनामृत पान भक्ति अंजुलि सो पीवै तिनै भयानक क्रूररोग रिपु कैसे छीवै॥ ८॥ मानथंभ -पाषाण आत पाषाण पटंतर। ऐसे और अनेक रत्न दीखैं जग अन्तर॥ देखत दृष्टि प्रमाण मान मद तुरत मिटावै। जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावै॥ ९॥ प्रभु तन पर्वत परस पवन उरमें निबहे है। तासों तत्छिण सकल रोगरज बाहिर है है। जाकेध्यान/ हूत वसो उर अंबुज माहीं। कौन जगत उपकार करण समरथ सो नाहीं॥ १०॥ जन्म २ के दुःख सहे सबते तुम जानो। याद किये मुझ हिये लगैं आयुध से मानों। तुम दयाल जगपाल स्वामि मैं शरण गही है। जो कुछ करना होय करो परि माए वहो है॥ ११॥ मरण स- मय तुन नाम मंत्र जीवक तैं पायो। पापाचारी स्वान

प्राण तज अमर कहायो। जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरंतर। इन्द्र संपदा लहै कौन संशय इस अंतर ॥ १२ ॥ जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधै। अनवध सुख की सार भक्ति कूची नहिं हाथै। सो शिव वांछिक पुरुष मोक्ष पठ केस उघारे। मोह मुहर दिढ़-करी मोक्ष मन्दिर के द्वारे ॥ १३ ॥ शिव पुर केरोपन्थ पाप तम सो अति छायो। दुःख सरूप बहु कूप खाड़ सो विकट बतायो॥ स्वामी सुख सो तहां कौन जन-मारग लागै। प्रभु प्रवचन मणि दीप जौन के आगै आ-गै ॥ १४ ॥ कर्म पटल भू माहि दबी अ त्म निधि भारी। देखत अति सुख होय विमुख जन नाहिं उघारी॥ तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारैं। थुति कुदालसों खोद बन्द भू कठिन विदारैं ॥१५॥ स्यादवाद गिर उपज मोक्ष सागर लों धाई। तुम चरणांबुज परस भक्तिगंगा सुखदाई॥ मोचित निर्मल थयो न्होन रवि पूरव तामैं। अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥ १६ ॥ तुम शिव सुखमय प्रगट करत प्रभु चिन्तन तेरे। मैं भग-वान समान भाव यों वरते मेरे॥ यदपि झूठ है तवहि

तृप्त निश्चल उपजावै । तुम प्रसाद सकलंक जीव वांछित फल पावै ॥१७॥ वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवन में व्यापै । भंग तरंगिन विकथ बाद मल मलिन उथापे मन सुमेर सो मथै ताहि जे सम्यक ज्ञानी । परमामृतसों तृप्त होहिं ते चिर लों प्राणी ॥१८॥ जो कुदेव छविहीन बसन भूषण अभिलाषै । बैरी सों भय भीत होय सो आयुध राखे॥ तुम सुन्दर सर्वंग शत्रु समरथ नहिं कोई। भू-षण बसन गदादि ग्रहण काहे को होई ॥१९॥ सुरपतिसेवा करै कहा प्रभु प्रभुता मेरी । सोशलाघ ना लहै मिटै जग सों जग फेरी। तुम भव जलधि जिहाज तोहि शिव कंत उ चरये । तुही जगत जनपाल नाथ थुतिकी थुति करिये॥२०॥ वचन जाल जड़ रूप आप चिन्मूरति झांई । तातै थुति आलाप नाहि पहुंचे तुम ताई । तो भी निर्फल नाहिं भक्ति रस भीने वायक । सन्तन को सुरतरु समान वां छित बरदायक ॥२१॥ कोप कभी नहिं करो प्रीत कबहूं नहिं धारो । अति उदास वेचाह चित्त जिनराज तिहारो। तदपि आन जग बहै वैर तुम निकट न लहिये । यह प्रभुता जग तिलक कहां तुम विन सरधेये ॥२२॥ सुरतिय

गावैं सुयश सर्वगति ज्ञान स्वरूपी। जो तुमको थिरहोहि नमैं भवि आनन्द रूपी। ताहि क्षेमपुर चलन बाटबाकी नहिं हो है। श्रुतिके सुमरण मांहिं सो न कब ही तर मोहै ॥२३॥ अतुल चतुष्टै रूप तुमैं जो चितमें धारे। आदरहों तिहुं काल मांहि जग थुति विस्तारै॥ सो सुकृत शिव पंथ भक्ति रचना कर पूरै। पंच कल्यानक ऋद्धि पायनिश्चैदुख चूरै॥२४॥ अहो जगत् पतिपूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे। तुम गुण कीर्तन मांहि कौन हम मंद विचारे॥ थुति छलसों तुम विषै देव आदर विस्तारे। शिव सुख पूरण हार कल्प तरु येही हमारे ॥२५॥ वादराज मुनि राज शब्द विद्या के स्वामी। वादराज मुनि राज तर्क विद्या पति नामी॥ वादराज मुनि राज काव्य करता अधिकारी। वादराज मुनिराज बढ़े भविजन उपकारी ॥ २६ ॥

मूल अर्थ बहुबिधि कुसुम। भाषा सूत्र मझार॥
भक्ति माल भूधर करी। करो कंठ सुखकार ॥१॥

इति सम्पूर्णम् ॥

—:0:—

११ जिनचतुर्विंशति भाषा स्तोत्र॥

॥ दोहा ॥

सकल सुरासुर पूज्य नित, सकल सिद्ध दातार।
जिनपद बन्दूं जोर कर, अशरण शरण अधार॥

॥ चौपाई ॥

श्रीसुखवास महीकुलधाम। कीरति हर्षण थल अभिराम॥ सरस्वतीके रति महलमहान्। जयलछमी को खेलन थान॥१॥ अरुण बरण बाछित वरदाय। जगतपूज्य ऐसे जिन पाय॥ दर्शन प्राप्त करे जो कोय। सब शिव थानक सो जन होय॥२॥ निर्विकार तुम सोम शरीर। श्रवण सुखद वाणी गभीर॥ तुम आचरण जगत्में सार। सब जीवनको है हितकार॥३॥ महानिन्द भव मारूदेश। तहा तुंग तरु तुम परमेश॥ सघन छाहिं मण्डित छवि देत। तव पण्डितसे वैं सुख हेत॥४॥ गर्भ कूप तें निकसो आज। अब लोचन उघरे जिन राज॥ मेरो जन्म सुफल भयो अबै। शिव कारण तुम देखे जबै॥५॥ जगजननयन कमल वन खण्ड। विकसावन शशिशोक विहण्ड। आनंद क-

रण प्रभा तुम तनी । सोई अमृतकिरन चादनी ॥ ६ ॥ सब सुरेन्द्र शेखर शुभ रैन । तुम आसन तट माणकऐन॥ दोऊ दुति मिल जलकैं ओर । मानों दीपमाल चहुंओर ॥७॥ यह सम्पति अरुऐन वेचाह । कहां सर्वज्ञानी शिवनाह ॥ तातैं प्रभुता है जग माहि। वही असम है संशय नाहिं ॥८॥ सुरपति आन अखण्डित बहै । तृण ज्यों राज्य तजो तुम बहै ॥ जिन छिन में जग महिमा दली जीतो मोह शत्रु बहुबली ॥९॥ लोकालोक अनंत अशेष। कीनो अन्तज्ञान सो देख॥ प्रभु प्रभाव यह अद्भुत सबै । और देव मे मूल न फबै ॥१० ॥ पात्र दान तिन दिन दिनदियो । तिन चिरकाल महातप कियो ॥ बहु विधि पूजा कारक वही । सर्व शील व्रत पाले सही ॥ ११ ॥ और अनेक अमलगुणरासि। प्राप्त आय भये सब तास ॥ जिन तुम श्रद्धा सो कर टेक। दुग्वल्लभ देखे छिन एक॥१२॥ त्रिजगतिलक तुमगुणगण जेह। भव भुजंग विषहर मणितेह। जो उर कानन नाहि सदीव। भूषण कर पहरै भविजीव ॥१३॥ सो नर महामति संसार । सो श्रुति सागर पहुंचे पार ॥ सकल लोक में शोभा लहै। महिमा

योग्य जगत् में वहै ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

सुर समूह ढोलैं चमर, चदकिरण चय जैम ।
नवतनी बधू कटाक्ष से, चपल चलैं अतिएम ॥१५॥
छिन छिन ढलकैं, स्वामीपर सोहत ऐसो भाव ।
किधों कहत सिद्धिलछिसों,जिनपति के ढिग आव ॥

॥ चौपाई ॥

सीसछत्र सिंहासनतले । दिपोदेहदुति चामर ढुलै ॥ बाजैं दुन्दभी बरषैं फूल । ढिग अशोक वाणी सुख मूल ॥१७॥ इह विधि अनुपम शोभामान । सुर नर सभा पद्मिनी भान ॥ लोकनाथ बंदे सिर नाय । सो हम शरण होउ जिमराय ॥ १८ ॥ सुर गज दंत कमल [वनमांहि । सुर नारी गण नाचत जाहिं ॥ बहु बिधि बाजे बाजैं थोक । सुन उछाह उपजे तिहुंलोक ॥ १९ ॥ हर्षत हरि जै जै उच्चरैं । सुमन माल अप्सरा कर धरैं ॥ यों जन्मादि समय तुम होय । जयो देव देवागम सोय ॥२०॥ तोष बढ़ावन तुम मुखचंद । जन नयनामृत करण अमन्द सुन्दर दुतिकर अधिक उजास । तीन भवन नहिं उपमा

तास ॥ २१ ॥ ताहि निरख सनयन हम भये । लोचन आज सफल कर लये ॥ देखन योग्य जगत् में देख । उमग्यो उर आनन्द विशेष ॥२२॥ कैयकयों मानैं मति मन्द । विजित काम विधि ईश मुकंद ॥ ये तो है बनिता वश दीन । काम कटक जीतन बलहीन ॥ २३ ॥ प्रभु आगे सुरकामिन करें । ते कटाक्ष सब खाली परें ॥ तातैं मदन विध्वंसन वीर । तुम भगवंत और नहिं धीर ॥ २४ ॥ दर्शन प्रीति हिये जब जगी । तबै अस्त्र कोपल बहु लगी ॥ तुम समीप उठ आवन ठयो । तब सों सघन प्रफुल्लित भयो ॥२५॥ अब हूं निज नैनन ढिगआय । मुख मयंक देखो जगराय । मेरो पुण्य वृक्ष इस बार । सुफल फलो सब सुख दातार ॥ २६ ॥

॥ दोहा ॥

त्रिभुवन बन में विसतरी, काम दावानल जोर ।
वाणी वरषा भरण सों, शांति करी चहुंओर ॥२७॥
इन्द्र मोर नाचैं निकट, भक्तिभाव धर मोह ।
मेघ सघन चौबीस जिन, जैवते जग होइ ॥ २८ ॥

॥ चौपाई ॥

भविजन कुमुदचन्द सुख दैन । सुरनर नाथ प्रमुख

जगनैन ॥ ते तुम देख रमें इस भांत। पुहप गेह लह ज्यों अलिपाल ॥२९॥ सिर धर अंजलि भक्ति समेत। श्री गृहप्रति प्रदक्षिणा देत। शिव सुख की सी प्राप्ति भई। चरण छांहिं सों भवतप गई ॥ ३० ॥ वह तुम पद नख दर्पण देव। परमपूज्य सुन्दर स्वयमेव॥ तामें जो भविभाग विशाल। आनन अविलोके चिरकाल ॥३१॥ कमला कीरत कांति अनूप। धीरज प्रमुख सकल सुख रूप ॥ वे जग मंगल कौन कहान्। जो न लहै बहु पुण्य प्रधान ॥३२॥ इन्द्रादिक श्री गंगा जेह। उत्पति थान हिमाचल येह ॥ जिन मुद्रा मण्डित अति लसे। हर्ष होय देखे दुःख नसै ॥३३॥ शिखर ध्वजागण सोहैं येम। धर्म सुतरुवरपल्लवनेम ॥ यों अनेक उपमा आधार। जय जिनेश जिनालयसार ॥३४॥ सीस नवाय नमत सुर-नार।केशकांति मिश्रित मनहार॥ नख उद्योतवरतें जिन-राज। दश दिश पूरित किरण समाज ॥३५॥ स्वर्ग नाग नर नायक संग। पूजत पाय पद्म अतुलंग। दुष्टकर्म दल द-लन सुजान। जयवंते वरतो भगवान् ॥ ३६ ॥ सोकर लागै जो धीमान्। पण्डित सुधी सुमुख गुणवान्॥ आ-

पन मंगल हेतु प्रशस्त । अवलोकन चाहे कछु वस्त ॥३७॥
और वस्तु देखे किस काज । जो तुम मुखराजै जिनराज
तीन लोकका मंगलथान। प्रेक्षणीय तिहुंजग कल्याण॥३८॥
धर्मोदय तापस गृह कीर। काव्य बंध बनपिक तुम बीर
मोक्ष मल्लिका मधुप रसाल।पुण्य कथाकजसरसि मराल३९
तुम जिनदेव सुगुण मणिमाल । सर्व हितंकर दीनदया
ल । ताको कौन न उन्नत काय । धरै किरीट माहिं
हर्षाय ॥४०॥ केई बाछैं शिवपुर वास । केई करैं स्वर्ग
सुख आस । पचे पचानल आदिक ठान । दुःख बन्धे
जस बंधे अपान ॥४१॥ हम श्रीमुख बाणी अनभवैं ।
श्रद्धा पूर्वक हृदय ठवैं ॥ तिस प्रभाव आनन्दित रहैं । स्व-
र्गादिक सुख सहज लहैं ॥४२॥ स्नान महोत्सव इन्द्रन
कियो । सुरतिय मिल मंगल पढ़ लियो ॥ सुयश शरद
चन्द्रोपम श्वेत । सो गंधर्व गान करलेत ॥ ४३ ॥ और
भक्ति जो जो जिस योग । शेष सुरन कीनो सुनियोग
अब प्रभु करैं कौनसी सेव। हम चित्त भयो हिंडोलो एव

चत विधि में महिमा पाय ॥ ४५ ॥ अमरी बीन बजावै सार। धरी सुचाग्रह करत झंकार ॥ इहिविधि कौतुक कीतो जबैं। अब सर कौन कह सकै अबैं ॥ ४६ ॥ श्री प्रति बिंब मनोहर एम। विकसत बदन कमल दल जेम ॥ ताहि हेर हर्षे दृग् दोय। कहन सके इतनो सुख होय ॥४७॥ तब सुर संग कल्याणक काल। प्रगट रूप जोवै जगपाल ॥ इकटक दृष्टि एक चित्तलाय। वह आनन्द कहा क्यों जाय ॥४८॥ देख्यो देव रसायन धाम देख्यो नवनिधि को विश्राम। चिन्तारत्न सिद्धि रस अबै जिन गृह दूखत देखे सबै ॥ ४९ ॥ अथवा इन देखे कछु नाहिं। यह अनुगामी फल जग माहिं। स्वामी सरो अपूर्व काज। मुक्ति समीप भई मुझ आज ॥५०॥ अब विनवै भूपाल नरेश। देखे जिनवर हरण कलेश ॥ नेत्र कमल विकसे जगचन्द। चतुर चकोर करण आनन्द॥५१॥ स्तुति जल सों पावन भयो। पाप ताप मेरो मिट गयो ॥ मो चित्त है तुम चरणन माहि। फिर दर्शन हूजे अब जाहिं ॥ ५२ ॥

॥ छप्पय ॥

इहि विधि बुद्धि विशाल राय भूपाल महा कवि।

कियो ललित स्तुति पाठ हिये सब समझ कैं भवि। टीका के अनुसार अर्थ कछु मन में आयो। कहिं शब्द कहि भाव जोड़ भाषा यश गायो॥ आत्मपवित्र कारण किम पवाल ख्याल सो जानियो। लीजो सुधार भूधर तनी यह बिनती बुध मानियो॥ ५३॥

इति सम्पूर्णम्

ओं नमः सिद्धेभ्यः।

१२ बारहमासा सीताजी का।

सती सीता विनवे शिरनाय। नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥टेक॥ महीना आषाढ़ का आया। जनक गृह जन्म मैंने पाया। हरा सुर भ्रातनको दाया। मात पितुको दुख उपजाया॥दोहा॥ रथनूपुर विजयार्द्ध पर ता बन में सुर जाय। रखा लला सो भूप चन्द्र गति हित से लिया उठाय॥ पुत्र कर पाला प्रेम वढ़ाय। नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥ १॥ चढ़े श्रावण मलेच्छ भारी। पिता दुख पायो अधिकारी॥ बुलाये दशरथ हितकारी। राम तिन की सेना मारी॥ दोहा॥ तब रघुपति को तात ने करी सगाई मोर। विधिवश

खगपति झगड़ा ठानो आने धनुष कठोर ॥ चढ़ा रघुवर परणी गृह ल्याय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥२॥ भये भादों में शुभ्र बैराग । राज रघुवर को देने लाग ॥ कैकई मांगो वर दुर्भाग । भरतको राज लिया तिनमांग॥ दोहा ॥ तब पति चले विदेशको धनुषबाण ले हाथ । सङ्ग चले प्रिय लक्ष्मण देवर मैं भी चाली साथ ॥ चले दक्षिण को चरण उठाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आ-य ॥३॥ क्वार दंडक वन पहुंचे जाय । हना शंबूक लक्ष्मण असि पाय । फेरि मारा खर दूषण धाय ॥ तहां मैं हरी लंकपति आय॥ दोहा ॥ मार जटायू मोहिले दशमुख पहुंचो लंक । मित्र भये स्वग्रीव राम के हनुमत वीर निशंक ॥ लेन सुधि पठये श्रीरघुराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ४ ॥ मिली कातिक में सुधि मेरी । राम लक्ष्मण लंका घेरी ॥ घोर रण भयो बहुत बेरी । लगीं बहु मृतकन की ढेरी ॥ दोहा ॥ तहां लंकपतिको हनो दियो विभीषण राज । मोहि साथ ले गृह को आये लिया राज रघुराज ॥ भरत तप धरा भये शिव राय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥५॥ कियो अ-

गहन में गर्भाधान । तबे वटवायो किमिच्छा दान ॥ कर्म वश लोगो गिह्ला ठान । लगाया दूषण मोहि नि-दान ॥दोहा॥ तव पति पठयी विपिन मे तीरथ का मिसि ठान ॥ वज्जग गृह रोवति देखी ले गयो अहिन वखान ॥ रखो पुर पुंडरीक में आय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥६॥ पूस लवणाकुश जन्मे बाल । बढ़े क्रम से सो भये विशाल ॥ गये बन क्रीड़ा दोनों लाल । मिले नारद बतलायो हाल ॥ दोहा॥ तब दो-नोकी रिस बढ़ी भये पिता पर क्रुद्ध । समझाये सो एक न मानी चले करन को युद्ध ॥ चतुर्विध सेना सह्ज सजा-य । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥७॥ माघ में चले लड़न युग वीर । करे डेरा सरयू के तीर ॥ सुनत आये लड़ने रघुवीर । चलाये खेंच विविध शर धीर ॥दोहा॥ प्रबल युद्ध पुत्रन किया हरि बल मुहरा फेर । चक्र च-लाया तब लक्ष्मण ने विकल भयो सो हेर ॥ विचारा येही हरि बलराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥८॥ फाग में भामंडल हनुमान । कही ये सीता सुत वलवान्॥ मिले तब हरि बल आनंद ठान । अवध में बाढ़ो हर्ष

महान ॥ दोहा ॥ तब सब ने बिनती करी सीता लेहु बुलाय । सो स्वीकार करी रघुवरने सब नृप लाये धाय मिलन को चलीं सिया हर्षाय ॥ नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥९॥ चैत्र में बोले राम रिसाय । धीज बिन लिये न आवो धाय ॥ तवे बोली सीता विलखाय । कहो सो लेंहुं धीज दुख दाय ॥ दोहा ॥ विष खाऊं पावक जलूं करू जो आज्ञा होय । कही राम पावकमें पैठो सीता मानी सोय ॥ दयो तब पावक कुंडजलाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥१०॥ जपति वैशाख में प्रभु का नाम । अग्नि में पैठी रघुवर भाम ॥ शील महिमा से देव तमाम । अग्निका कीना जल तिस ठाम॥ दोहा ॥ कमलासन पर जानकी वैठारी सुर आप । वढ़ा नीर जन डूवन लागे करते भये विल्लाप ॥ करो रक्षा हम सीता माय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥११॥ जेठ में राम मिलन चाले । लुंचिकच सिय सन्मुख डाले। लयी दिक्षा अणुव्रत पाले । किया तप दुर्द्धर अघ जाले ॥ दोहा ॥ त्रिया लिंग हनि दिव भयो सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र । अनुक्रम से अब शिवपुर पै है भाषी एम जि-

नेन्द्र ॥ कहैं यों दयाराम गुण गाय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥ १२ ॥

॥ इति श्री सीताजीका बारहमासा सम्पूर्णम् ॥

१३ बारहमासा राजल ॥

राग मरहटी [झड़ी]

मैं लूगी श्री अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चार का सरना । निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना ॥टेक॥

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया आषाढ़ घनघोर मोर चहुं ओर मचा रहे शोर इन्हें समझावो । मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लावो । हैं कहां मेरे भरतार कहां गिरनार महाव्रत धार बसे किस वन में । क्यों बांध मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मन में ॥ (झर्वटैं)

न जारे पपैया जारै, प्रीतम को दे समझारे। रही-नौभवसंग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे ॥ (झड़ी)-क्यों विना दोष भये रोष नहीं सन्तोष यही अफसोस वात नहीं बूझी । दिये आठों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी । मोहि राखो शरण मंझार मेरे भर्त्तार करो

उद्धार क्यों दे गये झुरना। निर्नैम नेम बिन०।

श्रावण मास (झड़ी)

सखि श्रावण संवर करे समन्दर भरे दिगम्बर धरे क्या करिये। मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं हार शृङ्गार तजूं ससार क्यों भव मंझार में जी भरमाऊं। क्यों पराधीन तिरिया का जन्म नहीं पाऊं॥ (झर्वटैं)- सब सुन लो राजदुलारी। दुख पड़गया हम पर भारी। तुम तज दो प्रीति हमारी। करदो संयम की त्यारी॥ (झड़ी)

अब आगया पावस काल करो मत टाल भरे सब ताल महाजल बरसै। विन परसे श्री भगवन्त मेरा जी तरसै। मैं तजदई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्नैम नेम बिन०।

भादों मास (झड़ी)।

सखि भादों भरे तलाव मेरे चितचाव करूंगी उछाव से सोलह कारण। करूं दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण। करूं राट तीज उपवास पञ्चमी अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊ। तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म

जलाऊ ॥ (झर्वटे)

सखि दूद्धाररस की धारा। तजिहार चार परकारा। करूं उग्र उग्र तप सारा। ज्यों होय मेरा निस्तारा ॥

(झड़ी)

मैं रत्नत्रय व्रत धरूं चतुर्दशी करू जगत् से तिरूं करू पखवाड़ा। मै सब से क्षिमाऊं दोष तजू सब राड़ा। मैं सातों तत्व विचार की गाऊं मल्हार तजा संसार तौ फिर क्या करना ॥ निर्नेम नेम विन हमें० ॥

आसौज मास (झड़ी)

सखि आगया मास कुवार लो भूषण तार मुझे गिरनार की देदो आज्ञा। मेरे पाणिपात्र आहार की है परतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणी रतन की कणी सुनो सब जणी खोलदो वेनी। मुझको अवश्य परभात हि दीक्षा लेनी। (झर्वटे) मेरे हेत कमण्डलु लावो। इक पीछी नई मंगावो। मेरा मत ना जी भरमावो। मत सूते कर्म जगावो ॥ (झड़ी)

है जग में असाता कर्म बड़ा वेशर्म मोह के भरमसे धर्म न सूझै। इसके वश अपना हित कल्याण न वूझै

जहां मृगतृष्णा की धूर वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल झरना। निर्नेम नेम विन०।

कार्त्तिक मास (झड़ी)

सखि कातिक काल अनंत श्री अरहंत की सन्त महन्त ने आज्ञा पाली। धर योग यन्न भव भोग की तृष्णा टाली। सजे चौदह गुण अस्थान स्वपर पहचान तजे रु मक्कान महल दिवाली। लगा उन्हें मिष्ट जिन धर्म अमावस काली ॥ (झर्वटें)

उन केवल ज्ञान उपाया। जग का अन्धेर मिटाया जिस में सब विश्व समाया। तन धन सब अथिर बताया ॥ (झड़ी)

है अथिर जगत् सबन्ध अरी मतिमन्द जगत् का अंध है धुन्ध पसारा। मेरे प्रीतम ने सत जान के जगत् विसारा। मैं उन के चरण की चेरी तू आज्ञा देरी सुन ले मा मेरी है एक दिन मरना। निर्नेम नेम०।

अगहन मास (झड़ी)

सखि अगहन ऐसी घड़ी उदै में पड़ी मैं रह गई खड़ी दरस नहीं पाये। मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही

गंवाये। नही मिले हमारे पिया न जप तप किया न संयम लिया अटका रही जग मे। पड़ी काल अनादि से पाप की वेड़ी पग में॥

(झर्वटैं)

मत भरियो मांग हमारी। मेरे शील को लागे गारी। मत डारो अञ्जन प्यारी। मैं योगन तुम ससारी॥ झडी॥ हुये कंत हमारे जती में उन की सती पलट गई रती तो धर्म न खण्डू। मैं अपने पिता के वश को कैसे भंडू। मैं मण्डा शील सिङ्गार अरी नथ तार गये भर्तार के सग आभरना। निर्नेम नेम विन०

॥ पौष मास (झड़ी)

सखिलगा महीना पोहये माया मोह जगत् से द्रोह रु प्रीत करावै। हरे ज्ञाना वरणी ज्ञान अदर्शन छाव। परद्रव्य से ममता हरै तो पूरी परैजु सम्भर करै तो अन्तर टूटै। अस ऊंचनीच कुल नाम की सञ्ज्ञा छूटे॥

(झर्वटैं)

क्यों ओछी उमर धरावै। क्यों सन्पतिको बिललावै। क्यों पराधीनदुःखपावे। जो सयममें चितलावै॥ (झड़ी)

सखि क्यों कहलावै दीन क्यों हो छवि छीन क्यों वि-द्याहीन मलीन कहावै। क्यों नारि नपुंसक जन्म में कर्म नचावै। वे तजैं शील सिङ्गार रुलैं संसार जिने द रकार नरक मे पड़ना। निर्नैम नेम विन० ॥

माघ मास (झड़ी)

सखि आगया माह वसन्त हमारे कंथ भये अरहन्त वो केवल ज्ञानी। उन महिमा शील कुशील की ऐसे बखा- नी। दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहां बरसे फूल हुई जय वाणी। वे मुक्ति गये अरु भई कलंकित राणी झर्वटैं ॥ कीचक ने मन ललचाया। द्रुपदी पर भाव धराया। उसे भीम ने मार गिराया। उन किया जैसा फल पाया ॥झड़ी॥ फिर गद्या द्रुयोधन चीर हुई द- लगीर जुड़ गई भीर लाज अति आवै। गये पाडु जुये में हार न पार वसावै। भये परगट शासन वीर हरी सब पीर वन्धाई धीर पकर लिये चरना। निर्नैम नेम विन०

फागुन मास (झड़ी)

सखि आया फाग वड़ भाग तो होरी त्याग अठांही लाग कै मैना सुन्दर। हरा श्रीपाल का कुष्ट कठोर उ-

दम्बर। दिया धवल सेठने डार उदधिकी धार तो हो गये पार वे उस ही पल मे। अरु जा परणी गुणमाल न डूवे जल में॥ (झर्वटैं)

मिली रैन मजूखा प्यारी। जिन ध्वजा शील की धारी। परी सेठ पै मार करारी। गया नर्कमें पापाचारी॥ (झड़ी)

तुम लखो द्रोपदी सती दोष नहीं रती कहें दुर्मती पद्म के बन्धन। हुआ घात की खंड जरूर शील इस खंडन। उन फूटे घड़े मंझार दिया जल डाल तो ये आधार थमा जल झरना। निर्नेम नेम विन०।

चैत्र मास (झड़ी)॥

सखि चैत्र में चिन्ता करे न कारज सरे शील से टरे कर्म की रेखा। मैंने शील से भील को होता जगत् गुरु देखा। सखी शील में सुलसां तिरी सुतारा फिरी ख-लासी करी श्रीरघुनन्दन। अरु मिली शील प-रताप पवनसे अंजन॥झर्वटैं॥ रावणने कुनत उपाई। फिर गया विभीषण भाई। छिन में जा लंक गमाई।

कुछ भी नहीं पार वसाई ॥

(झड़ी)—सीता सती अग्नि में पड़ी तो उस ही घड़ी वो शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा। खिल गये कमल भये गगन में जय जय कारा ॥ पद पूजे इन्द्र धरेन्द्र भई शीतेन्द्र श्रीजैनेन्द्रने ऐसा बरना। निर्नेम नेम विन०॥

वैशाखमास (झड़ी) ॥

सखी आई वैशाखी मेष लई मैं देख ये ऊरध रेख पड़ी मेरे कर में। मेरा हुआ जन्म यहीं उग्रसेन के घर में। नहि लिखा करम में भोग पड़ा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी। है मात पिता अरू भ्रात से क्षमा हमारी ॥ ॥ झवंटै ॥

मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे। घर भोगे भोग अपारे। जो विधि के अंक हमारे। नहिं टरे किसूके टारे ॥ झड़ी ॥

मेरी सखी सहेली बीर न हो दलगीर धरो चित्तधीर मैं क्षमा कराऊं ॥ मैं कुल को तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं। वह ले आज्ञा उठ खड़ी थी मंगल घड़ी वन में जा पड़ी सुगुरु के चरना। निर्नेम नेम विन० ॥

जेठ मास (झड़ी)

अजी पड़े जेठ की धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप

सती बड़ भागन । कर सिद्धन को परणाम किया जग त्यागन । अजि त्यागे सब सिंगार चूड़िया तार कमण्ड लु धार कै लई पिछोटी । अरु पहर कै साड़ी स्वेत उपाटी चोटी ॥ ॥ झर्वटै ॥

वन महाउग्र तपकीना । फिर अच्युतेन्द्र पदलीना है धन्य उन्हों का जीना । नहिं विषयन में चित दीना झड़ी—अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कटगया पुण्य चढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ । करे धर्म अरथ फल भोग रुचे परमारथ । वो स्वर्ग संपदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी उक्ति मै निश्चय धरना । निर्नेम नेम वि० ॥

जो पढ़ें इसे नरनारि बढ़े परिवार सब संसार में महिमा पावैं । सुन सतियन शील कथान विघ्न मिटजावैं नहिं रहैं दुहागन दुखी होंय सब सुखी सिटे वेरुषी करैं पति आदर । वे होंय जगत् मैं महा सतियों की चादर ॥ ॥ झर्वटैं ॥

मैं मानुष कुल में आया । अरु जाति यती कहलाया । है कर्म उदय की माया । विन संजम जनम गवाया ॥

॥झड़ी॥ ग्राम सम्बत् कविवंश नाम ।

है दिल्ली नगर सुवास वतन है खास फाल्गुन मास अठाही आठैं। हों उनके नित कल्याण कृपाकर बाटै अजी विक्रम अब्द उनीस पै धर पैंतीस श्री जगदीश का लेलो शरणा। कहै दास नैन सुख दोष पै दृष्टि न धरना॥ मैं लूंगी श्रीअरहंत सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त धार का सरना। निर्नेम नेम० ॥१३॥

॥ सम्पूर्णम् ॥

श्री वीतरागाय नमः।

१४ बारहमासा श्री मुनिराजजीका

(राग मरहटी)

मैं वन्दूं साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित्त लाके।
जिन अथिर लखा संसार बसे वन जाके॥ टेक॥

चित चैत में व्याकुल रहे काम तन दहे न कुछ बन आवे। फूली बनराई देख मोह भ्रम छावे॥ जब शीतल चले समीर स्वच्छ हो नीर भवन सुख भावे। किस तरह योग योगीश्वर से बन आवे॥ (झड़)

तिस अवसर श्री मुनि ज्ञानी, रहें अचल ध्यान में

ध्यानी। जिन काया लखी पयानी, जग ऋद्धि खाक सम जानी ॥ उस समय धीर धर रहे अमर पद लहैं ध्यान शुभ ध्याके। जिन अथिर० ॥ १

जब आवत है वैशाख होय तृण खाक तप से जलके सब करैं धाम विश्राम पवन झल झल के ॥ ऋतु गर्मी में ससार पहिने नर नार वस्त्र मलमल के। वे जल से करते नेह जो है जी स्थान के ॥ (झड)

जिस समय मुनी महराजे, तन नग्न शिखिर गिरि राजे। प्रभु अचल सिंहासन राजे, कहो क्यों न कर्म दल लाजे जो घोर महा तप करे मोक्षपद धरै बसै शिव जाके। जिन अथिर लखा० ॥ २ ॥

जब पड़े ज्येष्ठसे ज्वाला होय तन काला धूपको मारी। घर बाहर पग नहिं धारै कोई घरबारी ॥ पानी से छिड़कें धाम करे विश्राम सकल नरनारी। घर खसकी टटिया छिपैं लूह की मारी ॥ (झड)

मुनिराज शिखिर गिर ठाड़े, दिन रैन ऋद्धि अति बाढे। अति तृषा रोग भय बाढे, तब रहै ध्यान मे गाढ़े ॥ सब सूखे सरवर नीर जलैं शरीर रहैं समझा के जिन अथिर लखा० ॥ ३ ॥

आषाढ़ मेघ का जोर बोलते मोर गरजते वादल चमके विजली कड़ कड़ै पड़ै धारा जल ॥ अति उमड़ैं नदियां नीर गह गम्भीर भरे जल से थल । भोगी को ऐसे समय पड़ै कैसे कल ॥ (झड़)

उस समय मुनी गुणवन्ते, तरवर तट ध्यान धरन्ते अति काटैं जीव अरु जन्ते, नही उनका सोच करन्ते वे काटैं कर्म जंजीर नही दिलगीर रहैं शिव पाके। जिन अथिर लखा० ॥ ४ ॥

श्रावण में हैं त्यौहार झूलती नार चढ़ी हिंडोले । वे गावैं राग मल्हार पहन नये चोले ॥ जग मोह तिमिर मन वसे सर्व तन कसे देत झकझोले । उस अवसर श्री मुनिराज वनत हैं भोले ॥ (झड़)

वे जीतै रिपु से लर के, कर ज्ञान खड्ग लेकर के। शुभ शुक्ल ध्यान को धरके, परफुल्लित केवल वर के ॥ नही सहै वो यम की त्रास लहै शिव वास अघात न-शाके । जिन अथिर० ॥ ५ ॥

भादव अंधियारी रात सूझै ना हाथ घुमड़ रहे वादर वन मोर पपीहा कोयल बोलैं दादुर॥ अति मच्छर भिन भिन करे सांप फुंकारैं पुकारे थलचर । बहु सिंह बघेरा

गज घूमें बन अन्दर ॥ (झड़)

मुनिराज ध्यान गुण पूरे, तब काटै कर्म अंकूरे। तनु लिपटत कान खजूरे, मधु मच्छ ततइयें भूरे ॥ चिटियों ने विल तन करे आप मुनि खड़े हाथ लटकाके। जिन०॥६॥

आश्विन में वर्षा गई समय नहीं रही दशहरा आया नही रही वृष्टि अरु कामदेव लहराया॥ कामी नर करें किलोल बनावें डोल करे मन भाया। है धन्य साधु जिन आतमध्यान लगाया ॥ (झड़)

वसु याम योग मे भीने, मुनि अष्ट कर्म क्षय कीने। उपदेश सबन को दीने, भविजन को नित्य नवीने ॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज ज्ञान के ताज नमूं शिर नाके। जिन अथिर लखा० ॥ ७ ॥

कातिक में आया शीत भई विपरीत अधिक सरदाई संसारी खेलें जुआ कर्म दुखदाई ॥ जग नर नारीका मेल मिथुन सुख केल करें मन भाई। शीतल ऋतु कामीजन को है सुखदाई ॥ (झड़)

जब कामी काम कमावें, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावें सरबर तट ध्यान लगावें सो मोक्ष भवन सुख पावें ॥ मुनि महिमा अपरम्पार न पावे पार कोई नर गाके। जिन अथिर लखा० ॥ ८ ॥

अगहनमें टपके शीत यही जगरीति सेज मन भावे अति शीतल चलै समीर देह थर्रावे ॥ शृङ्गार करे कामिनी रूप रस ठनी साम्हने आवे। उस समय कुमति वन सब का मन ललचावे ॥ (झड़)

योगीश्वर ध्यान धरें हैं, सरिता के निकट खरें हैं कहां ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्म का नाश करे हैं जब पड़े बर्फ घनघोर करें नहीं शोर जयी दृढ़ता के। जिन अथिर लखा० ॥ ९ ॥

यह पौष महीना भला शीतमें घुला कांपती काया वे धन्य गुरू जिन इस ऋतु ध्यान लगाया ॥ घरवारी घर में छिपे बस्त्र तन लिपे रहैं जैड़ाया। तज बस्त्र दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया ॥ (झड़)

जल के तट जगसुखदाई, महिमासागर मुनिराई। धर धीर खड़े है भाई, निज आतम से लवलाई ॥ है यह ससार असार वे तारण हार सकल वसुधा के। जिन अथिर लखा ससार० ॥ १० ॥

है माघ वसन्त वसन्त नार अरु कंथ युगल सुख पाते वे पहिने वस्त्र वसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़े मयन की शयन पड़े नहीं चैन कुमति उपजाते। है खड़े धीर

जन वहुधा वे डिग जाते ॥ (झड)

तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी पयानी । भवि डूवत वोधे प्रानी, जिन ये वसन्त जिय जानी ॥ चेतन सो खेलें होरी ज्ञान पिचकारी योग जल लाके । जिन अथिर लखा० ॥ ११ ॥

जब लगे महीना फाग करें अनुराग सबी नर नारी लै फिरे फेट में गुलाल कर पिचकारी ॥ जब श्रीमुनिवर गुणखान अचल धर ध्यान करे तप भारी । कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥ (झड़)

कीर्ति कुमकुमे बनावें, कर्मोंसे फाग रचावें । जो बारामासा गावें, सो अजर अमर पद पावें ॥ यह भाखें जियालाल धर्म गुणमाल योग दर्शाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ १२ ॥

इति श्री मुनि जी का बारहमासा समाप्तम् ॥

॥ १५ ॥ बारहमासा बज्रदंत

चक्रवर्त्ति का यति नैनसुखदास कृत ॥ सवैया ३१ ॥

वन्दूं मैं जिनंद परमानंद के कंद जगवंद विमलेंदु जड़ता ताप हरन कूं । इन्द्र धरणेन्द्र गौतमादिक गणेन्द्र जाहि सेव राव रंक भव सागर तरन कू ॥ निर्वंध

निर्द्वन्द दीन बन्धु दयासिन्धु करें उपदेश परमार्थ करन कूं । गावें नैनसुखदास वज्रदन्त बारहमास मेटो भगवत मेरे जन्म मरन कूं ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥

वज्रदत चक्रेश की, कथा सुनो मन लाय । कर्म काट शिवपुर गये, बारह भावन भाय ॥ २ ॥ सवैया ॥ ३१ ॥ बैठ बज्रदंत आय आपनी सभा लगाय ताके पास बैठे राय बत्तीस हजार है। इन्द्र कैसे भोगसार राणी छाणवे हजार पुत्र एक सहस्र महान गुणगार हैं ॥ जाके पुण्य प्रचण्ड से नये है बलबड शत्रु हाथ जोड़ मान छोड़ सवें दरबार हैं । ऐसा काल पाय माली लायो एक डाली तामें देखो अलि अम्बुज मरण भयकार है ३

अहो यह भोग महा पाप को संयोग देखो डालीमे कमल तामें भोंरा प्राण हरे हैं । नासिका के हेतु भयो भोग में अचेत सारी रैन के कलापमे बिलाप इन करे हैं ॥ हम तो है पांचो ही के भोगी भये जोगी नाहि विषय कषायन के जाल माहि परे हैं । जो न अब हित करूं जाने कौन गति परू सुतन बुलाके यों वच अनुसरे हैं ॥ ४ ॥

अहो सुत जग रीति देख के हमारी नीति भई है उदास बनोवास अनुसरेगे । राजभार सीस धरो परजा का हित करो हम कर्म शत्रुनकी फौजन सूं लरेंगे । सुन-

त वचन तब कहत कुमार सब हम तो उगाल कूं न अगीकार करेगे । आप बुरो जान छोड़ो हमें जग जाल वोडो तुमरे ही संग पच महाव्रत धरेगे ॥ ५ ॥ चौपाई

सुत आषाढ़ आयो पावस काल । सिर पर गर्जत यम विकराल ॥ लेहुराज सुख करहु विनीत । हम बन जाय वड़न की रीति ॥ ६ ॥

गीता छन्द—जाय तप के हेत बन को भोग तज संयम धरे । तज ग्रंथ सब निर्ग्रंथ हो ससार सागरसे तरें । यही हमारे मन वसी तुम रहो धीरत धार के । कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचार के॥७॥

चौपाई—पिता राज तुम कीनो वोन । ताहि ग्रहण हम समरथ हो न ॥ यह भौरा भोगनकी व्यथा । प्रगट करत करकगन यथा ॥ ८ ॥

गीता छन्द—यथा करका कागना सन्मुख प्रगट नजरापरे । त्यों ही पिता भौरा निरषि भव भोग से मन थरहरे ॥ तुम ने तो वन के वास ही को सुख अगीकृत किया । तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ ९ ॥

चौपाई—श्रावण पुत्र कठिन बनवास । जल थल सीत

निर्द्वन्द दीन बन्धु दयासिन्धु करें उपदेश परमार्थ करन कूं । गावें नैनसुखदास वज्रदन्त बारहमास मेटो भगवत मेरे जन्म मरन कूं ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥

वज्रदत चक्रेश की, कथा सुनो मन लाय । कर्म काट शिवपुर गये, बारह भावन भाय ॥ २ ॥ सवैया ॥ ३१ ॥

बैठे बज्रदंत आय आपनी सभा लगाय ताके पास बैठे राय बत्तीस हजार है। इन्द्र कैसे भोगसार राणी छाणवे हजार पुत्र एक सहस्त्र महान गुणगार हैं ॥ जाके पुण्य प्रचण्ड से नये हैं वलबंड शत्रु हाथ जोड़ मान छोड़ सर्वे दरबार हैं । ऐसा काल पाय माली लायो एक डाली तामें देखो अलि अबुज मरण भयकार है ३

अहो यह भोग महा पाप को संयोग देखो डालीमे कमल तामें भोंरा प्राण हरे हैं । नासिका के हेतु भयो भोग में अचेत सारी रैन के कलाप में बिलाप इन करे हैं ॥ हम तो हैं पांचो ही के भोगी भये जोगी नाहि विषय कषायन के जाल मांहि परे हैं । जो न अब हित करूं जाने कौन गति परू सुतन बुलाके यों वच अनुसरे हैं ॥ ४ ॥

अहो सुत जग रीति देख के हमारी नीति भई है उदास बनोवास अनुसरेगे । राजभार सीस धरो परजा का हित करो हम कर्म शत्रुनकी फौजन सूं लरेंगे । सुन-

त वचन तव कहत कुमार सव हम तो उगाल कूं न अगीकार करेंगे। आप वुरो जान छोड़ो हमें जग जाल वोड़ो तुमरे ही संग पंच महाव्रत धरेंगे ॥ ५ ॥ चौपाई सुत आषाढ़ आयो पावस काल। सिर पर गर्जत यम विकराल ॥ लेहुराज सुख करहु विनीत। हम वन जाय वड़न की रीति ॥ ६ ॥

गीता छन्द—जाय तप के हेत वन को भोग तज संयम धरें। तज ग्रंथ सव निर्ग्रंथ हो ससार सागरसे तरें। यही हमारे मन वसी तुम रहो धीरज धार के। कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचार के॥७॥

चौपाई—पिता राज तुम कीनो वोन। ताहि ग्रहण हम समरथ हों न ॥ यह भौरा भोगनकी व्यथा। प्रगट करत करकगन यथा ॥ ८ ॥

गीता छन्द—यथा करका कांगना सन्मुख प्रगट नजरापरे। त्यों ही पिता भौरा निरषि भव भोग से मन थरहरे ॥ तुम ने तो वन के वास ही को सुख अंगीकृत किया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ ९ ॥

चौपाई—श्रावण पुत्र कठिन वनवास। जल थल सीत

पवन के त्रास ॥ जो नहिं पले साधु आचार । तो मुनि भेष लजावे सार ॥ १० ॥

छन्द—लाजे श्री मुनि भेष तातैं देह का साधन करो सम्यक्त युत ब्रतपंच में तुम देश ब्रत मनमें धरो ॥ हिंसा असत् चोरी परिग्रह ब्रह्मचर्य सुधार के। कुल आपने की रीति चालो राजनीति बिचार के ॥ ११ ॥

चौपाई—पिता अंग यह हमरो नांहि । भूख प्यास पुद्गल पर छांहि ॥ पाय परीषह कबहु न भजें। धर संन्यास मरण तन तजैं ॥ १२ ॥

छन्द—संन्यास धर तनकूं तजे नहिं डंश मसक से डरें। रहें नग्न तन बन खण्ड में जहां मेघ मूसल जल परें। तुम धन्य हो बड़ भाग तज के राज तप उद्यम किया तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ १३ ॥

चौपाई—भादोंमें सुत उपजे रोग । आवें याद महल के भोग ॥ जो प्रमाद बस आसन टले । तो न दयाव्रत तुम से पले ॥ १४ ॥

छन्द—जब दयाव्रत नहीं पले तब उपहास जग में विस्तरे। अर्हन्त और निर्ग्रन्थ की कहो कौन फिर

सरधा करे। तातैं करो मुनि दान पूजा राज काज सं-
भाल के। कुल आपने की० ॥ १५ ॥

चौपाई—हम तजि भोग चलेंगे साथ। मिटैं रोग भव भव के तात ॥ समता मन्दिर में पग धरे। अनुभव अमृत सेवन करे ॥ १६ ॥

छन्द—करे अनुभव पान आतम ध्यान बीणाकर धरे। आलाप मेघ मल्हार सोह सप्त भङ्गी स्वर भरे। धृग् धृग् पखावज भोग कू सन्तोष मत मे कर लिया। तुमरी समझ सोई समझ० ॥ १७ ॥

चौपाई-अ सुज भोग तजे नहिं जाय। भोगी जीवन को डसि खाय ॥ मोह लहर जिया की सुध हरे। ग्यारह गुण थानक चढ गिरे ॥ १८ ॥

छन्द—गिरे थानक ग्यारवें से आय मिथ्या भूप रे। बिन भाव की थिरता जगत में चतुर्गति के दुःख भरे। रहै द्रव्य लिङ्गी जगत में बिन ज्ञान पौरुष हार के। कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचारके।१९।

चौपाई विषै विडार पिता तन कसे। गिर कन्दर निर्जन बन बसे ॥ महामन्त्र को लखि परभाव। भोग भुजङ्गन चाले घाव ॥ २० ॥

पवन के त्रास ॥ जो नहिं पले साधु आचार । तो मुनि भेष लजावे सार ॥ १० ॥

छन्द—लाजे श्री मुनि भेष तातैं देह का साधन करो सम्यक्त युत व्रतपंच में तुम देश व्रत मनमें धरो ॥ हिंसा असत् चोरी परिग्रह ब्रह्मचर्य सुधार के। कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के ॥ ११ ॥

चौपाई—पिता अंग यह हमरो नांहि । भूख प्यास पुद्गल पर छांहि ॥ पाय परीषह कवहु न भजैं। धर संन्यास मरण तन तजैं ॥ १२ ॥

छन्द—संन्यास धर तनकू तजें नहिं डंश मशक से डरें। रहें नग्न तन बन खण्ड मे जहा मेघ मूसल जल परें। तुम धन्य हो वड भाग तज के राज तप उद्यम किया तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ १३ ॥

चौपाई—भादोंमें सुत उपजे रोग । आवें याद महल के भोग ॥ जो प्रमाद वस आसन टले । तो न दयाव्रत तुम से पले ॥ १४ ॥

छन्द—जव दयाव्रत नही पले तव उपहास जग मे विस्तरे । अर्हन्त और निर्ग्रन्थ की कहौ कौन फिर

सरधा करे। तातें करो मुनि दान पूजा राज काज न-
भाल के। कुल आपने की० ॥ १५ ॥

चौपाई—हम तजि भोग चलेगे साथ । मिटे रोग भव भव के तात ॥ समता मन्दिर मे पग धरे । अनुभव अमृत सेवन करे ॥ १६ ॥

छन्द—करे अनुभव पान आतम ध्यान वीणाकर धरे। आलाप मेघ मल्हार सोह सप्त भङ्गी स्वर भरे। धृग् धृग् पखावज भोग कू सन्तोष मत मे कर लिया। तुम री समझ सोई समझ० ॥ १७ ॥

चौपाई अ सुज भोग तजे नहिं जाय। भोगी जीवन को डसि खाय ॥ मोह लहर जिया की सुध हरे। ग्या-रह गुण थानक चढ गिरे ॥ १८ ॥

छन्द—गिरे थानक ग्यारवें से आय शिथ्या भूप रे। बिन भाव की थिरता जगत में चतुर्गति के दुःख भरे। रहै द्रव्य लिङ्गी जगत में बिन ज्ञान पौरुष हार के। कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचारके।१९।

चौपाई विषे विडार पिता तन कसे। गिर कन्दर निर्जन वन बसे ॥ महामन्त्र को लखि परभाव। भोग भुजङ्गन चाले घाव ॥ २० ॥

छन्द—घाले न भोग भुजङ्ग तब क्यों मोह की लहरा चढे। परमाद तज परमात्मा प्रकाश जिन आगम पढ़ें। फिर काल लब्धि उद्योत होय सुहोय यों मन थिर किया॥ तुमरी समझ० ॥२१॥

चौपाई—कातिक में मुन करें विहार। काटे कांकर चुभे अपार॥ मारें दुष्ट खैंचके तीर। फाट उर थरहरे शरीर॥ २२॥

छन्द—थरहरे सगरी देह अपने नाथ काढ़त नहीं बने। नहिं और काहू से कहें तब देह की थिरता हनें। कोई खैंच बांधे थम्भ से कोई खाय आत निकाल के। कुन आपने की रीति चालो राजनीति विचारके॥२३॥

चौपाई—पदपद पुन्य धरा में चले। कांटे पाप सकल दल मले॥ क्षमा ढाल तल धरें शरीर। विफल करै दुष्टन के तीर॥ २४॥

छन्द—कर दुष्ट जन के तीर निरफल दया कुंजर पर चढ़े। तुम संग समता खड्ग लेकर अष्ट कर्मन से लड़े। धन धन्य यह दिनवार प्रभु तुम योगका उद्यम किया॥ तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमे नृपपद क्यों दिया॥२५॥

चौपाई—अगहन मुनि तटिनी तट रहे। ग्रीषम शैल शिखर दुख सहे। पुनि जब आवत पावसकाल। रहे साध जन वन विकराल॥ २६॥

छन्द—रहें वन विकराल मे जहा सिह स्यार सता वहीं। कानो में वीछ विल करें और व्याल तन लिपटावहीं। दे कष्ट प्रेत पिशाच आन अंगार पाथर डारके। कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के॥२७॥

चौपाई—हे प्रभु वहुत वार दु.ख सहे। विना केवली जाय न कहे॥ शीत उष्ण नर्कन के तात। करत याद कम्पे सब गात॥ २८॥

छन्द—गात कम्पे नर्क सेलहे शीत उष्ण अथाय ही। जहां लाख योजन लोह पिण्ड सुहोय जल गलजाय ही। असिपत्र बन के दु ख सहे परवस स्ववल तपना किय। तुमरी समझ साई समझ हमरी हमे नृपपद क्यों दिया॥ २९॥

चौपाई—पोष अर्थ अरु लेहु गयद। चौरासी लख लख सुखकंद॥ कोड़ि अठारह घोड़ा लेहु। लाख कोड़ि हल चलत गिनेहु॥ ३०॥

छन्द -पाय पशु पर जाय परवस रहे स्त्रिंग बंधायके जहां रोस रोम शरीर कम्पे मरे तन तरफायके। फिर गेर वास उचेर स्वान सिचान मिल श्रोणित पिया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ ४१ ॥ राजा

चौपाई—चैत लता मदनोदय होय। ऋतु वसंत में फूले सोय ॥ तिनकी इष्ट गन्ध के जोर। जागे काम महावल फोर ॥ ४२ ॥

छन्द—फोर बलको काम जागे लेयमन पुरछी नहीं। फिर ज्ञान परम निधान हरिके करे तेरा तीन ही। इतके न उतके तब रहे गए कुगति दोऊ कर झारके॥ कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचारके ॥४३॥

चौपाई—ऋतु वसन्त वनमें नहिं रहे। भूमि मसाण परीषह सहें। जहां नहिं हरति काय अङ्कूर। उड़त निरन्तर अहनिशि धूर ॥ ४४ ॥

छन्द—उड़े वन की धूर निशि दिन लगें कांकर आयके। सुन शब्द प्रेत प्रचण्ड के काम जांय पलाय के। मत कहो अव कछु और प्रभु भव भोगसे मन कंपिया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृपपद क्यों दिया ॥४५॥

चौपाई—मास बैशाख सुनत अरदास। चक्री मन उपज्यो विश्वास॥ अब बोलन को नाही ठौर। मैं कहूं और पुत्र कहें और॥ ४६॥

छन्द—और अब कछु मै कहूं नहीं रीति जगकी कीजिये। एकवार हमसे राज लेके चाहे जिसको दीजिये। पोता था एक षट्मास का अभिषेक कर राजा कियो। पितु सग सब जगजाल सेती निकस बनमारग लियो ४७

चौपाई -उठे बज्रदन्त चक्रेश। तीस सहस नृप तजि अलवेश। एकहजार पुत्र बड़भाग। साठ सहस्र सती जग त्याग॥ ४८॥

छन्द- त्याग जगकूं ये चले सब भोग तज ममताहरी। शमभाव कर तिहुंलोक के जीवों से यों बिनती करी। अहो जेते हैं सब जीव जगमें क्षमा हम पर कीजियो। हम जैन दीक्षा लेत हैं तुम बैर सब तज दीजियो॥ ॥४९॥

छन्द--बैर सबसे हम तजा अर्हत का शरणा लिया। श्रीसिद्ध साहूकी शरण सर्वज्ञ के मत चित दिया। यों भाष पिहिताश्रव गुरुन ढिंग जैन दीक्षा आदरी। कर लौंच तजके सोच भवने ध्यानमें दृढ़ता धरी॥ ५०॥

चौपाई--जेठ मास लू ताती चले। सूकैं सर कपिगण

मदगलें ॥ ग्रीष्म काल शिखर के सीस । धरो अतापन योग मुनीश ॥ ५१ ॥

छन्द—धरयोग आतापन सुगुरु ने तब शुक्ल ध्यान लगाइयो । तिहुं लोकभानु समान केवल ज्ञान तिन प्रगटाइयो । धन वज्रदन्त मुनीश जग तज कर्मके सन्मुख भये। निज काज अरु परकाज करके समयमे शिवपुर गये॥५४

चौपाई—सम्यक्तादि सुगुण आधार । भये निरंजन निरआकार ॥ आवागमन जलांजल दई । सब जीवनकी शुभगति भई ॥ ५२ ॥

छन्द—भई शुभगति सबनकी जिन शरण जिनपति की लई । पुरुषार्थ सिद्धि उपाय से परमार्थ की सिद्धी भई । जो पढ़ें बारामास भावन भाय चित्त हुलसायके। तिन के हों मंगल नित नये अरु विघ्न जाय पलायके। ॥ ५४ ॥

दोहा ॥

नित नित नव मंगल बढ़ें, पढ़े जु यह गुणमाल ।
सुरनर के सुख भोग कर, पावे मोक्ष रिसाल ॥५५॥

॥ सवैया ॥ ३१ ॥

दो हज़ार मांहि तैं तिहत्तर घटाय अब विक्रम को सवत् विचार कै धरत हूं । अगहन असित त्रयोदशी मृ

गांक वार अर्द्ध निशा मांहि याहि पूर्ण करत हूं ॥ इति श्रीवजदन्त चक्रवर्ति को वृत्तान्त रचके पवित्र जैन आ-नन्द भरत हूं। ज्ञानवन्त करी शुद्ध जान मेरी बाल बुद्धि दोष पै न रोष करो पायन परत हूं ॥ ५६ ॥

इति श्री वज्रदन्त चक्रवर्त्ति का बारहमासा सम्पूर्णम् ॥

१६ सामायक पाठ ॥

प्रथम प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहिये दुख भारी। जन्म मरण नित किये पाप को हो अधिकारी॥ कोड़ि भव-न्तर मांहि मिलन दुर्लभ सामायक। धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक ॥ १ ॥ हे सर्वज्ञ जिनेश किये जो पाप जु मैं अब। सो सब मन वच काय योग की गुप्ति विना लब ॥ आप समीप हुजूर माहि मैं खड़ो खड़ो अब। दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देय जब ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह माया वश प्राणी। दुःख सहित जो किये दया तिन की ना आणी॥ विना प्रयोजन एकेन्द्रिय बिति चउ पंचेन्द्रिय। आप प्रसा-दहि मिटे दोष जो लगो मोह जिय ॥ ३ ॥ आपस में इकठौर थाप कर जो दुख दीने। पेल दिये पद तले

दाय कर मान हरीने ॥ आप जगत के जीव जिते तिन सब के नायक । अरज करूं मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक ॥ ४ ॥ अञ्जन आदिक चोर महा घन घोर पापमय । तिन के जो अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय मेरे जे अब दोष भये ते क्षमो दयानिधि । यह पडिकोणो कियो आदि षट् कर्म माहिं विधि ॥ ५ ।

द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म ।

जो प्रमाद वश होय विराधे जीव घनेरे । तिनको अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो सब मिथ्या होउ जगति पति के सु प्रसादे । जा प्रसाद से मिले सर्व सुख दुःख न लादे ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दया कर हीन महा शठ । किये पाप अघ ढेर पाप मत होउ चित्त दुठ ॥ निन्दो मैं वार वार निज जिय को गरहो । सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि कर हो ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावक कुल भारी । सत्संगति संयोग धर्म जिन श्रद्धा भारी ॥ जिन वचनामृत धार समावर्ते जिन वाणी । तो भी जीव सहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी ॥ ८ ॥ इन्द्रिय लम्पट होय खोय निज ज्ञान जैसा सब । अज्ञानी जिन करे तिसी विधि हिंसक

हो अब ॥ गमनागमन करते जीव विरोधे भोले। सो सब दोष किये निन्दों अब मन वच तोले ॥९॥ आलोचन विधि थकी दोष लगे जु घनेरे। सो सब दोष बिनाश होउ तुमसे जिन मेरे ॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता। ईर्षादिक से भये निंद ये जो भय भीता १०

तृतीय सामायिक कर्म।

सब जीवन में मेरे समता भाव जगो है। सब जियमो सम समता राखो भाव लगो है ॥ आर्त रौद्र दुर्ध्यान छोड़कर हों सामायक। सयम जो कब शुद्ध होय वह भाव बढ़ायक ॥११॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउकाय बनस्पति स्थावर। पच माहिं तथा त्रस जीव बसे जित ॥ वे इन्द्रिय त्रय चउ पचेन्द्रिय माहिं जीव सब। तिन से क्षमा कराऊं मुझ पर क्षमा करो अब ॥ १ ॥ इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण। महल मसान समान शत्रु अरि मित्रहि सम गण ॥ जन्मन मरण समान जान हम समता कीनी। सामायिक का काल जिते यह भाव नवीनी ॥ १३ ॥ मेरो है एक आत्म ता में ममत्व जु कीनो। और सबै मम भिन्न जान समता रस भीनो ॥ मात पिता सुत बन्धु मित्र

त्रिय आदि सर्व पद । सो मैं न्यारे ज्ञान पदार्थ रूप लहो गद ॥ १४॥ मैं अनादि जग जाल मांहि फस रूप न जानो । एकेन्द्रिय दे आनादि जन्तु को प्राण हरानो॥ सो अब जीव समूह सुनो यह मेरी अर्जी । भव भवको अपराध क्षमा कीजो कर मर्जी ॥१५॥

चतुर्थं स्तावन कर्म ।

नमो वृषभ जिन देव अजित जिन जीत कर्म को । संभव भव दुख हरण करण अभिनंद शर्मको ॥ सुमति सुमति दातार तार भव सिन्धु पार कर । पद्म प्रभु पद्माभ भानु भव भीत प्रीति धर ॥ १६ ॥ श्री सुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर । श्री चन्द्र प्रभु चन्द्र कान्ति सम देह काति धर ॥ पुष्प दन्त दमि दोष कोप भवि पोष रोष हर । शीतल शीतल करण हरण भव ताप दोष हर ॥ १७ ॥ श्रेय रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्य जन । वास पूज्य शत पूज्य वासवादिक भव भय हन ॥ बिमल विमल मत देन अन्त गत है अनत जिन । धर्म शर्म दिव करण शान्ति जिन शान्ति विधायिन ॥१८॥ कुंथु कुंथु मुख जीव पाल अरनाथ जाल हर । मल्लि मल्ल सम मोह मल्ल मारण प्रचार धर ॥

मुनि सुव्रत व्रत करण नवत सुर संगहि नमि जिन। नमिनाथ जिन नेमि धर्म रथ मांहिं ज्ञान धन॥१९॥ पार्श्वनाथ जिन पार्स उपल सम मोक्ष रमापति। वर्द्धमान जिन नमों वमों भव दुःख कर्मकृत। या विधि मैं जिन सग रूप चउवीससंख्य धर। स्तवों नमों मैं बार बार बदों शिव सुख कर॥ २०॥

पंचम बन्दना कर्म।

बन्दों मैं जिन वीर धीर महावीर सुसन्मति। वर्द्धमान अतिवीर बंदिहों मन बच तन कृत॥ त्रिशला तनुज महेश धीश विद्यापति बंदों। बदों नित प्रति कनक रूप तनु पाप निकन्दों॥२१॥ सिद्धार्थ नृप नन्द द्वन्द दुख दोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जग जीव उधारन॥ कुंडल पुर कर जन्म जगत जिय आनंद कारण। बर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुख टारन॥२२॥ सप्त हस्त तन भग तग कृत जन्म मरण भय। बाल ब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञान मय॥ दे उपदेश उधार तार भव सिंधु जीव घन। आप बसे शिव मांहि ताहि वदों मन बच तन॥२३॥ जाके बंदन थकी दोष दुख दूरहि जावे। जाके वदन थकी

मुक्ति त्रिय सन्मुख आवे ॥ जाके वंदन थकी वंद्य होवे सुरगण के। ऐसे वीर जिनेश वंदि हों क्रम युग तिनके ॥२४॥ सामायिक षट् कर्म मांहि वदन यह पंचम। बंदे वीर जिनेन्द्र इन्द्र शत वंद्य २ मम ॥ जन्म मरण भय हरो करो अघ शांति शांति भय। मैं अघ कोष सुपोष दोष को दोष विनाशय ॥ २५ ॥

षष्ठम कायोत्सर्ग कर्म।

कायोत्सर्ग विधान करों अन्तिम सुखदाई। कायत्यजन मम होय काय सबको दुखदाई ॥ पूर्व दक्षिण नमों दिशा पश्चिम उत्तरमें। जिन गृह वन्दन करों हरों भव पाप तिमिर मैं ॥ २६ ॥ शिरो नति मैं करों नमों मस्तक कर धरके। आवर्तादिक क्रिया करों मन वच मद हरके ॥ तीनलोक जिन भवन मांहि जिन बिम्ब अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वय अर्द्ध द्वीप मांही बन्दों जिम ॥ २७ ॥ आठ कोड़ि पर छप्पन लाख रु सहस्र सुज्यानू। चार शतक पर असी एक जिन मन्दिर जानू। व्यन्तर ज्योतिष मांहि शख रहते जिन मन्दिर। जिन गृह बन्दन करों हरो मम पाप सग कर ॥ ८ ॥ सामायक सम नाहि और कोई बैर मिटायक।

सामायिक सम नाहि और कोई मैत्री दायक ॥ श्रावक अनुव्रत आदि अन्त सप्तम गुण थानक। यह आवश्यक किये होय निश्चय दुख हानक॥ २९ ॥ जो भवि आतम काज करण उद्यम के धारी। सो गृह काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग द्वेष मद मोह क्रोध लोभादिक जो सब। बुध महाचन्द्र विलाय जाय ताते कीजो अब ॥३०॥ इति सामायिक पाठ भाषा सम्पूर्ण ॥

श्रीवीतरागाय नमः ॥

१७ बारह भावना

भैयालाल कृत।

॥ चौपाई ॥

पंच परम गुरु वन्दन करूं। मन वच भाव सहित उर धरूं। बारह भावना पावन जान। भाऊं आत्मगुण पहिचान ॥ १ ॥ थिर नहीं दीखे नयनों वस्त। देहादिक अरु रूप समस्त। थिर बिन नेह कौनसे करूं। अथिर देख ममता परि हरूं।२॥ अशरण तोहि शरण नहीं कोय। तीन लोकमें दृग् धर जोय॥ कोई न तेरो राखन हार। कर्म वसे चेतन निरधार ॥ ३ ॥ अरु

संसार भावना येह । पर द्रव्यनसे कैसे नेह ॥ तू चेतन वे जड़ सर्वांग । ताते तजो परायो संग ॥ जीव अकेला फिरे त्रिकाल । ऊरध मध्य भवन पाताल ॥ दूजा कोई न तेरे साथ । सदा अकेला भ्रमे अनाथ ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुद्गल से रहे । भर्म बुद्धिसे जड़ता गहे ॥ वे रूपी पुद्गल के खंध । तू चिन्मूरति सदा अबन्ध ॥६॥ अशुचि देख देहादिक अङ्ग । कौन कुबस्तु लगी तो संग अस्थिचाम रुधिरादिक गेह । मल मूत्रनि लख तजो स्नेह ॥ ७ ॥ आश्रव पर से कीजे प्रीत । ताते बंध पड़े विपरीत । पुद्गल तोहि अपन यो नाहि । तू चेतन यह जड़ सब आहि ॥ ८ ॥ सम्बर पर को रोकन भाव । सुख होवे को यही उपाय ॥ आवें नही नये जहा कर्म । पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूर्ण ह्वै खिर खिर जाय । निर्जरभाव अधिक अधिकाय ॥ निर्मल होय चिदानंद आप । मिटे सहज परसंग मिलाप ॥१०॥ लोक माहि तेरी कुछ नाहिं। लोक अन्य तू अन्य लखाहि ॥ वह सब षट् द्रव्यन का धाम । तू चिन्मूरति आतमराम ॥ ११ ॥ दुर्लभ पर को रोकन भाव । सो तो दुर्लभ है सुन राव । जो तेरे है ज्ञान अनन्त । सो नही

दुर्लभ सुनो महन्त ॥ १२ ॥ धर्म स्वभाव आप ही जान। आप स्वभाव धर्म सोई मान ॥ जब वह धर्म प्रगट तोहे होइ । तब परम तम पद लख सोइ ॥ १३ ॥ ये ही बारह भावन सार । तीर्थंकर भावें निधार । होय विराग महाव्रत लय । तब भव भ्रमण जलाजलि देय ॥ १४ ॥ भैया भावो भाव अनूप । भावत होय तुरत शिवभूप। सुख अनंत विलसो निशि दीश । इम भावो स्वामी जगदीश ॥ १५ ॥

दोहा ॥

प्रथमअथिरअशरणजगत्, कअन्य अशुचान ।
आश्रव सवर निर्जरा, लोक बोध दुलभान ॥१६॥

इति बारहभावना भैयाभगवतीदास कृत सम्पूर्णाः

१८ बारहभावना भूधरदास कृत ।

॥ दोहा ॥

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार ।
मरणा सबको एक दिन, अपनी अपनी वार ॥ १॥
दल बल देवी देवता मात पिता परिवार ।
मरती वरिया जीवको, कोई न राखन हार ॥ २ ॥
दाम बिना निर्धन दुःखी, तृष्णा वश धनवान ।
कहीं न सुख संसार में, सब जग देखो छान ॥ ३ ॥

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यूं कबही इस जीवका, साथी सगा न कोय ॥ ४ ॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
पर सपति पर प्रगटये, पर हैं परिजन लोय ॥ ५ ॥
दिपे चाम चादर मढ़ी, हाड पीजरा देह।
भीतर या सम जगत् में, और नही घिन गेह ॥ ६ ॥

॥ सोरठा ॥

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमें सदा।
कर्म चोर चहुं ओर, सरबस लूटें सुध नहीं ॥ ७ ॥
सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमें।
तब कुछ बने उपाय, कर्म चोर आवत रुके ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधै भ्रम छोर।
याविधि बिन निकसे नहीं, बैठ पूर्व चोर ॥ ९ ॥
पचमहाव्रत संचरण सुमति पंच परकार।
प्रवल पच इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥ १० ॥
चौदह राज उतग नभ, लोक पुरुष संठान ॥
तामे जीव अनादि से, भरमत हैं विन ज्ञान ॥ ११ ॥
याचे सुरतरु देय सुख, चिन्तन चिन्ता रैन।
विन याचे बिन चिंतवे, धर्मसकल सुख दैन ॥ १२ ॥

धनकन कचन राज सुख, सबै सुलभ कर जान ॥
दुर्लभ है संसारमें, एक यथारथ ज्ञान ॥ १३ ॥ इति संपूर्ण ।

१९ बारहभावना बुधजनदास कृत ।

गीता छन्द ।

जेती जगत् में वस्तु तेती अथिर पर्ययते सदा । परणमनराखन नाहि समरथ इन्द्रचक्री मुनि कदा ॥ तन धन यौवन सुत नारी पर कर जान दामिन दमकसा । ममता न कीजे धारि समता मानि जलमे नमकसा ॥१॥ चेतन अचेतन परिग्रह सब हुआ अपनी तिथि लहें । सो रहें आप करार माफिक अधिक राखे ना रहें। अब शरण काकी लेयगा जब इन्द्र नाहीं रहत हैं। शरण तो इक धर्म आतम जाहि मुनि जन गहत हैं ॥२॥ सुर नर नरक पशु सकल हेरे कर्म चेरे बन रहे। सुख शाश्वता नहीं भासता सब विपतिमें अतिसन रहे ॥ दुःख मानसी तो देवगति में नारकी दुःख ही भरे। तिर्यंच मनुज वियोग रोगी शोक संकट में जरे ॥ ३ ॥ क्यों भूलता शठ फूलता है देख पर कर थोक को। ला या कहां लेजायगा क्या फौज भूषण रोक को ॥ जामन मरण तुझ एकले को काल केता होगया। संग और नाही लगे

तेरे सीख मेरी सुन भया ॥ ४ ॥ इन्द्रीन से जाना न जावे तू चिदानन्द अलक्ष है ॥ स्व सम्वेदन करत अनुभव होत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जन जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है । कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर तनलिया । मल मूत्र भांड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥ क्यों सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल गटके नाहि अटके छोड़ तुझ को गिरपरे ॥ ६ ॥ कोई खरा अरु कोई बुरा नाही वस्तु विविधि स्वभाव है । तू वृथा विकलप ठान उर में करत राग उपाव है ॥ यू भाव आश्रव बनत तू ही द्रव्य आश्रव सुन कथा । तुझ हेतु ते पुद्गल करम बन निमित्त हो देते व्यथा ॥ ७ ॥ तन भोग जगत सरूप लख डर भविक गुरु शरणा लिया । सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख भया । इन्द्री अनिन्द्री दावि लीनी त्रस स्थावर बध तजा । तब कर्म आश्रव द्वार रोके ध्यान निज में जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनों वरत लीनों बाह्याभ्यन्तर तप तपा उपसर्ग सुरनर जड़ पशु कृत सहा निज आत्म जपा ॥

तव कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा । सब कर्म हरके मोक्ष वरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ९ ॥ विच लोक नंतालोक माही लोक मे द्रव सब भरा । सब भिन्न भिन्न अनादि रचना निमित कारण की करा ॥ जिन देव भासा तिन प्रकाशा भर्म नाशा सुन गिरा । सुर मनुष तिर्यंच नारकी है ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा । भूवारि तेज वयार व्है के वे इन्द्रिय त्रस अवतरा ॥ फिर हो ते इन्द्री वा चौ इन्द्री पंचेन्द्री मन बिन बना । मन युत मनुषगति होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ न्हाना धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जप जपा । नग्न रहना धर्म नाही धर्म नाहीं तप तपा ॥ वर धर्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला । बुध जन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला १२

॥ दोहा ॥

अथिरशरण संसार है, एकत्व अनित्यहि जान ।
अशुचि आस्रव संवरा, निर्जर लोक वखान ॥ १३ ॥
बोध औ दुर्लभ धर्म ये बारह भावन जान ।
इनको भावे जो सदा, क्यों न लहै निर्वाण ॥ १३ ॥

इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्ण.

तेरे सीख मेरी सुन भया ॥ ४ ॥ इन्द्रीन से जाना न जावे तू चिदानन्द अलख है ॥ स्व सम्वेदन करत अनुभव होत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जन जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है । कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर तनलिया । मल मूत्र भांड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥ क्यों सुग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल गटके नाहि अटके छोड तुझ को गिरपरे ॥ ६ ॥ कोई खरा अरु कोई बुरा नाही वस्तु विविधि स्वभाव है । तू वृथा विकलप ठान उर में करत राग उपाव है ॥ यूं भाव आश्रव बनत तू ही द्रव्य आश्रव सुन कथा । तुझ हेतु ते पुद्गल करम बन निमित्त हो देते व्यथा ॥ ७ ॥ तन भोग जगत सरूप लख डर भविक गुर शरणा लिया । सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख भया । इन्द्री अनिन्द्री दावि लीनी त्रस स्थावर वध तजा । तब कर्म आश्रव द्वार रोके ध्यान निज में जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनों वरत लीनों बाह्याभ्यन्तर तप तपा उपसर्ग सुरनर जड़ पशु कृत सहा निज आत्म अपा ॥

तव कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा । सब कर्म हरके मोक्ष वरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ९ ॥ बिच लोक नंतालोक माही लोक मे द्रव सब भरा । सब भिन्न भिन्न अनादि रचना निमित कारण की करा ॥ जिन देव भासा तिन प्रकाशा भर्म नाशा सुन गिरा । सुर मनुष तिर्यंच नारकी हूं ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा । भूवारि तेज वयार व्है के वे इन्द्रिय त्रस अवतरा ॥ फिर होते इन्द्री वा चौ इन्द्री पंचेन्द्री मन बिन बना । मन युत मनुषगति होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ न्हाना धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जप जपा । नग्न रहना धर्म नाही धर्म नाहीं तप तपा॥ वर धर्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला । बुध जन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला १२

॥ दोहा ॥

अथिरशरण संसार है, एकत्व अनित्यहि जान ।
अशुचि आश्रव संवरा, निर्जर लोक वखान ॥ १३ ॥
बोध औ दुर्लभ धर्म ये बारह भावन जान ।
इनको भावे जो सदा, क्यों न लहै निर्वाण ॥ १३ ॥

इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्णा.

२० बारहभावना रत्नचंदजी कृत

॥ सवैया ॥ ३१ ॥

भोग उपभोग जे कहे हैं संसाररूप रमाधन पुत्र औ कलत्र आदि जानिये ॥ ज्यूंहीं जल वुद वुद प्रत्यक्ष है लखावतनु विद्युत्चमत्कार थिर न रहानिये । त्यूं ही जग अथिर विलास को असार जान थिर नहीं दीसे सो अनादि अनुमानिये ॥ यह जो विचारे सो अनित्य अनुप्रेक्षा कह प्रथम ही भेद जिनराज जो वखानिये ॥१॥ निर्जन अरण्य माहिं ग्रहे मृग सिंह धाय शरण न दीसे अशरण ताहि कहिये ॥ हरिहरादि चक्रवर्त्ति पदत्यूं अथिर गिनो जन्ममरण सा अनादि ही ते लहिये । याही को विचारिया असार संसार जान एक अवलंब जिन धर्म ताहि गहिये । दृढ़हिये धार जिने आत्म को कर विचार तज के बिकार सब निश्चल हो रहिये ॥ २ ॥ कर्मकाष्ठ दाही थकी आत्मा भ्रमण करे नट जैसी नाटक अनन्तकाल करे है । पिता हूते पुत्र होय जनक होय सुतहूते स्वामी हूतेदास भृत्य स्वामी पदधरे है । माता हू ते त्रिया होय कामिनीते माय होय भववन मांहि जीव यूंही संसरे है ॥ ३ ॥ महूं जो

एका की सदा देखिये अनंतकाल एकाकी जन्म मृत्यु बहु दुख सहो है । रोगनग्रसो है एकै पाप फल भुंजे घनो एकै शोकवन्त को उदुती नाहीं सहो है । स्वजन न तात मात साथी नहि कोय यह रत्न त्रय साथी निजताहि नहि गहो है । एकै यह आत्म ध्यावे एकै तपसा करावे होय शुद्ध भावे तब मुक्ति पद लहो है ॥४॥ आत्म है अन्य और पुद्गल हूं अन्य लखो आत्म मात तात पुत्र त्रिया सब जानरे । जैसे निशिमाहिं तरुहुपै खग भेलें होंय प्रात उड़जांय ठौर ठौर तिमिमानरे ॥ तैसे बिनाशीक यह सकल पदार्थ हैं हाट मध्यजन अनेक होंय भेले आनरे । इनहूंते काज कछु सरैनेगो नाहीं भैया अनित्यानुप्रेक्षरूप यह पहचानरे ॥५॥ त्वचा पल अस्तनसाजालमलसूत्र धाम शुक्ल मल रुधिरकूधातु समर्मई है, ऐसो तन अशुचि अनेक दुर्गंध भरो श्रवै नवद्वार तामें मूढ़ मति दई है ॥ ऐसी यह देह ताहि लख के उदास रहो मानो जीव एक शुद्ध बुद्ध परणई है ॥ अशुचि अनुप्रेक्षा यह धारे जो इसी ही भांति तज के विकार तिन मुक्ति रमालई है ॥ ६ ॥

॥ चौपाई ॥

आश्रवअनुप्रेक्षाहियधारं । सतावन आश्रव के द्वारं॥ कर्माश्रमपैसार जुहोय। ताको भेद कहुं अब सोय ॥ मिथ्या अविरतयोगकषाय । यह सत्तावनभेद लखाय ॥ बंधो फिरै इन के वश जीव। भव सागर मे रुले सदीव। विकल्प रहित ध्यान जब होय । शुभ आश्रव को कारण सोय ॥ कर्म शत्रु को कर सहार । तब पावे पचम गति सार ॥७॥ आश्रव को निरोधजोठान । सोई सम्बर कहे बखान ॥ सम्बर कर सुनिर्जरा होय । सो है द्रूय पर कारहि जोय ॥ इक स्वयमेव निर्जरा पेख। दूजी निर्जरा तपहि विशेष ॥ ८ ॥ पूर्व सकल अवस्था कही। सबर कर जो निर्जरा सही ॥ सोय निर्जरा दो परकार। सविपाकी अविपाकी सार ॥ सविपाकी सब जीवन होय । अविपाकी सुनि वरके जोय ॥ तप के बलकर मुनि भोगाय । सोई भाव निर्जरा आय । बंधे कर्म छूटै जिह घरी । सोई द्रव्य निर्जरा खरी ॥ ९ ॥ अधोमध्य अर ऊरध जान । लोकत्रय यह कहें बखान ॥ चौदह राजुसवे उतंग । बात त्रय बेढे सर वंग ॥ घनाकार राजू गण ईस । कहे तीन से तैंतालीस ॥ अधोलोक चौकूटो जान । मध्य लोक झालरी समान ॥ ऊ-

कार । पुरुषाकार त्रिलोकनिहार । ऐसो निज घर लखे जु कोय ॥ सो लोकानुप्रेक्ष यह होय ॥१०॥ दुर्लभ ज्ञान चतुरगति माहि । भ्रमत भ्रमत मानुष गति पाहि ॥ जैसे जन्म दरिद्री कोय । मिलो रत्न निधि ताको सोय ॥ त्यूं मिलियो यह नर परयाय । आर्यखंड ऊंच कुल पाय ॥ आयु पूरण पचइन्द्री भोग ॥ मदकषाय धर्म सयोग ॥ यह दुर्लभ है या जग माहि । इन विन मिले मुक्तपद नाहिं ॥ ऐसो भावना भावेसार । दुर्लभ अनुप्रेक्षा सुविचार ॥ ११ ॥ पालै धर्म यत्नकर जोय । शिव मदिर ते लहे जुसोय ॥ धर्म भेद दशविधि निर्धार । उत्तम क्षमा पुन मार्दव सार ॥ आर्जव सत्य शौच पुन जान ॥ संयमतप त्यागहि पहिचान ॥ आकिंचन ब्रह्मचर्य गनेव ॥ यह दश भेद कहे जिनदेव । धर्महि तें तीर्थकर गति । धर्महि ते होवे सुरपति । धर्महीते चक्रेश्वर जानाधर्म ही ते हरि प्रतिहरि मान । धर्म ही ते मनोज अवतार । धर्म ही ते हो भवदधिपार । रत्नचन्द्र यह करे वखान । धर्महि ते पावे निर्वान ॥ ॥इति॥

॥श्रीवीतरागायनमः॥

२१ बाईस परीषह

॥ भैया भगवतीदास जी कृत ॥

दोहा—पचपरम पद प्रणमिके, प्रणमू जिनवर बानि।
कहों परीषह साधु को, विशत दोय वखानि १

२२ परीषहों के नाम। कवित्त।

धूप शीत क्षुधाजीत तृषा डंसभयभीत, भूमिसैन बधबध सहै सावधान है। पथत्रास तृणफास दुरगध रोगभास, नगनकीलाज राज जीते ज्ञानवान् है॥ तीय मान अप मान थिर कुवचनवान, अजाची अज्ञान प्रज्ञा सहित सुजान है। अदर्शन अलाभ ये परीषह हैं वीश द्वय, इन्हैं जीते सोई साधु भाखे भगवान् है॥ २॥

१ ग्रीष्म परीषह।

ग्रीषम की ऋतुमाहि जलथल सूख जांहि, परत प्रचंड धूप आगिसी बलत है। दावाकीसी ज्वाल माल बहत बयार अति, लगत लपट कोऊ धीर न धरत है॥ धरती तपत मानों तवासी तपाय राखी, बड़वा अनलसम शैल जो जरत है। ताके शृंग शिलापर जोर जुगपांवधर करत तपस्या मुनि कर्म रहत है॥३॥

२ शीत परीषह ।

शीतकी सहाय पाय पानी जहां जम जाय, परत तुषार आय हरे वृक्ष झाड़ है । महाकारी निशा मांहिं घोर घन गरजाहिं चपलाहू चमकाहिं तहा दृग गाढ़े हैं ॥ पौन की झकोर चलै पाथर हैं तेहू हिलैं, ओरान के ढेर लगे तामे ध्यान बाढ़े है । कहां लों बखान कहूं हेमाचलकी समान, तहा मुनिरायपांय जोर दृढ़ठाढे हैं

योग देके योगीश्वर जंगल में ठाढ़ भये, वेदनीके उदै तैं परीषह सहत है । कारी घन घटा लागै भारी भयानक अति गाज विज्जु देखे धीर कोऊ न गहत हैं। मेह की भरन परै मूसरसी धारा मानो, पौनकी झकोर किधों तीर सै वहत हैं । ऐसी ऋतु पावस में पावत अनेक दुःख, तोऊ तहां सुख वेद आनन्द लहत हैं ॥५॥

३ क्षुधा परीषह ।

जगत्के जीव जिंह जेर जीतराखे अस्त, जाके जोर आगै सब जोरावर हारे हैं । मारत मरोरे नहिं छोरे राजा रंक कहूं, आंखिन अंधेरी ज्वर सब दे पछारे हैं । दावाकीसी ज्वाला जो जराय डारे छाला छवि, देवन

को लागै पशुन पंछीको विचारे हैं। ऐसी क्षुधा जोरभैया कहित कहांलों और, ताहजीत मुनिराज ध्यान थिर धारे हैं ॥ ६ ॥

४ तृषा परीषह ।

धूप की धखन परै आग सी शरीर जरै, उपचार कौन करै दहै द्वार आन के। पानी की प्यास जेती कहै को बखान तेती, तीनो जोग थिर सेती सहै कष्ट जान के॥ एक छिन चाह नाहिं पानीके परीसे माहिं प्राण छिन नाश जाहिं रहे सुखमानके। ऐसी प्यास मुनि सहे तब जाय सुख लहै, भैया इस भांति कहै वंदिये पिछान के ॥७॥

५ डंसमशकादि परीषह ॥

सिंह साप ससा स्याल सूअर औ स्वान, भालु, बाघ बीछी बानर सु बाजने सताये हैं। चीता चील्ह चरख चिरैया चूहा चेंटा, गज गोह गाय जो गिलहरी बताये हैं॥ मृग मोर मांकरी सुमच्छर जो सांखीमिल भौरा भौरी देख के खजूरा खरे धाये है। ऐसे डंस मास कादि जीव है अनेक दुष्ट, तिन की परीषह जीतें साधु जू कहाये हैं ॥८॥

६ शय्या परीषह ।

शुद्ध भूमि देख रहै दिन सेती योग गहै, आसन सु एक लहै धरै पद टेक है। कैसो किन कष्ट परै ध्यान सेती नाहि टरै देह को ममत्व हरे हिरदै विवेक है ॥

तीनों योग थिर सेती सहत परीषह जेती, कहैको वखान तेतो होय जे अनेक हैं। ऐसे निशि शयन कर अचल सु अंग धरे, भव्य ताके पांय परे धन्य मुनि एक हैं।

७ वधवध परीषह।

कोऊ वांधो कोऊ मारो कोऊ किनगह डारो, सवन के सकट सुवोध तैं सहतु हैं। कोऊ शिर आग धरो कोऊ पील प्राण हरो, कोऊ काट टूक करो द्वेष न गहतु है॥ कोऊ जल माहिं वोरो कोऊ लेके अंग तोरो, कोऊ कह चोर मारो दु'ख दे दहतु है। ऐसे वधवंध के परीषह को जीते साधु, भैया' ताहि वार वार वंदन कहतु है॥ १०॥

८ चर्यापरीषह ॥ छप्पय ॥

जव मुनि करहि विहार, पय पग धरहिं परक्खत ऊंट हाय परवान, दृष्टि युग भूमि परक्खत॥ चलत ईरया समिति, पंच इन्द्रिय वश कीने। दशहु दिशा मन रोक, एक करुणारस भीनें॥ इमि चलत पूज्य मुनिराज जव, होय खेद संकट विकट। तिह सहहि भाव थिर राख के, तव धावे भव उदधितट॥ ११॥

९ तृण फांस परीषह ॥ छप्पय ॥

परत आखि मह कछुक, काढि नहिं डारत तिनको

घुसत फांस तन मांहि, सार नहिं करते जिनको, लागत चोट प्रचंड, खेद नहिं कहूं जनावत। बाणादिक बहु शस्त्र, कहत कहुं पार न आवत, इक सहत सकल दुख देहि दमि, रागादिक नहिं धरत मन। भैया त्रिकाल बदत चरण, धन्य धन्य जग साधु धन॥ १२॥

१० ग्लानि परीषह ॥ छप्पय ॥

लगत देह में मैल, धोय नहिं तिनको झारत। देहादिकतैं भिन्न, शुद्ध निज रूप विचारत॥ जल थल सब जिय जंत, संत ह्वै काहि सताऊं। सब ही मोहि समान देत दुख में दुख पाऊं॥ इमि जान सहत दुरगंध दुख, तब गिलान विजयी भवत। भैया त्रिकाल तिह साधु के, इन्द्रादिक चरणन नमत॥ १३॥

११ रोग परीषह । छप्पय ॥

वात पित्त कफ कुष्ठ, स्वास अरु खांस खैंण गनि। शीत ताप शिरवाय, पेट पीड़ा जु शूल भनि॥ अतीसार अवसीस, अरश जो होय जलंधर। एकांतर अरु रुधिर, बहुत फोड़ा जु भगंदर॥ इमि रोग अनेक शरीर मंह, कहत पार नहिं पाइये॥ मुनिराज सबन जीते रहें औषध भाव न भाइये॥ १४॥

दोहा—ये एकादश वेदिनी, कर्म परीषह जान।
मोह सहित बलवान हैं, मोह गये बलहान ॥१५॥

१२ नग्न परीषह ॥ कवित्त ॥

नगन के रहिवे को महाकष्ट सहिवे को, कर्म वन दहीवे को बड़े महाराज है। देह नेह तोरवे को लोक लाज छोरवे को परम प्रीति जोरवे को जाको जोर काज हैं॥ धर्म थिर राखवे को परभाव नाखवे को, सुधारस चाखवे को ध्यान की समाज हैं। अंबर के त्यागे सो दिगम्बर कहाये साधु छहों काय के आराध याते शिरताज हैं॥

१३ रति अरति परीषह ॥ कवित्त ॥

आंखनि की रति मान दीपक पतंग परे, नासिका की रतिमान भ्रमर भुलाने हैं। कानन की रति मृग खोवत है प्राण निज, फरस की रात गज भये जो दिवाने हैं॥ रसना की रति सब जगत सहत दुःख, जानत है यह सुख ऐसे भरमाने हैं॥ इन्द्रिन की रति मान गति सब खोटी करै, ताहि मुनिराज जीत आप सुख माने है ॥ १७ ॥ छप्पय।

प्रकृति विरुद्ध अहार, मिले मुनि जो दुःख पावै। सोहि अरति परिणाम, तहां समता रस भावै। औरहु

परसंयोग होत दुख उपजैं तनमें, तहां अरति परिणाम त्याग थिरता धरै मनमें। इम सहत साधु दुख पुंज बहु तबहु तमा नहीं उर टरत। भैया त्रिकाल मुनिराज सो अरति जीत शिव पद वरत ॥ १८ ॥

१४ स्त्री परीषह ॥ कवित्त ॥

नारी के निहारत विचार सब भूलि जाय, नारीके निहारे परिणाम फिरे जात हैं। नारी निहारत अज्ञान भाव आय झकैं, नारी के निहारत ही शीलगुण घात हैं॥ नारी के निहारत न शूरवीर धीर धरै, लोहन के मार जे अडिग ठहरात हैं। ऐसी नारी नागनि के नैन को निमेष जीत, भये हैं अजीत मुनि जगत् विख्यात हैं।

१५ मान अपमान परीषह ॥ कवित्त ॥

जहां होय मान तहां मानत महान सुख, अपमान होय तहां मृत्यु के समान है। मानके गुमान आपम हाराज मान रहे, होत अपमान मढ़ हरै दशों प्राण हैं। मान ही की लाज जग सहत अनेक दु:ख अपमान होत धरै नरक निदान है॥ ऐसे मान अपमान दोऊ दुष्ट-भाव तज, गनत समान मुनि रहै सावधान है ॥ २० ॥

१६ थिर परीषह। छप्पय।

जब थिर होहि मुनिन्द्र एक आसन दृढ़ धरई। जब

थिर होहिं मुनिन्द, अंग एको नहि टरई ॥ जब थिर होहिं मुनिन्द, कष्ट किन आवहिं केते। जब थिर होहि मुनिन्द, भावसी सहे जु तेते॥ इम सहउ कष्ट मुनिराज अति, रोगदोष नहिं धरत मन। उत्कृष्ट होहिं इक वेर ओ, सब उन ईस परीस भन ॥ २१ ॥

१७ कुवचन परीषह ॥ छप्पय ॥

कुवचन बाण समान, लगै तिहि मार गरावहिं। कुवचन अगनि समान, वैठि गुण पुंज जलावहि ॥ कुवचन घन वज्र विशाल, भाव गिरि ढाहै पलमें। कुवचन विष की झाल, मोह दुःख दे बहु कलमे ॥ कुवचन महादुःख पुंज यह, लगे वचै नहि जगत् जन। 'भैया, त्रिकाल मुनि राज तिहं, तीत लहै निज अखय धन ॥ २२ ॥

१८ अयाची परीषह (घनाक्षरी ३२ वर्ण)

अयाची धरत व्रत याचना करत नाहि, इन्द्री उमंग हरत महा सन्तोष करके। रागादि टरत भाव क्रोधादि बध गरत, वरत स्वभाव शुद्ध मनोविकार हरके ॥ मरण सों डरत न करत तपस्या जोर, दरत अनेक कष्ट क्षमा खड्ग धरके। दया भंडार भरत वरत जु साधु ऐसे, 'भैया, प्रणाम करत त्रिकाल पाय करके ॥ २३ ॥

१९ अज्ञानपरीषह छप्पय ।

सम्यक् ज्ञान प्रकाश, होहिं मुनि कोय तुच्छ मति। जु नहिं जिनेश्वर वैन, याद नहिं रहै हृदय अति॥ ज्ञाना वरण प्रसाद, बुद्धि नहि प्रगटै जाकी। पूरव भव थित वन्ध, यहां कछु चलत न ताकी॥ इम सहत कष्ट मुनि ज्ञान के, होहि परीषह प्रबलजिय। तिह जीत प्रीति निजरूप सो, लहत शुद्ध अनुभव हिदय॥ २४॥

२० प्रज्ञा परीषह छप्पय॥

प्रज्ञा बल नहि होय, तहां विद्या नहिं आवै। प्रज्ञा बल नहिं होय तहां नहिं पढ़ै पढ़ावै॥ प्रज्ञा प्रबल न होय, तहां चर्चा नहिं सूझै। प्रज्ञा प्रवल न होय, तहा कछु अर्थ न बूझै॥ इम बुद्धि विशेष न होय जित, तित अनेक परिषह सहत। 'भैया, त्रिकाल मुनिराज तिह जीत शुद्ध अनुभव लहत॥ २५॥

२१ अदर्शन परीषह छप्पय।

समय प्रकृति मिथ्यात, तासु रुचि नहि टरई। सो जिय हैं गुनवन्त, तथा वेदक पद धरई। दर्शन निर्मल नाहिं मोहकी प्रकृति लखावै॥ सहैं अदर्शन कष्ट, कहत कैसे मन आवै। परिणाम खेद बहु विधि करत तो हू नि-

गल होय नहिं। 'भैया, त्रिकाल मुनिराज तिहं, जीत रहे निज आप माहिं॥ २६॥

२२ अलाभ परीषह ॥ कवित्त ॥

अन्तराय कर्म के उदयतैं जो अलाभ होय, ताके भेद दोय कहे निश्चय व्यवहार है। निश्चय तो स्वरूप में न थिरता विशेष रहै, वह अन्तराय जो रहै न एक सार है॥ व्यवहार अन्तराय मिलै न अहार योग, और अनेक भद अकथ अपार है। ऐसे तो अलाभ का परीषह को जीत साधु, भये हैं अतीत भैया, बंदे निरधार है॥२७॥

बाईस परीषह विजयी मुनिराजकी स्तुति।

॥ कुण्डलिया ॥

महा परीषह बीस द्वय, तिहं जीतन को धीर। धन्य साधु ससार में, बड़े शूरवर बीर।
बड़े शूरवर वीर, भीर भवकी जिह टारी॥
कर्म शत्रु को जीत भये शिवके अधिकारी॥
धारी निजनिधि संच पञ्च पद को जिह लहा। भैया करहि प्रणाम, परीषह विजयी सु महा॥ २८॥

छप्पय

सत्रह से उनचास मास फागुण सुखकारी। सुदि ग्यारस गुरुवार, सार मुनिकथा सचांरी॥ विकट परीषह

जीत, होत जे शिवपद गामी। त्रिभुवन के नाथ, प्रगट जग अन्तरजामी ॥ तिहं चरण नमत हिरदे हरखि, कहत गुणन को माल यह। कबि भैया द्वयकर ओर के, बन्दन करहि त्रिकाल लह ॥२९॥

हृदयराम उपदेश तें, भये कवित्त ये सार।

मुनि के गुण जे शरदहैं, ते पावहि भवपार ॥२८॥

॥ इति ॥

॥ ओं श्रीवीतरागाय नमः ॥

२२ बाईस परीषह।

भूधरदास जी कृत।

छप्पय।

क्षुधा तृषा हिम उष्ण दशमंशक दुःखभारी। निरावरण तन अरति खेद उपजावत नारी। चर्या आसन शयन दुष्टवायक बधबधन। याचैं नहीं अलाभ रोग तृणस्पर्शनिबन्धन। मलजनितमानसन्मानवशप्रज्ञा और अज्ञानकर। दर्शनमलिन बाईससबसाधुपरीषह जाननर॥

दोहा।

सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम।

इनके दुःख जे मुनि सहै, तिन प्रति सदा प्रणाम॥

१ क्षुधा परीषह सवैया ।

अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये है । जो नही बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं । तब तहां दुस्सह भूख की वेदन सहित साधु नहीं नेक नये है। तिन के चरण कमल प्रति २ दिन हाथ जोड़ हम सीस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह ।

पराधीन मुनिवर की भिक्षा पर घर लेंय कहें कछु नाहीं। प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यास को त्रास तहां ही । ग्रीष्मकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरें जब जाही । नीर न चहैं तिससै मुनि जयवन्तों वरतो जग माही ॥

३ शीत परीषह ।

शीतकाल सब ही जन कंपै खड़े जहां वन वृक्ष दहे हैं। झंझा वायु बहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहेहै । तहा धीर तटिनी तट चौपट ताल पाल पर कर्म दहे है सहे सम्हाल शीतकी बाधा ते मुनि तारण तरण कहे है॥

४ उष्ण परीषह ।

भूख प्यास पीड़े उर अन्तर प्रज्वलें आंत देह सब.

दागे। अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषम की ताती वाल झाल सी लगे। तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाह- ज्वर जागे। इत्यादिक गर्मी की बाधा सहैं साधु धैर्य्य नहीं त्यागैं॥ ५ दंशमशक परीषह॥

दंश मशक माखी तनु काटैं पीड़ैं बन पक्षी बहुतेरे। डसैं व्याल विषहारे बिच्छू लगैं खजूरे आन घनेरे। सिंह स्याल शुण्डाल सतावैं रीछ रोज दुःख दें घनेरे। ऐसे कष्ट सहै समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे॥

६ नग्न परीषह।

अन्तरविषय वासना वर्त्तें बाहिर लोक लाज भय भारी। तातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहीं सके दीन संसारी। ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषह जीतैं साधु शील व्र तधारी। निर्विकार बालक वत् निर्भय तिनके पायन धोक हमारी॥ ७ अरति परीषह।

देश काल को कारण लहिके होत अचैन अनेक प्र- कारैं। तब तहां खिन्न होयँ जगवासी कलमलाय थिर- ता पन छारैं। ऐसी अरति परीषह उपजत तहां धीर धैर्य्य उर धारैं। ऐसे साधुन के उर अन्तर बसो निर- न्तर नाम हमारे। ८ स्त्री परीषह।

जे प्रधान केहर को पकड़ै पन्नग पकड़ पान से च-

पत । जिनकी तनक देख भौं वांकी कोटिन सूर दीनता जम्पत । ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयपत । धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु जिनको नहीं कम्पत ॥ ९ चर्या परीषह ।

चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहीं तानें । कोमल पांय कठिन धरती पर धरत धीर बाधा नहीं मानें । नाग तुरंग पालकी चढ़ते ते स्वाद उरयाद न आनें । यों मुनिराज सहे चर्या दुःख तब दृढ़ कर्म्म कुलाचल भानें ॥

१० आसन परीषह ।

गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसें जहां शुद्ध भू हेरे । परिमित काल रहें निश्चल तन बारबार आसन नहिं फेरें । मानुषदेव अचेतन पशु कृत बैठे विपत आन जब घेरें । ठौर न तजें भजे स्थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर मेरें । ११ शयन परीषह ।

जे महान् सोने के महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवें । ते अब अचल अंग एकासन कोमल कठिन भूमि पर सोवे । पाहन खंड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर

नही होवे । ऐसी सयल परीषह जीतत ते मुनि कर्म्म कालिमा धोवे । १२ आक्रोश परीषह ।

जगत जीवयावन्त चराचर सबके हित सब को सुख दानी । तिन्हे देख दुर्वचन कहे शठ पाखंडी ठग यह अभिमानी । मारो याहि पकड़ पापी को तपसी भेष चोर है छानी । ऐसे वचन बाण की बरियां क्षमा ढाल ओटैं मुनिज्ञानी ॥ १३ बध बंधन परीषह ॥

निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं । कोई खैंच खमसे बांधे कोई पावकमे परिजारे तहां कोप नही करैं कदाचित् पूर्व कर्म्म विपाक विचारैं । समरथ होय सहैं बध बंधन ते गुरू सदा सहाय हमारैं ॥ १४ अयाचना परीषह ॥

घोर बीर तप करत तपोधन भये क्षीण सूखी गलबांही । अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल झलके जिस माही । औषधि अशन पान इत्यादिक प्राण जाएं पर याचित नाही । दुर्द्धर अयाचिक व्रत धारैं करहिं न मलिन धर्म्म परछाही ॥

१५ अलाभ परीषह ।

एक बार भोजन की वरियां मौन साध बस्ती में आवे । जो नही बने योग्य भिक्षाविधि तो महन्त मन खेद न लावें । ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्ध भावना भावैं । यों अलाभ की परम परीषह सहें साधु सोही शिवपावें ॥

१६ रोग परीषह ॥

वात पित्त कफ शोणित चारों ये जब घटें बढ़ें तनु माही । रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव कायर होजाही । ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहें सूर उपचार न चाही । आत्मलीन विरक्त देह से जैन यती निज नेम निवाही ॥

१७ तृण स्पर्श परीषह ।

सूखे तृण और तीक्ष्ण कांटे कठिन कांकरी पाय विदारैं । रज उड़ आन पड़े लोचन मे तीर फांस तनु पीर विथारैं ॥ तापर पर सहाय नही वाछत अपने करसों काढ़न डारे । यों तृणस्पर्श परीषह विजयी ते गुरु भव भव शरण हमारें ॥

१८ मल परीषह ।

यावज्जीव जलन्हौन तजो जिन नग्न रूपवन धान खड़े हैं । चले पसेव धूप की वरियां उड़त धूल सब अंग

भरे हैं। मलिन देह को देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहिं करें हैं। यों मल जनित परीषह जीतैं तिन्है पाय हम सीस धरे हैं।

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह।

जे महान् विद्यानिधि विजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं। तिनकी विनय बचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहि करे हैं। तौ मुनि तहां खेद नही मानैं उर मलीनता भाव हरे हैं। ऐसे परम साधु के अहोनिशि हाथ जोड़ हम पांय परे हैं॥

२० प्रज्ञा परीषह।

तर्कछन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलंकार पढ़ जानैं। जाकी सुमति देख पर वादी विलखे होंय लाज उर आनैं॥ जैसे सुनत नाद केहरि को बनगयद भाजत भय मानैं। ऐसी महाबुद्धि के भाजन ये मुनीश मद रंच न ठानैं।

२१ अज्ञान परीषह।

सावधान वर्तें निशिवासर संयम शूर परम वैरागी। पालत गुप्ति गये दीर्घ दिन सकल संग ममता पर त्यागी॥ अवधिज्ञान अथवा मन पर्य्यय केवल ऋद्धि अज

हूं नहीं जागी। यों विकल्प नहीं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़भागी॥

२२ अदर्शन परीषह।

मैं चिरकाल घोर तपकीने अजहूं ऋद्धि अतिशय नही जागे। तप बल सिद्धि होय सब सुनियें सा कुल बात झूठ सी लागे। यो कदापि चित में नही चिंतत समकित शुद्ध शांति रस पागे। होई साधु अदर्शन विजयी ताके दर्शन से अघ भागे॥

किस कर्मके उदय से कौन परीषह (कवित्त)

ज्ञानावरणी से दोय प्रज्ञा और अज्ञान होय एक महा मोह तें अदर्शन वखानिये। अन्तराय कर्म सेती उपजे अलाभ दुःख सप्त चारित्र मोहनी के वल जानिये। नग्न निषध्यानारी मानसन्मान गारि याचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये। एकादश वाकी रही वेदनी उदय से कही बाईस परीषह उदय ऐसे उर आनिये॥

॥ अडिल्ल छन्द॥

एकबार इन माहिं एक मुनि के कही। सर्व उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवे सही॥ आसन शयन विहार दोइ इन माहि की। शीत उष्ण में एक तीनये नाहिं की॥

इति सम्पूर्णम्।

॥ ॐश्रीवीतरागाय नमः ॥

२३ ॥ बाईस परीषह ॥

॥ रत्नचन्द्र कृत ॥

सवैया इकतीसा।

क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशकादि नग्न, अरति, व स्त्री, चर्या, निषद्यावखानिये। शय्या, आक्रोश वुधवधन, अदलस हो याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, जानिये॥ मलस्पर्श सत्कारतिरस्कार प्रज्ञा कही एकवीस अज्ञान यह अनुमानिये। अदर्शन सहित ये वाईस परीषह भेद भिन्न २ कहूं अब भूप उर आनिये॥

१ क्षुधा परीषह छन्द परमादी।

मासमान उपवास ठानत श्रीमुनिराई। धारैं अति दृढ़ ध्यान क्षुधा महैं अधिकाई॥ सूकैं गल और बांही तनपिंजर हो जाई। तब भी चिगते नाहीं वन्दूं तिनके पांई॥ २ तृषा परीषह। पुनः।

लागे प्यास अपार ग्रीष्म ऋतु के मांही। कोपै उर अति पित्त सूकै कंठ तहां ही॥ ध्यान सुअमृत सींच तीव्रता तृषा निवारे। चलै चित्त तिन नांहि तिन पद

हम सिर धारैं ॥ ३ शीतपरीषह ।

शीतकाल के मांहि जगजन कपैं सोई । तरवर कानन माहिं हिम सो सूखैं जोई । वहे झुझा वाय सूर सरता तट ठाढ़े । बाधा सहे अपार ते मुनि ध्यान हि साढ़े ॥ ४ उष्ण परीषह ।

ग्रीष्म ताप प्रचण्ड मारुत अग्नि समाना । सूखैं सरवर नीर दुख को नांहि प्रमाना ॥ सैल शिखर मुनि ध्यान धारैं कर्म नसावैं । सहैं परिषह उष्ण तिनके हम गुन गावैं ॥ ५ दंशमशक परीषह ।

दंशमशक अहि व्याल पीड़े तन बहुतेरे । मृगपति भक्षक स्याल वृश्चिक और गुहेरे ॥ सहत कष्ट इमिघोर लौ निज आत्म लागी । दंशमशक इहि भांति जीतत ते बड़भागी ॥ ६ नग्न परीषह ।

लोकलाज सब छांड़ बिहरंति नग्न महीप । धरैं दिगम्बर रूप हीये विकार नहीपं ॥ शील सव्रत दृढ़ लीन ध्यावत ते शिवनारी । निर्भय वाल समान तिन प्रति धोक हमारी ॥ ८ अरति परीषह ।

उपजै काल जु आई जो कहुं देश मझारा । तो जगत सी जीवविकलप करे अपारा । धीरज तजहि न

साध ते परमातम ध्यावें ॥ विजई अरति परीष वे गुरु शिवपद पावें ॥

८ स्त्री परीषह । छन्दहरी गीता ।

जे शूर पन्नग को गहें कर पकर मृगपति को रहें। वक्र भौंह विलोकिजिन की कोटि योधाभय गहें। रूप सुन्दर जोषिता युत करति क्रीड़ा मन रमें। ते साधु निश्चल कनक नग सम तिनहींके हम पद नमें ॥

९ चर्य्या परीषह ।

चार कर सोधत सुपथ ते दृष्टि इत उत नहिं करें। महा कोमल पाद जिन के कठिन धरती पर धरें ॥ चढ़त ते हय नाग शिवका तास याद न लावेंही। सहें चर्य्या दुःख वह गुरु तिन हि हम सिर नावेंही ॥

१० निषद्या परीषह ।

शैल सीस समान कानन गुफा मध्यवसें सदा। तहां आन उपजहि कष्ट कौनहु कर्म योगन तें तदा। मनुष्य सुर पशु अरु अचेतन बिपत आन सतावें ही। ठौर तजि नहि भजें ही थिर पद निषद विजयि कहावें हीं॥

११ शय्या परीषह ।

हेम महलनचित्रसारी सेज कोमल सोवते। विकट

बन में एकले ह्वै कठिन भुव तह जोवते। गड़त पाहनखंड अतिही तास को कायर नहीं। ऐसी परीषह सयन जीतन नमो तिन के पद तही।

१२ आक्रोश परीषह।

जगत जन मुनि देखिकै तिन दुरवचन भाषै कुधी। पाखंडी ठग अति है जु तस्कर मारिये यह दुरबुधी। वचन ऐसे सुनत जिन के छिमा ढाल जु ओढ़ें हीं। तिन ही के हम पद सुपरस हिं मान मद जे छोड़ें हीं॥

१३ वधबन्धन परीषह।

गहें समता भाव सब सों दुष्ट मिलि मारें जिन्हें। बांधई पुनि खंभ सों ते अग्नि में जारें तिन्हें॥ करति कोप कदाचि नाही पूर्व कर्म विचारें हीं। सहें बधब-न्धन परीषह ते सकल अघटारेंही॥

१४ याचना परीषह।

रोग कबहु जो आनि उपजै तन सकल दुरबल भयो। नसाजाल जु रुधिर सूखे अस्थि चाम सु रहिगयो। सहें धीर जु कष्ट वे मुनि महा दुर्द्धर व्रत धरैं॥ असन भे-षज पान आदिक याचना कभु ना करें॥

१५ अलाभ परीषह ।

एक वार अहार वरियां मौनले वस्तीधसें । जो मिले नहि योग भिक्षा तौ न खेद हिये लसे । भ्रमत बहु दिन वीत जांई भावना भावैं खरे । सो अलाभ परीष वि-जईं ते सु सिवरमनी वरे ॥

१६ रोग परीषह । पद्धरी छन्द ।

तन बात पित्त कफ रक्त आदि । बाढ़ें तन जब बहु लहि विषाद ॥ ते सहें वेदना मुनि अगाध । आतम सु-लीन मैं नमो साध ॥

१७ तृणस्पर्श परीषह ।

तीक्ष्ण कांटे कंकर अपार । सूखे तृण तिनके पग वि-दार ॥ रज उड़ि लोचन में परहि आय । काढ़ें न, न चाहें पर सहाय ॥

१८ मल परीषह ।

जल न्हौन तजो जावत सु एव । पुनि चलै अङ्ग में बहु पसेव । उठि के जु धूल लिपटे सुअङ्ग । तिनके सु-भाव वरते अभंग ॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह ।

जो विद्या निधि विजई महान । चिर तपसी गुनको

नहिं प्रमान ॥ नहि करहि विनय तिन की जु कोय। तो विकलप उर आनें न सोय ॥

२० प्रज्ञा परीषह हरिगीता छन्द ।

तर्क छन्द जु व्याकरण गुन कला आगम सब पढ़े। देखि जाकी सुमति वादी विलष लज्यो से गढे। सुनत जैसे नाद केहर बन गयन्द जु भाजही। महामुनि इमि प्रज्ञा भाजन रंच मद नहि छाजही ॥

२१ अज्ञान परीषह ।

करो दीरघकाल बहु तप कष्ट नानाविधि सहो। तीन गुप्ति सम्हार निश दिन चित्त छत वत नहिं बहो। अवध मनपर्य्यय जु केवल ज्ञान अज हूं नहि जगे। तजै इहि विधि साधु विकलप ते सुनिज आत्म पगे ॥

२२ अदर्शन परीषह ।

काल बहु व्रत नेम पाले सावधान रहे सदा। होय तप सो सिद्ध शिव की भूंठ भो लागे कदा ॥ यह भाव मुनि उरमें न आने परम समता धारेंही। सो आदर्श प-रीष विजई सकल कर्म निवारेही।

परीषह उदय सवैया ।

ज्ञानावर्णी के उदय प्रज्ञा व अज्ञान युग्म दर्शना

वर्ण तें अदर्शन वखानिये। अन्तराय के प्रकाश उपजै अलाभ जास वरनो चारित्र मोह सातों ठीक ठानिये। नग्न निषद्यारति स्त्रीक्रोस याचना सत्कार तिरस्कार जु एकादश जानिये। एकादश बाकी रही वेदनी उदय से कही वाईस परीषह सब ऐसी भांति मानिये।

अडिल्ल।

एक बार इन मांहि एक मुनिके कही। सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवें सही। आसन सयन विहार दोय इन मांहिने। शीत उष्णामें एक तीन ये नाहिं ने॥

ओं श्रीवीतरागाय नमः।

(२४) बाईस परीषह।

नन्दलाल कृत।

॥ लावनी ॥

१ क्षुधा परीषह।

थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥ टेक ॥ पष मास व्रती मुनिराज असनके काज नगर में जाते। विधि योग मिले नहीं जोय फिरें हैं सोय नहीं विल लाते॥ सहैं दु:ख से वेदना भूख जाय तन

सूख खेद नहीं लाते ॥ निज पौरुष सो कर यतन करें तप कठिन सीस हम नाते ॥

२ तृषा परीषह । झाड़ी ।

ग्रीष्म ऋतु गरमी भारी । तन दह दाह दुख कारी । तप तपें तपो व्रतधारी । फिर रैन छाई अंधियारी ।

३ शीत परीषह । शेर ।

सरदी समय सर ताल गिर पर बरफ ऊपर छा रहे । धर ध्यान तटनी तट प्रभू चौपट नित आतम ध्या रहे । जब जीव सब आवास कर ऋतु सरद से थर्रा-रहे ॥ नहीं शीत सो भय भीत तप में आप सो सुखिया रहे ॥ ४ ग्रीष्म परीषह । ढाल

तपै ऋतु ग्रीष्म ऊपर भान । वाय जिम लागै ती-दणवान । तपै भू तेज अग्नि समान । पशु पक्षी जा बैठ छांन ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे सब ताल सरोवर सूके । सुन प्यारे मुनि तपे शिखर गिर जूके । सुन प्यारे प्रभु ध्यान अग्नि अरि फूके ॥ शैर ॥ तजै काया सेती ममत निज-चेती सतमति ॥ विभौसारी त्यागी परम वैरागी शुभ गति ॥ वराजोरीं कर ठानें करमरिपु मानें दृढ़ मति । जपूं ऐसे ज्ञाता को मैं मस्तक निवाता वरजति ॥

५ दंशमशकादि परीषह ॥ चौपाई ।

डांस मासमाखी तन फारे । लिपटें विषियारे अति कारे ॥ सिंह स्याल गज राज दुखारे । देत कष्ट विन दे खाभारे ॥ तोड़ ॥ इस सहें परीषह नाथ न मोड़ें गात दयाचित आनी । थिर अचल मेरु सम रहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

६ नग्न परीषह । तोड़ ।

जब गृह बीच थे भूप संवारे थे सब कारज तनके । तन तनक उघारा जान शंक चित आन लजे जगजनसे । सो लख असार संसार परम पदधार रहे भगनसे । सहैं नग्न परीषह सार लहैं अविकार मुनि धन धन से ॥

७ रति अरति परीषह । झड़ी ।

द्रव्य इष्ट अनिष्ट निहारी । लख इन्द्रिनको दुःखकारी ॥ नहीं खेदलहैं व्रतधारी । धर ध्यान रहें अविकारी ॥ दोहा ॥ राग दोष नहि परसहें अरति परीषह जीत । ते गुरु मेरे उर बसो, शुद्ध परम परतीत ॥

८ स्त्री परीषह । शेर ।

सुरसुरी मानुष्यनी तिरयंचणी चित्राम की । लख त्रि-या चहु बिधि न उपजे रंच इच्छा काम की । मिलनेकी जिनको जो है गी आशा मुक्ति धामकी ॥ शीलव्रत·

धारी सो श्रीमुनि वन्दू मैं परनाम की ॥

९ चर्या परीषह । ढील ।

पुरुष पथ प्रथम देख कर चाल । चलें मुनि नीची दृष्टि निहार । नरम पग कठिन भूमि आधार । नहीं बाधा करते मन में ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे जे गज रथ घोटक चाले । सुन प्यारे ते पांवन चलें दयाले । सुन प्यारे पर रहे नग्न पग छाले ॥-१० थिर परीषह । चौपाई ।

गुफा मसान गिरन बन माही । ध्यान धरें जर समता नाही ॥ लख निर्दोष जगह, जम जाही । हिंगे न चाहे डिगावो काही ॥ तोड़ ॥ दृढ़ जीव द्रव्य पहिचान तजैं नहिं थान मुनीश्वर ध्यानी । थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहै मुनीश्वर ज्ञानी ॥

११ शय्या परीषह । तोड़

जो सोवे पै सुख सेज इलर आनेज सुफल फूलों में । ते सोवें भूमि कठोर लाकरी-ओरगड़े नित तनसे । इक आसन अचल शरीर रहै थिर धीर पड़ें पाहन मे । यों कठिन परीषह जीत भये जिन सीत नमू तिहूं पन मे ॥

१२ कुवचन परीषह । झड़ी ।

मुनिजन जग को सुखदाई । बिन कारण बन्धु भाई जिन्हें देख दुष्ट अन्याई । दुर्वचन कहें मन आई ॥दोहा॥ ऋषी भेष कोई चोर ठग कहे कोई कपटेश । धन्यमुनि यह बचन सुन क्षमा तजें नहिं लेश ॥

१३ बधबन्धन परीषह । शैर ।

रिपु से श्रीमुनि होय निर्भय उरमें समता धारते । दुष्ट तिनको बांध लाठी लात मुक्का मारते॥ पर बन्धते टूटा समझ चेतन गिने उपकार ते । सामर्थ्य ही बन्धते न सहें ते क्रोध जी नहीं धारते ॥

१४ अयाची परीषह । ढौंल ।

घोर तप करैं तपी तप धाम । गयी गलसूख बांह-और चाम । अस्थि पर नहीं मांस को नाम । प्रगटनस जालभयो तन में ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे औषध अन्नादिक पाना । सुन प्यारे मांगे न डिगे चाहे प्राना । सुन प्यारे मुनि अयाचीक व्रतमाना ॥

१५ अलाभ परीषह । चौपाई ।

भोजन समय एक वर मौनी । बस्ती में जाते अघधौनी ॥ जो विधि जोग मिले नहीं होनी । तौ फिर ध्या

न धरैं गुन ग्रौनी ॥ तोड़ ॥ यों अभय भवित सबजात भावना भात अषेधन ध्यानी । थिर अचल मेरु समर हैं परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

१६ रोग परीषह । तोड़ ।

कफ श्रोणित पित उत्पात कठिन अधिकात बेदनालाते
कष्टादिक रुचिसों लीन जगत जन दीन अति विललाते
धन मुनी मेरु सम धीर सहैं यह पीर सीस हस नाते
निज पर सों प्रीति न जान रोग बलहान सुधन गुणगाते

१७ तृण फांस परीषह ॥ झड़

तीक्ष्ण कांटे तिन कोरे । पग नगन कांकरी फोरे ॥ रज उड आंखन में बोरे । तीर आदि फांस तन तोरे ॥ दो० तो भी न काढ़ैं हाथ से चहें न पर उपकार । बिजयी परीषह यों सहें, पर सन्मुख मुखधार ॥

१८ ग्लानि परीषह । शर ॥

जिस तन के चन्दन मुश्क तेलादिक लगैथा आनके । तिस तन को नांगा कर दहें तपकर बचें अस्नान से ॥

१९ मान अपमान परीषह । ढील ।

विजयकी विथा न मनमें मान शांत रस रसिया गुण की खान । न तिन की विनय करत अज्ञान । मूढ़ शठ

तनक न मन सोचे॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे सत्कार परीषह हाने। सुन प्यारे ते गुरू हमने पहिचाने ॥

२० प्रज्ञा परीषह चौपाई।

तर्क छन्द व्याकरण बखाने। आगम अलंकार पढ़ जाने जिन्हें देखवादी भय मानें। ज्यों हैं मुनिवर सब गुण खाने ॥ तोड़ ॥ यों प्रज्ञा परीषह हान करैं नही मान जगत हित हानी। थिर अचल मेरु सम रहें परीषह सहै मुनीश्वर ज्ञानी ॥

२१ अज्ञान परीषह। तोड़।

तप सयम चारित्र पाल गंवायोकाल गुप्ति तिहुं पाली नही अवधलई सुख दान न केवल ज्ञान हुं अब तक खाली ॥ यह करत न विकलप नीत धरम सों प्रीत न तजते लाली। अज्ञान परीषह जीत रायरुख बीत किया षट पाली ॥

२२ अदर्शन परीषह। झड़ी।

मैं घोर किया तप भारी। नहीं भया कोई व्रतधारी यो सुनियत ग्रंथ मझारी। तपसे ऋद्धि सिद्धि सुखकारी ॥ दोहा ॥ सो कुछ लागै झूठसी, यह नही चिंतत रंच विजय अदर्शन ते मुनि, पूजूं छोड़ परपंच ॥

शेर ।

यो सहैं बाईस परीषह परम गुरु पद धारके । सूत्रके अनुसार मैं भाषैं परम हितकारके । वीनती गुनियो से है यह भूल चूक सुधार कें । शोधकर दो शुद्ध मुझ को बाल बुद्धि निहार के ॥ ढील ॥ आप तिर तारे भविजन आन ॥ भवो दधितारण तरण सुजान ॥ धर्म दशधार धरें सुर ज्ञान । लगी लौ जिनकी शिवपुर से ॥ झड़ी सुन प्यारे अठवीस मूल गुण धरते । सुन प्यारे नहि तन सो ममता करते ॥ चौपाई ॥ अब दरशन प्रभु हमको दीजे । करम रोग को दूर करीजे ॥ जगत् बन्धु से भिन्नता कीजे । अरज मेरी यह ही सुन लीजे ॥ तोड़ ॥ यों नवत जोड़ नन्दलाल करोप्रतिपाल महिमा बखानी थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहै मुनीश्वर ज्ञानी

इति बाईस परीषह सम्पूर्णम् ।

२५ प्रश्नोत्तर ॥

श्री नेमनाथ जी और राजुलजी के ॥

विनवै उग्रसेन की लाडली कर जोरके नेमके आगे खड़ी । तुम काहे पिया गिरनार चढ़ [illegible]

चूक पड़ी ॥ यह समय नहीं पिय संयम को तुम काहे को ऐसी चित्त धरी । कैसे बारह मास बिताओगे तुम समझावो मोहि को सगरी ॥ १ ॥

तुम आगे अषाढ़ में क्यों न लिया व्रत काहेको एती बरात बुलाई । छप्पन कोड़ जुड़ी यदुवंसी व्याहन आये निशान बजाई ॥ सग समुद्रविजय बलभद्र मुरारिहु की तुम्हें लाजन आई । नेमिपिया उठि आवो घरै इन बातन में कहो कौन बड़ाई ॥ २ ॥ बड़ाई कहा करिये सुनि राजल जी वन है निश को सुपनो । सुत बन्धु बधू सब जात चले जल बून्द जैसे तन है अपनो । दिन चारक के महमान सबैं थिरता न कछू सब है खिपनो । तिहते यह जान अनित्य सबैं हमरे अब सिद्धनको जपनो॥३॥

पिया सावन में व्रत लीजे नहीं घनघोर घटा जुर आवेंगीं । चहुं ओर तें मोर झकोर करें बन कोकिल कहक सुनावेंगी ॥ पिय रैन अंधेरी में सूझे नही कछू दामन दमक डरावेंगी । पुरवाई की झोक सहोगे नहीं छिन में तप तेज छुड़ावेगी ॥ ४ ॥ या जीव को कोई न राखनहार कहो किसकी शरणागत जैये । कालबली सब से जग में तिस ते निशिवासर देख डरैये ॥ इन्द्र

नरेन्द्र धनेन्द्र सबै जब आन परै तब बोध चलैये । यातैं कहा डर सावन को सुन राजल चित्त को यो समझैये ॥ ५ ॥ पिया भादव की बरषा बरषै कैसे दिन रैन गमावोगे । चहुं ओर तैं पौन झकोर करै तब क्यों कर बूंद बचावोगे। घर ही क्यों न आय के योग करो बन मे बहुते दुःख पावोगे । कहे राज मती पिय मान कह्यो शिव सुन्दर यो नहीं पावोगे ॥ ६ ॥ या जग में सुख नैकन राजल दुःख में काल अनत गवायो । योनिहिं लाख चौरासी फिरो गत चारूं ही जाय महा दुःख पायो। रोग ही शोक वियोग भरे फिर जामन मरण अनेक सतायो । भादव की बरषा किन मे हम नरक निगोदन में फिर आयो ॥ ७ ॥ पिय लागेगो मास असोज जबै तब शीतल बून्द सुहावगी । कितहूं गर्जै कितहूं बरषै कितहूं दुति चन्द दिखादैगी ॥ कित वायु बहे कित ग्रीष्मता कित में ऋतु तीन जनावेगी । कहे राजमती पिय मान कह्यो छिन्द ही छिन चित्त डुलावेगी ॥ ८ ॥ कैसेक चित्त डुलै सुन राजुल एक से एक समाधि लगावे । एक फिरे तिहूं लोक मे हडत एक बिना फिर एक न पावे ॥ जन्म जहा तहां है एकाको इकलो बिढ़वे

श्रकलोई गंवावे । श्रावत जात श्रकेलो रहै यह श्रादि श्रनादि श्रकेलो ही ध्यावै ॥ ९ ॥

पिय कातिक में मन कैसे रहै जब भामिन भौन बनावेंगी । रचि चित्र विचित्र सुरंग सबै घर ही घर मङ्गल गावेगी ॥ पिय नूतन नार सिंगार किये श्रपनो पिय टेर बुलावेंगी । पिय बारहिवार बरै दियरा जियरा तुमरा तरसावेंगी ॥ १० ॥ तो जियरा तरसै सुन राजल जो तन को श्रपनो कर जाने । पुद्गल भिन्न है भिन्न सबैं तन छाड़ि मनोरथ श्रान समाने ॥ बूडैगो सोई को लिधार मे जड़ चतन को जो एक प्रमाने । हंस पिव पय भिन्न करे जल सो परमातम श्रातम जाने ॥ ११ ॥

हिम को ऋत श्रावगो नाथ जबै तब शीतल पौन सुहावैगो ॥ तब शीतल नीर समीर लगै तन श्रम्बर प्रीत जनावैगी । सब भोजन पान सुहान लगै सगरे तनुताप बुझावैगी ॥ कहे राजमती श्रगहन जबै ऋतु नायक लायक श्रावैगी ॥ १२ ॥ यह देह श्रपावन खेह भरी सुन राजल यामे कहा थिर है । यह चामकी चादर श्रोट दिये इस में कृमिकीटन को घर है ॥ यह सूतन पीब परीख भरी यह हाडर पिजर को घर है । तिस तैं इस का हम नेह तज्यो हम को श्रब शीत को का डर है । १३ ॥

पिय पौष में जाड़ो परैगो घनो बिन सौड़ के शीत कैसे भरं हो। कहा ओढोगे शीत लगै जब ही किधौं पातन की धवली धर हो॥ तुमरो प्रभु जी तन कोमल है कैसे काम की फौजन सो लरहो। जब आवैगी शीत तुरङ्ग सबैं तब देखत ही तिन को डर हो॥ १४॥ आ-स्रव होय जहा पर शोभित शीत लगै और पौन झ-कोरै। इन्द्रिय पंच पसाव जहां तहां रागरुद्वेष सो नातो ही जोरै॥ आठ महामदमाते रहैं परद्रव्य को देख जहा चित्त दोरै। जो पर आप विचारन राजल तो यह आपतैं आप ही बोरै॥ १५॥

पिय माघ तुषार परैगो घनो तब पाथर से परिहौ गिरकै। यह मानुष देह कहा वपुरी बिन अम्बर शीत नही ठरकै॥ कि न पावक होय सहाय जहा नहीं शीत तुषार नही हरकै। राजमती उठ मान कह्यो जु समैसिर योग लियो फिरकै॥ १६॥ संवर अम्बर में रह राजल शीत तुषार अनन्त बचाऊ। रागद्वेष वयार वहै तब छाय छमा तन जानि छवाऊं। इन्द्रिय पांच नि-रोध किये करुणा करके मद आठ गवाऊ। आप लखै परद्रव्य तजों समता गहिके मन को समझाऊं॥ १७॥

लागेगो फागुन मास जबै तब गावगी चहुंओर तें होरी। केसर कीं पिचकारी लिये कर फैंकें गुलांलन की भर झोरी॥ गावत गीत धमार वजावत ताल मृदङ्ग लिये डफ गोरी। भूलोगे पिया तब बात सबै जब खेलन आवेगी सब होरी॥ १८॥ हम होरी खेलें सुन राजलयों अपने घर ऐसे खेल मचाऊं। पाच सखी अपने संग लेकर द्वादश भान्त के नाच नचाऊं॥ पांच सखी अपने सग लेकर निर्जरा से सब कम जराऊं। खेलरचों शिव सुन्दर सों मैं तो आठाह कर्म को धूल उड़ाऊं १९

पिय लागेगो चैत वसत सुहावनो फूलैगी वेल सबै बनराई। फूलेगी कामन जाको पिया घर फूलेग फूल सबै बनराई॥ खेलहिंगे ब्रज के बन में सब बाल गोपाल कुंवर कन्हाई। नेमि पिया उठ आवो घरै तुम काहेको करहो लोग हंसाई॥२०॥ तीनहुं लोक को जानें सबैं पुरुषाकर चौदह राज ऊंचाई। ताके कहूं घनाकार सबे तीन से तेतालीस है चौराई॥ वात वलैंन सैं। वेढय रहयो हरता करता न कोई ठहराई। यह आदि अनादि से आयो चर्यौ सुन राजल या में कहा है हसाई॥ २१॥

पिय मास वैशाख की ग्रीष्मता ऋतु शीतल नीर को प्यास लगैगी । क्यों गिरि पै रहो नाथ मेरे अति घाम परै सब देह दहैगी ॥ ऐसे कठोर भये कब तैं ममता तजके सब प्रीति पगैगी । नेमि पिया उठआवो घरै सुन एकहि बार न सिद्धि जगैगी ॥ २२ ॥ धर्म से सिद्ध नजीकहै राजल धर्म्म किये तैं कहा नही आवैं । धर्म तै इन्द्रनरेद्र धनेंद्र सुरेन्द्रन का सब ही पद पावैं॥ धर्म सुदर्शन ज्ञानचरित्रकरे तिहितैं शिव मार्ग पावैं । धर्म महत बड़ो जग में जहां जीव दया तहां धर्म कहावैं ॥ २३ ॥ धर्म की बाततो सांची है नाथ तपै जेठ में कैसे धर्म रहेगो ! लूह चलैं सरबान कमान ज्यों घाम परै गिर मेरु दगगो ॥ पक्षी पतङ्ग सबैं डरहैं अपने घर को सब कोई चहेगो । भूख तृषा अति देह दहे तब ऐसो महाव्रत क्योंन बहेगो ॥ २४ ॥ दुर्लभ है नर को भव राजल दुर्लभ श्रावक योनि हमारी । दुर्लभ धर्म जुहै दश लक्षण दुर्लभ षोड़श भावना भारी॥ दुर्लभ श्री जिनराज को मार्ग दुर्लभ है शिव सुन्दर नारी । यह सब दुर्लभ जान तबैं जब दुर्लभ है सन्यास की न्यारी

॥२५॥ बारह मास जे पूरे भये तब नेमिह राजल जाय सुनाये। नेमिहि द्वादश भान्ति तबैं उठपीछे सों राजल को समझाये ॥ राजल ने तब सयमले सब निर्जरा के बसुकर्मजराये। राजल के पति नेमि जिनेश्वर उत्तर लालबिनोदी ने गाये ॥ २६ ॥

॥ इति सम्पूर्णम् ॥

२६ नेमिब्याह, खेमचंद कृत।

दोहा–समुद्र विजय यादवनृपति तिन सुत नेमुकुमार। जूनागढ़ब्याहन चले उग्रसेन दरबार ॥१॥ रेखता ॥

साज गजराज बाज व्याह को चले। यादव बहुरंग संग साथ हैं गले ॥ नाचें बहुविधि अनेक बाजे बाजें। खग पशु बिलखाय कहो किसके काजे ॥ तिनकी पुकार सुनी करुणा आई। कारण यह बात कहो कौन सुनाई स्वारथी पुकारे सुन साहिब मेरे। इन सब का घात होय कारण तेरे ॥ १ ॥ दोहा ॥

सुनत बात ठाढे भये जीव दये छुड़वाय। हम अपराध क्षमा करौ मिलियो बिछुड़े जाय ॥ रेखता ॥

उतर आप रथ से सब जीव छुड़ाये। हमरे इस काम प्राण बहुत सताये ॥ डारे कपड़े उतार कंकण तोड़े।

छोड़ो संसार प्रेम तप से जोड़ो ॥ छोड़ सब तात मात बात विचारी। छोड़ घर द्वार सबे राजुल नारी॥ छोड़ सब भोग योग चित मे दीनों। चढ़ के गिरिनारि महाव्रत को लीनो ॥ २ ॥ दोहा ॥

सुधि पाई धाई गई राजुल करति पुकार। नेमि पिया गिरि को गये कौन उतारे पार ॥ रेखता॥

किया किन प्रपंच बात कौन यह भई। कौन हेतु दिक्षा इस वयस में लई ॥ तीर्थंकर प्रथम और बहुत तो भये। करके तिन भोग योग जाय फिर लये॥ जैहों पिय पास सुनों बात हमारी। हमरे भरतार मोह बिछुड़न डारी ॥ भई मैं उदास आस पति की लागी। जाऊं गिरिनारि आस सब की त्यागी ॥ २ ॥

दोहा—धैर्य धर मेरी धिया मत मन मे पछताहि। सुन्दर सो वर ढूंढि के ताको देउ विवाह ॥ रेखता ॥

ढूढो भूखड नगर द्वीप घनेरे। ढूंढों भू चार खूट कारण तेरे ॥ विप्र को बुलाय फेर लग्न लिखाऊ। नोतों सब भूप व्याह फेर रचाऊं॥ लीनो उन योग जात कहा सो भई। अपने घर आय बैठ मानले कही ॥ रूप को

निधान देख गुण को भारी। ताको परनाय देउ राजुल प्यारी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥

कहिये बात बिचार के सुनिये तात सुजान। बात कहत ऐसे लगो दाहत हो मो प्राण ॥ रेखता ॥

काहे मति चालि गई तात तुम्हारी। आवै ना लाज कहत मुख से गारी ॥ तुम्हारे परिणाम और सब को मानो। मेरा भर्त्तार एक यदुपति जानो। लिखी जो ल लाट नहीं मेटै कोई। जैसी कुछ होनहार तैसी होई ॥ बोलते कुबोल सुनो कैसे तेरी। जैहों गिरनारि बात सुन ले मेरी ॥ ५ ॥ दोहा ॥

लगनि लगी प्रभु नेमि से चित्त धरे ना धीर।
जैसे मीन पपीहरा तड़फत है बिन नीर ॥ रेखता ॥

ल्यावे प्रभु को मनाय जग मेंकोई। ताकी बहुभांत भांति कीरति होई ॥ लागी मो प्रीति कछू और न भाव। मेरा भरतार कोई आन मिलावे ॥ अब तो तहां जाउ जहा नाथ हमारे। चाली उस पन्थ जहां कन्य पियारे ॥ पक्षी पशु जंतु कछू देखत नाहीं। चाली प्रभु पास धसी बनके माहीं ॥ ६ ॥

दोहा-गिरत परत धाई चली पहुंची गिर के पास।
प्राणरहे घट में खंगे नेमि पिया के पास॥
रेखता—पहुंची प्रभु पास लगी आस तुम्हारी। बोली जिन राज सुनो बात हमारी॥ लागो अपराध कहा मेरेतांई खोलो टुक नयन वचन बोलो साई॥ सुनी है पुकार नाथ जीवों केरी। ठाढ़ी बिलखात बात सुनिये मेरी॥ ७॥ दोहा—आई तुम्हे चितारि के देखत भई निहाल कर जोड़ों विनती करों हम पर होहु दयाल॥ रेखता।
हूजिये दयाल चलो नगर आपने। कीज सब राज काज सुक्ख से घने॥ कीजे सब सुख सुभोग विनवे नारी। नातर पछिताउ याद करो हमारी॥ लागो प्रभ तुम से अतिप्रेम हमारो। मनमे दिन रात्रि जपों नाम तुमारो काहे अनबोल भये बोलत नाईं। कहति हों पुकार अवं सुनिये साईं॥ ८॥ दोहा॥
नेमि कुमर उत्तर दियो सुनले राजुल बात। राज करो सुख भोगवो हम गिरि से ना जात॥ रेखता॥
अब तो तुम लौट जाव देश आपने। कीजो सब राज काज सुख से घने॥ छोड़ो घर जाउ सर्व आस हमारी। लीनो हम योग लगी मुक्ति पियारी॥ तोड़ो

सब चित्त से स्नेह हमारो। मानो यह सीख बात चित बिचारो ॥ जो थी भवितव्य भई सो तुम जानो। लौटो तुम ग्रह वात हमारी मानो ॥ ९ ॥ दोहा।

राजमती उत्तर दियो सुन लीजे भर्त्तार। राज करो सुख भोगवो बिनती सुनो हमार ॥ रेखता ॥

बारी है बयस अभी नाथ तुमारी। ऐसी क्या जान बात चित्त बिचारी ॥ खांड़ेकी धार योग जानिये सही। कैसे तप होय मान लो कही ॥ ऐसो मन में बिचार हतो तुमारो। काहो मंजूर ब्याह करो हमारो ॥ मांगत हों वात एक हमको दीजे। हूंजिये दयालु और यश को लीजे ॥ १० ॥ दोहा ॥

नेमि कुमर उत्तर दियो सुन राजुल यह बात। भोग बुरे भव रोग हैं देखो सब ससार ॥ रेखता ॥

खोटे भव रोग भोग होत ये घने। देखो करके वि-चार चित्त आपने। सोवतज्यों स्वप्नरैनिनधनदेखियो। तैसो ससार सवे सुख सुलेखियो। छोड़ी जग रीति प्रीति योगसे भई। पायो तिन सुख सुमुक्ति कामिनी लई ॥ ऐसी हम जानी तब बात विचारी। मानो यह सीख सुनो राजुल नारी ॥ ११ ॥ दोहा

भागभलो या योग है देखो इस संसार। बार बार बहु को कहो देखो चित्त विचार ॥ रेखता ॥

राजुल कर जोड़ कहै सुनो हमारी। आस तो निरास भई नाथ तुम्हारी ॥ लागी बहु प्रीत नही छूटत साई। अबतो हम जाय शरण किसके लाई ॥ दिक्षा निज देवे सीख गहों तुम्हारी। बूड़ति भवसिंधु बाह गहो हमारी ॥ लीनो योग साधि स्वर्ग सोलहे गई। अशुभ कर्म जालि सुगति देवकी लई ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

नेमीश्वर केवल लयो महिमा कही न जाय। गणधर पार न पावही कवि क्यो कहै बनाय ॥ रेखता

आश्विन सुदि एकम को केवली भये। आय चउ प्रकार देव चरण तल नये ॥ रत्न मयी शमोशरण रचना कीना। भक्ति ठान सुरपद का लाहो लीना ॥ सोहे श्याम रंग शंख लक्षण सूरे। इन्द्र कहे सहस्र नाम गुणके पूरे ॥ कमलासन तीन छत्र सिर पर सोहे। शोक रहित देख २ सुर नर मोहे ॥ १ ॥ दोहा

दोष अठारह रहित प्रभु रहित सुगुण छालीस। चौसठि चमर विशाल अलि ढोरत सुरपति ईश ॥

॥ रेखता ॥

गावैं सुर कंठ देव तूर वजावैं । झालर मिरदंग ताल बहुत सुहावैं ॥ देवी सब देवकरैं नृत्य आयके । पुजत जि राज अष्ट द्रव्य लायके ॥ नाशिके अघाति चार शुद्ध परणये । आषाढ सुदी अष्टमी को मुक्त प्रभु भये ॥ खेम तो बनाय कहै सुत्तम बानी । तुम्हारी महिमा अपार जग में जानी ॥ १४ ॥ इति समाप्तम् ।

॥ सवैया ॥

२७ नेमि व्याह, विनोदीलालकृत ।

मौर धरो शिर दूलह के कर ककण बाध दई कस डोरी । कुंडल कानन में झलकें अति भाल मे लाल विराजत रोरी ॥ मोतिन की लड़ शोभित है छवि देखि लजैं बनिता सव गोरी । लाल बिनोदी के साहिब को मुख देखन को दुनिया उठ दोरी ॥ १ ॥ छत्र फिरे शिर दूलह के तब बारत रत्न शिवादेवी मैया । कृष्ण इते बलभद्र उतैं कर ढोरत चमर चले दोऊ भैया ॥ भूप समुद्र विजय सब संग चले बसुदेव उछाह करैया लाल विनोद के साहिब की बनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥ २ ॥ गैंहे गये जब नेम प्रभू पशु पछिन

खेंच पुकार करी है । नाथ से नाथनके प्रतिपाल दया-
ल सुनो विनती हमरी है ॥ बन्दि पड़े बिललाय सबे
विन कारण बिपदा आनि परी है । पूछत लाल वि-
नोदी के साहिब सारथी क्यों इन बन्दि भरी है ॥३॥
सारथी ने कर जोड़ कही सुन नाथ इन्हें जु विदारेंगे
अब । यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब मारेंगे
अब ॥ अब इन के बच्चा वन में बिलपे इन को वे
आज सहारेंग अब । तःते तुम से फर्याद करें हमारी
गति नाथ सुधारेगे अब ॥ ४ ॥ बात सुनी उतरे रथ से
पशु पक्षिन की सब बन्दि छुड़ाई । जावो सब अपने
थलको हमरो अपराध क्षमा करो भाई ॥ धृक् है ऐसो
जीनो जगमे तबहों प्रभु द्वादश भावना भाई । देव
लोकान्तिक आय गये जिन धन्य कहैं सब यादवराई
॥ ५ ॥ प्रभु तो बिन ऐसी कौन करे औ को जग मे यह
बात बिचारे । कौन तजे सुत बन्धु बधू अरु को जग
मे ममता निर्वारे ॥ को वसु कर्मनि जीत सके जनु आप
तरे अरु औरन तारे । लाल विनोद के साहब ने यश
जीतलयो जग जीतन हारे ॥ नेम उदास भये जबसे
कर जोड़के सिद्ध का नाम लयो है । अम्बर भूषण डार

दिये शिर सौर उतार के डार दयो है। रूप धरी मुनि का जबही तबही चढ़िके गिरि नारि गयो है। लाल विनोदी के साहिब ने तहां पंच महाव्रत योगठयो है ॥ ७ ॥ नेम कुमार ने योग लियो जब होने को सिद्ध करी मन इच्छा। या भव के सुख जान अनित्य सो आदर एक उदछ की भिक्षा ॥ स्नेह तजो घरबार यजो नही भोग विलासन की मन शिक्षा। लाल विनोदीके साहब के संग भूप सहस्र लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहू ने जाय कही सुनी राजुल तेरो पिया गिरनारि चढ़ो है। इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती जीव कढो है ॥ सो उग्रसेन से जाय कही सुन लाल विधाता अनर्थ गढ़ो है। लाज सबै सुध भूल गई पिय देखनको जु उछाह बढ़ो है ॥ ९ ॥ लाड़ली क्यों गिरनारि चढे उस ही पति तुल्य सुधी वर लाऊं। प्रोहित को पठऊ अबही बहु भूपर के सब देश ढुंढ़ाऊ ॥ व्याह रचो फिरि के तुम्हरो महि मंडलके सब भूप बुलाऊं। लाल विनोदी के नाथ बिना द्युतिवंत सो कंत तुझे परणां- ऊं ॥ १० ॥ काहे न बात सम्हाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है। [illegible] बालक हो तुम को ननो

तात भली तुन जीम चली है ॥ मैं सब को तुम तुल्य गिनों तुम जानत ना यह बात रली है। या भव में पति नेमि प्रभू वह लाल विनोदी को नाथ वली है ॥ ११ ॥ मेरो पिया गिरिनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरि नारि चढ़ोंगी। संग रहों पिय के वन में तिनही पिय को सुख नाम पढ़ोंगी ॥ और न बात सुहाय कछू पियकी गुणमाल हिये में मढ़ोंगी। कंत हमारे रचे शिव से शिव थान को मैं भी सिवा न गढ़ोंगी ॥ १२ ॥

॥ इति ॥

२८ आरतीसंग्रह ।

प्रथम आरती ॥

यह विधि मंगल आरती कीजे। पञ्च परम पद भजि सुख लीजे ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्री जिनराजा। भव दधि पार उतार लिहाजा। १। दूजी आरती सिद्धन केरी। सुमरण करत मिटै भव फेरी।२। तीजी आरती सूर मुनिन्दा। जनम मरण दुःख दूर करिन्दा।३। चौथी आरती श्री उवज्झाया। दर्शन देखत पाप पलाया। ४। पांचवी आरती साधु तुम्हारी। कुमति

विनाशन शिव अधिकारी । ५ । छट्टी ग्यारह प्रतिमा धारी । श्रावक बन्दों आनन्दकारी । ६ । सातवी आरती श्रीजिन वाणी । द्यानत स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ।७।

द्वितीय आरती ॥

आरती श्रीजिनराज तुम्हारी । कर्म दलन संतन हितकारी । टेक । सुर नर असुर करत तव सेवा । तुमहीं सब देवन के देवा । १ । पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे । राग दोष परिणाम विडारे ।२। भव भयभीत शरण जे आये। ते परमार्थ पन्थ लगाये ॥ ३ ॥ जो तुम नाम जपै मन माहि । जन्म मरण भय ताको नाहिं । ४ । समोशरण सम्पूर्ण शोभा । जीते क्रोध मान मद लोभा । ५ । तुम गुण हम कैसे कर गावैं । गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥ ६ ॥ करुणासागर करुणा कीजे । द्यानत सेवक को सुख दीजे ॥ ७ ॥

तृतीय आरती ॥

आरती कीजे श्रीमुनिराजकी । अधम उधारन आतम काज की ॥ टेक ॥ जा लक्ष्मी के सब अभिलाषी सो साधन कर्दम वतनाखी । १ । सब जग जीति लियो जिन नारी । सो साधनि नागिनि वत छारी ।२। विषयन सब जग को वश कीने । ते साधन विषवत तज

दीने । ३ । भुञ्जो राज चहत सब प्राणी । जीर्ण तृणवत त्यागो ध्यानी । ४ । शत्रु मित्र सुख दुख सम माने । लाभ अलाभ बराबर जाने।५।छहों काय पीहर व्रतधारें सबको आप समान निहारैं ।६। यह आरती पढ़ैं जो गावैं । द्यानत मन वांछित फल पावैं ॥७॥

चतुर्थ आरती ॥

किस विधि आरती करों प्रभु तेरी । अगम अकथ जस बुध नहि मेरी ॥ टेक ॥ समुद्र विजै सुत रज मति छारी । यों कहि थुति नहिं होय तुम्हारी १ कोटि स्तम्भ वेदी छबि सारी । समोशरण थुति तुमसे न्यारी २ चारि ज्ञान युत तिनके स्वामी । सेवकके प्रभु अन्तर्यामी ३ सुन के वचन भविक शिवजाहिं । सो पुद्गलमें तुम गुण नाहि ४ आतम जोति समान बताऊ । रवि शशि दीपक मूढ़ कहाऊ ५ नमत त्रिजग पति शोभा उनकी तुम शोभा तुम में निज गुणकी ६ मानसिंह महाराजा गावे । तुम महिमा तुम ही बन आवे ॥

पञ्चम आरती ॥

यह विधि आरती करूं प्रभू तेरी । अमल अबाधित निज गुण केरी ॥ टेक ॥ अचल अखड अतुल अ-

खेलत फाग प्रवीना ॥ टेक ॥ दया बसंत सखा दश लाक्षण समकित रंग जु कीना । ज्ञान गुलाल चारित्र अरगजा शील अतर में भीना ॥१॥ ध्यानानल आस्रव होरी दाबंध त्रपत कर खीना । निर्जर नेह मुकत धन फगुआ निज परणति को दीना ॥ २॥ गंगा मन आनन्द भयो है सब विकलप तज दीना । जिन सर्वज्ञ नाथ प्रभु आगे नाम निरन्तर लीना ॥ ३ (होली)

निज पुर में आज मची होरी ॥ टेक ॥ उमगि चिता नंद छति जुरिआये उत आई सुमती गोरी ॥ १ ॥ करुणा केसर रंग बनाओ चारित पिचकारी छोरी ॥ २ ॥ देखन आये वुध जन भीजे देखों फाग अनोखोरी ॥३॥

होली—अरे मत खेल खिलारी-फाग रची ससारी ।टेक॥ काम क्रोध दोऊ छैल छबीले कुमति हाथ पिचकारी । पाप कीच बहु भांति भरी है देत वदन पर डारी ॥१॥ मोह मृदंग मजीरा मान मद लोभ तमूरा चारी। आसा तृष्णा निरत करत है लेत तान गति न्यारी ॥ २ ॥ पांच पचीस कामिनी घट में गावत मन सो गारी। झगड़ २ मिलि फगुआ मागत भाव बतावत भारी ॥३॥ खेलत खेल युग वहु वीते अव जिय भयो दुखारी । मेवाराम जैन हित होरी अब की बेर हमारी ॥ ४ ॥

॥ होली ॥

कहा वानि परी पिय तोरी—कुमति संग खेलत है नित होरी ॥टेक॥ कुमति कूर कुबिजा रंग राचो लाज शरम सब छोरी। रागद्वेष भय धूलि लगावे नाचे ज्यों चकड़ोंरी ॥१॥ अक्ष विषय रग भरि पिचकारी कुमति कुत्रिय सरबोरी। जा प्रसंग चिर दुखी भये फिर प्रीति करत बर जोरी ॥२॥ निज घर की पिय सुधि विसारि के परत पराई पोरी। तीन लोक के ठाकुर कहियत सो विधि सबरी बोरी ॥ २ ॥ बरजि रही बरजो नहि मानत ठानत हठ वरजोरी। हठ तजि सुमति सीख भजि मानिक तो बिलसो शिव गोरी ॥ ४ ॥

॥ होली ॥

छांड़ि दे तू यह बुधि भोरी-वृथा पर सो रत जोरी ॥टेक॥ जे पर हैं न रहैं थिर पोषत जे कल मल की झोरी। इन सों करि ममता अनादि ते बंधे कर्म की डोरी। सहे भव जलधि हिलोरी ॥ १ ॥ बे जड़ हैं तूं चेतन ज्योंही आप बतावत जोरी। सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप इन सत्संग रचोरी॥ सदा विलसौ शिव गोरी ॥२॥ सुखिया भये सदा जे नर जासों ममता

टोरी। दौल हिये अब लीजे पीजे ज्ञान पियूष कटोरी। मिटै भव व्याधि कठोरी॥ ३॥

॥ होली काफी॥

छैल चिक्किल कैसी होरी मचाई॥ टेक॥ देशी रीति लिवास छांड़िके कोट लिये सिलवाई। खुले अगाड़ी कटे पिछाड़ी टोपी गोल जमाई। घड़ी आगे लटकाई॥छैल० ॥ १॥ बूटदेव को पहिन पांव में तनियां लीन्ह कसाई। बैठन नहिं पतलून देत है ठाड़े करत मुताई। धन्य अङ्गरेजी आई॥ छैल०॥ २॥ टेढ़ा डंडा हाथसाथ में बंडा श्वान सुहाई। गले गुलूबन्द कालर डटके मुख मे चुरट दबाई। धुआं फक फक्क उड़ाई॥ छैल०॥ ३॥ घर में जा अंगरेजी बोलें समझत नाहि लुगाई। मागें वाटर देती है रोटी बोल उठे झुंझलाई। डेमयू क्या ले आई॥ छैल०॥ ४॥ कौन बनावे रंग वसन्ती कौन गुलाल उड़ाई। स्याही की डबिया हाथ बुरुस है करते हैं बूट सफाई। छोड़ के सलेमसाई॥ छैल०॥ ५॥ सातों जाति मिक्किल कर वैठे दूर भई पण्डिताई। गिट पिट मिस्टर होटल जावें मदिरा मटन उड़ाई। लेडी से आख लड़ाई॥ छैल०॥ ६॥

इति सम्पूर्णम्॥

(३०) प्रभाती संग्रह ।

(प्रभाती)

बंदों जिन देव सदा चरण कमल तेरे । जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे ॥ टेक ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन केरे । सुमति पद्म श्री सुपार्श्व चन्द्राप्रभु मेरे ॥ १ ॥ पुष्पदन्त शीतल श्रयांस गुण घनेरे । बासपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे ॥ २ ॥ शांति कुंथ अरह मल्ल मुनि सोव्रत केरे । नमि नेमि पार्श्वनाथ महावीर मेरे ॥ ३ ॥ लेत नाम अष्टयाम छूटत भव फेरे । जन्म पाय जादौराय चरनन के चेरे ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

उठि प्रभात सुमिरन कर श्रीजिनेन्द्र देवा ॥ टेक ॥ सिंहासन झिलमिलात तीन छत्र शिर सुहात चमर फर हरात सदा भविजन भजेवा ॥१॥ भेंट श्री पार्श्व जिनेन्द्र कर्मके कटें जुफन्द अस्वसेनके जुनन्द वांमा सुखदेवा ॥२॥ बानीतिहू काल खिरे पशुवन पर दृष्टि परे नमत सुरन सुनीन्द्रादिक चरन शीस नेवा ॥३॥ प्रभुके चरणार्विन्द जपत हैं जवाहर चन्द्र कर जोरें ध्यान धरें चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

पारस जिन चरण निरखि हरष ज्यों लहायो । चित

वत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घन घोर सोर मोर के न हरष और रंक निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥ १ ॥ ज्यों जन चिर क्षुधित कोय भोजन लहि सुखित होय भेषज मद हरन पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ वासर धनि आज दुरित दुरे फिर सुकृत आज शान्ताकृत देखि महामोह तम बिलायो ॥३॥ जाके गुन जानन शोभानन भव कानन इमि जान दौल सरन आय शिव सुख ललचायो ॥४॥ (प्रभाती)

प्रातकाल मन्त्र जपो णमोकार भाई । अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदय में धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पातिक टरजाई । विघन जासु दूर होत संकट में सहाई ॥१॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्तामणि जाई । ऋद्धि सिद्धि पारस तेरे में प्रगटाई ॥२॥ मन्त्र जन्त्र तन्त्र सब जाही के बनाई ॥ सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥३॥ तीन लोक माहिं सार वेदन में गाई । जग मे प्रसिद्ध धन्य मंगलीक भाइ ॥ ४ ॥ (प्रभाती)

परणति सब जीवनकी तीन भांति वरणी । एक पुण्य एक पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जा में शुभ अशुभ बन्द वीतराग परणति भव समुद्र तरणी ॥ १ ॥ छांड़ि

अशुभ क्रिया कलाप मत करो कदाचि पाप शुभमें न मगन होय अशुद्धता बिसरणी ॥ २ ॥ यावत् ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावत ही करण योग कही पुण्य करणी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र जा प्रकार जीव लहें सुख अपार या को निराधार स्यादबादकी उचरणी ४॥

(प्रभाती)

उठि प्रभात पूजिये श्री आदिनाथ देवा । आलस को त्याग जागि पूज विधि सेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सम लेवा । पुष्प ते सुबास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्वल करि दीप रतन लेवा । धूप ते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा ॥ २ ॥ श्रीफल बादाम लौंग डोंडा शुभ मेवा । उज्जल करि अर्घ पूजि श्री जिनेन्द्र देवा ॥३॥ जिन जी तुम अर्ज सुनो भवदधि उतरेवा । जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

ताण्डव सुरपति ने जहां हर्ष भाव धारी ॥ टेक ॥ रुनु रुनु रुनु नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पंजन पग झुन झुन झुन किन छबिलागति अति प्यारी ॥ १ ॥ अ न न न नसार दानि स न न न न न किनरान अ घ घ घ गंधर्व सर्वदेत जहां तारी ॥२॥ पं पं पं पग झपटि फं फं

फं फ न न न न न व व मृदङ्ग बाजे वीना ध्वनिसारी ॥३॥ अ द द द दे द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देव सकल दास भमानी ज्यों कहें जिन चरनन बलि-हारी ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

निरखत जिनचन्द्र बदन सुपद स्वरुचि आई ॥टेक॥ प्रगटी निज आन की पिछान ज्ञान भान की कला उ-द्योत होत काम यामिनी पलाई ॥१॥ सास्वत आन-न्द स्वाद पायो विनसो विषाद मानन में अनिष्ट इष्ट कल्पना नसाई ॥२॥ साधी निज साध की समाधि मोह

॥ खम्माच ॥

आज कोई अद्भुत रचना रची ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा देखनको होडा होडो मची ॥१॥ स्वर्ग विमान तले छवि जाके देखन मनन खिची ॥२॥ जिन गुण स्वादत रसिया परन की रीझन जात मची ॥ ३ ॥ नवल कहे ऐसी मन आवे हर्ष धार कर नची ॥ ४ ॥

॥ झंझोटी ॥

देखि सखी छबि आज भली रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं ॥टेक॥ तीन छत्र माथे पर सो हैं त्रिभुवन नाथ कहावत हैं ॥ १ ॥ मोर मुकट केसरिया जामा चौसठ चमर ढुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल मृदङ्ग साज सब बाजत आनन्द मंगल गावत हैं ॥३॥ मोहनलाल आस चरनन की झुकि झुकि शीस नवावत हैं ॥४॥

॥ रागद्वेष ॥

आज जिनराज दरशन से भयो आनन्द भारी है ॥ टेक॥ लहे ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी है तथा मो मोद की वार्त्ता नही जाती उचारी है ॥ ॥ १ ॥ जगत के देव सब देखे क्रोध भय लोभ धारी हैं तुम्ही दोषावरण विन हो कहा उपमा तिहारी है ॥ ॥२॥ तुम्हारे दर्शबिन स्वामी भई चहुंगति मे ख्वारी है।

तुम्हीं पद कज नमते हो मोहनी धूल झारी है ॥ ३ ॥ तुम्हारी भक्ति से भवजन भये भव सिंधु पारी हैं। भक्ति मोहि दीजिये अबिचल सदा याचक बिहारी है ॥४॥

॥ सोरठा ॥

ज्ञानी पिया क्यों विसरे निज देश। कुमति कुरमिनी सोत सग राचे छाय रहे परदेश ॥टेक॥ अनंतकाल परदेशनि छाये पाये वहुत कलेश। देश तुम्हारो सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश ॥ १ ॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो घन ज्ञान रहो नहीं लेश। दुखी भये विललात फिरत हो गति २ धरि दुरभेश ॥ २ ॥ यह संसार जानि लख सुख नहीं रंचक लेश। मानिक काल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

॥ पिल्लू ॥

स्वामी मुजरा हमारो लीजे ॥टेक॥ तुम तो बीतराग आनंद घन हम को भी अब कीजे ॥ १ ॥ जग के देव सब रागी द्वेषी या से निज गुण दीजे ॥२॥ आदि देव तुम समान को वेग अचल पद दीजे ॥ ३ ॥

॥ रेखता ॥

भगवान आदिनाथ जिन सों मन मेरा लगा। आरास मुझे होत दुःख दर्शसे भगा ॥ टेक ॥ मरु देवी नंद धर्म कंद कुल में सुर उगा। नृप नाभिराज के कुमार नमत सुर खगा ॥ १ ॥ युगला निवार धर्मको ससारको तगा। वसु कर्म को जराय शिव पंथ में लगा ॥ २ ॥ अब ता करो शिताब मिहरवान दिल लगा। कहें दास हीरालाल दीजे मुक्ति का मगा ॥ ३ ॥

॥ गज़ल ॥

ख्याल कर दिल मझार चेतन अजब करम ने झकाई गतिया ॥ टेक ॥ निगोद बस कर सुवोध खोया त्रि-जग व नारक बनस्पतियां ॥ १ ॥ कभी मनुष्यवा कभी सुरगवा, अनादि ले दिन बिताई रतियां। यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गोर की कहुं सुनाई वतिया। पड़ा हूं अब तो उसीके दर पर लगें हजारी न यम की पतियां ३

॥ लावनी ॥

प्रभू भव सागर पार करो, मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥टेक॥ तुम्हीं हो नित्य निरंजन देव। करे इन्द्रादिक थारी सेव ॥ नाम से पाप कटें स्वयमेव। अरज चित

दीजे हमरी एव ॥दोहा॥ तुम सुमरिन से नाथ जी सीजे हमरो काज। तुम देवन के देव हो लोक शिखिर महा राज ॥ जगत में तारन बिरद धरो। मेरे रागादिक०१ जन्म मरणादि अनल भारी। चरण थुति झरत सलिल झारी ॥ तासु मिटजात तापकारी। होत सुख अविचल अविकारी ॥दोहा॥ ऐसे तुम गुण अचिन्त वर तासम कीजे मोय। मोहादिक अरि अति प्रवल तिन को दीजे खोय ॥ आज तुम देखत काज सरो। मेरे० ॥२॥ कर्म वसु अगणित दु:खदाई। तासु वश ह्वै गति ४पाई नरक औ निगोद भटकाई। गर्भ दुःख कहो नहीं जाई ॥ दोहा ॥ बीते काल अनन्त चिर लखो न तुम दृग सोय। अब मोलब्धि भई करन तुम दरशन पायोजोय शरण लखि निर्बल मोह परो ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ तुम्ही अतिदीन अधम तारे। किये वहुतन के निस्तारे ॥ आज धन धन्य भाग म्हारे। वेन तुम गुण मुख उच्चारे ॥ दोहा ॥ तुम भ्राता तुम ही हितू तुम माता तुम तात। दुःख रूप भव कूप ते काढ़ि लेव गहि हाथ ॥ हजारी शरण लयो तुम्हारो। मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥प्रभु० ॥४॥

॥ ठुमरी ॥

तारण तरण तरण तारण प्रभु तुम तारण हम जानों॥ ॥ टेक ॥ तुम समान अब देव न दूजा मूरति माधुरी वानी ॥१॥ लख चौरासी योनिमें भटको तव मैं आनि पिछानी ॥२॥ कामधेनु पारस चिन्तामणि मन वांछित फल दानी ॥३॥ चन्द्र स्वरूप ध्यान धरि प्रभु को दीजे मुक्ति निसानी ॥ ४ ॥

॥ दादरा ॥

निरखत छवि नाथ नेना छकित रस ह्वै गये ॥टेक॥ रवि कोट द्युति लज जात है नख दीप्त अपार ॥ १ ॥ इक तो परम वैरागी दूजे शान्ति सरूप ॥ २ ॥ उपमा हजारी से ना बने अनुपम अग चन्द्र ॥ ३ ॥

॥ दादरा ॥

नाभि घर नाचत हरि नटवा ॥ टेक ॥ अद्भुत ताल वृक्ष आकृति धर चवत राग षटवा ॥ १ ॥ मणिमय नूपुरादि भूषण युत चुर सुरंग पटवा ॥२॥ किन्नर कर धर बीन बजावत लावत लय झटवा ॥ ३ ॥ दोलत ताहि लखें दृग तृपते सूझत शिव वटवा ॥ ४ ॥

॥ कहरवा ॥

लीजे खवर हमारी दयानिधि ॥ टेक ॥ तुम तो दीन दयाल जगत के सब जीवन हितकारी ॥१॥ मो मत हीन दीन तुम समरथ चूक माफ कर म्हारी ॥ २ ॥ भूधर दास आस चरनन की भव भव शरण तिहारी ॥३॥

॥ भैरवी ॥

जग में प्रभु पूजा सुखदाई ॥ टेक ॥ दादुर कमल पाखुरी लेकर प्रभु पूजाको जाई । श्रेणिक नृप गज के पग से दवि प्राण तज सुर जाई ॥१॥ द्विज पुत्री ने गिरि कैलाशे पूजा आन रचाई । लिङ्ग छेदि देव पद लीनो अन्त मोक्ष पद पाई ॥२॥ समोशरण बिपुला चल ऊपर आये त्रिभुवन राई । श्रेणिक बहु विधि पूजा कीनी तीर्थंकर गोत्र बंधाई ॥ ३ ॥ द्यानत नर भव सुफल जगत मे जिन पूजा रुचि आई । देव लोक ताके घर आगन अनुक्रम शिवपुर जाई ॥ ४ ॥

॥ रसिया ॥

तोसे लागी रे लगन चेतन रसिया ॥ टेक ॥ कुमत सोत के संग तुम राचे नाना भेष गति गति धरिया ॥ १ ॥ नरक माहि बिललात फिरत ते वे दुःख बिसर गये रसिया ॥ २ ॥ नीठ नीठ नरकन से कढ़ कर सा

नुष भव दुर्लभ वसिया ॥ ३ ॥ नर भव पाइ वृथा मत खोवो ऐसा औसर नहि मिलिया ॥ ४॥ कहत हजारी सुमति सग राचे कुमति छोड़ तुम हो सुखिया ॥ ५ ॥

॥ भजन करताली ॥

कहां गये जैन जाति के बीर नैया पार लगाने वाले॥ टेक ॥ कहां गये उमास्वामि महाराज । तत्वारथ मय रचा जहाज ॥ क्यों नही रखते लज्जा आज । जैनी लज्जा रखने वाले ॥ कहा० १ ॥ स्वामी रत्नक श्री अकलंक। नाशा जैन जाति आतक ॥ काटा बौद्ध धर्म का टक । जैनी ध्वजा उड़ाने वाले ॥ कहा० २॥ देवलपात्र केशरी सिंह । वादी गज भाजें कर चिंघ ॥ आते अब तुम क्योना ढिग । भव्यों की भय हरने वाले ॥ कहा०॥ ३ ॥ उन संतति हम विद्या हीन । वाल व्याहकर धन वल छीन॥ फूट से हो गये तेरा तीन । सत्यानाश मिटाने वाले ॥ कहा० ४ ॥ गट पट खाय विदेशी खाड़ रंड़ी और नचावे भाड ॥ सारी लोक लाज को छाड़ । बदरस्मों के चलाने वाले ॥ कहा० ५ ॥ संभलों अवना हो स्वच्छन्द । राखो रही जो लगकर द्वन्द । शुभमति दायक भज जिन चन्द्र ॥ जातो उन्नति करने वाले कहां ० ६॥ इति ।

३२ लावनी संग्रह ।

धन्य धन्य शुभ घड़ी आजकी जिनध्वनि श्रवणपरी तत्व प्रतीत भई अब मेरे मिथ्या दृष्टि टरी ॥ १ ॥ जड़ ते भिन्न लखो चिन्मूरति चेतन सुरस भरी । अहंकार ममकार बुद्धि में परमें सब परिहरी ॥ २ ॥ पुण्य पाप विधि वंध अवस्था भासी अति दुख खरी । बीतराग विज्ञान भाव में निज परिणत विस्तरी ॥ ३ ॥ चाह दाहविनसी पुनि बरसी समता मेघ झरी । बाढ़ी प्रीति निराकुल पद से भागचन्द हमरी ॥ ४ ॥

॥ लावनी ॥

चतुर परनारी मत निरखो । सावन कैसी रैन अंधेरी दामिन को दमको ॥ टेक ॥ रावण मोटा राय कहावे लंका गढ़ वको । पाप करंते नरकन पहुंचो दुख पायो अघ को ॥ १ ॥ खण्ड धातु की राय पद्मोत्तर द्रोपदि कों हरलो । कृष्ण नरेश ने करी खुवारी पुण्य हुवो हलको ॥ २ ॥ कीचकराय महादुख पायो भीमसेन अटको । नारी द्रोपदी नेह विचारो भव भव में भटको ३॥ परनारी को रंग पतग है बादल को झपको । ओस बूंद जब लगे तवा पे ढलको जाय ढलको ॥ ४ ॥ परनारीको

नेह करंता धन जावे घर को। दूजा देखकर करे खुवारी परभव में भटको ॥ ५ ॥ लावनी ॥

धन्य दिवस धनि घड़ी आज की जिन छवि नजर परी। स्वपर भेद बुधि प्रगट भई उर भर्म बुद्धि विसरी ॥ टेक ॥ नासिकाग्र है दृष्टि मनोहर वर विराग सुथरी आतम शुद्ध सुराजत मानों अनुभव सुरस भरी ॥ १ ॥ शांत्याकृति निरखत ही पर की आरति सर्वगरी। चिर मिथ्या तम नाश करन को मानो अमृत झरी॥२॥ वीत राग ताका सुहेतु सुनि मोह भुजग विसरी। पट भूषण बिनवै सुंदरता नाहीं रक हरी ॥ ३ ॥ जाकी द्युति शत कोट चन्द्रने अद्भुत जग विस्तरी। तारक रूप निहारि देव छवि मानिक नवन करी ॥ ४ ॥

॥ लावनी ॥

मत करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी। है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥ टेक ॥

औषधि अनेक हैं सर्प डसे की भाई। पर इसके काटे की नहीं कोई दवाई ॥ गर लगे वान तो जीवित हू रहि जाई। पर इसके नैन के वान से होय सफाई॥

है रोम रोम विष भरी करो ना यारी । है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥ १ ॥

यह तन मन धन हर लेय मधुर बोली में । बहुतोंका करै शिकार उमर भोली मे ॥ कर दिये हजारों लोट पोट होली मे । लाखों का दिलकर लिया कैद चोलीमें॥ गई इसी कर्म मे लाखो ही जमींदारी । है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥ २ ॥

हो गये हजारों के बल बीर्य्य छारा । लाखो का इसने वंश नाश कर डारा ॥ गठिया प्रमेह आतिश ने देश विगारा । भारत गारत हो गया इसी का मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर औ ज्वारी । है यही सकल दुर्गुण की खानि हत्यारी ॥ ३ ॥

इसही ठगनीने मद्य मांस सिखलाया । सब धर्म कर्म को इसने धूर मिलाया ॥ और दया क्षमा लज्जा को मार भगाया। ईश्वर भक्ति का मूल नाश करवाया हों इसके उपासक रौरव के अधिकारी । है यही० ॥४॥

वह नवयुवकों को नैन सैन से खावे । और धनवानों को चट गट कर जावे ॥ धन हरण करै फिर पीछे राह वतावै । करै तीन पांच तो जूते भी लगवावै

पिटवा कर पीछे ल्यावै पुलिस पुकारी। है यही सकल रोगों की खानि हत्यारी ॥ ५ ॥

फिर किया पुलिसने खूब अतिथि सत्कारा। होगई सज़ा मिला मज़ा इश्क का सारा ॥ जो झूंठ होय तो सज्जन करो विचारा। दो त्याग झूंठ करो सत्य बचन स्वीकारा। अब तजो कर्म यह अति निन्दित दुखकारी। है यही सकल रोगों की खानि हत्यारी ॥ ६ ॥

३३ गौरीसंग्रह ॥

॥ श्रीऋषभदेव स्तुति ॥

राखो नाभिके नन्द, शरण निज राखो नाभिके नन्द ॥ टेक ॥ सुरतरु क्षीण भये लख जग जन दुःखी भये मतिमन्द। नाभि नृपतियुत तुमतट आये दर्शत पाया- नन्द ॥ १ ॥ ग्राम धाम रचना हरि कीनी सुन आदेश स्वच्छन्द। निज मुख प्रभु षटकर्म बताये उदर भरणको धन्द ॥ २ ॥ आदि तीर्थ बर्तावन हारे प्रगटे आदि जि- नेन्द्र। गणधरादि कर पूजनीक प्रभु नवत चरण शतइन्द्र ॥३॥ उपादेय पदपद्म तुम्हारे त्रिजगति को सुखकन्द नाथूराम जिन भक्त जगति का चाहत भ्रमणबन्द ॥४॥

॥ श्रीअजितनाथ स्तुति ॥

अजित अजित करो नाथ, अजित मोह अजित २ करो नाथ ॥टेक॥ वसु अजीत जीते विधि तुमने ज्ञान चक्र गहि हाथ। ध्यान कृपाण पान गहि क्षणमें मोह किया निर्नाथ ॥१॥ अर्द्ध चतुर्थ कालगत प्रगटे धर्मतीर्थ के नाथ। धर्म पोतधर बहु भवितारे पहुंचे शिवले साथ ॥ २ ॥ गज लक्षण लख उभय चरणको नमों भाल धर हाथ। उरगण पतिसुत हीन दासपर कृपा करो गुण गाथ ॥ ३ ॥ है तुम विरद प्रगट त्रिभुवन में तारे बहुत अनाथ। नाथूराम जिन भक्तदास को कीजे आज सनाथ ॥ ४ ॥ श्रीसम्भवनाथ स्तुति ॥

सम्भव भव दुःख दूर, करो मो सम्भव भव दुःखदूर॥ टेक ॥ इन कर्मों मोहि बहुत फिरायो दुःखी भयो भर पूर। लख चौरासी योनि चतुर्गति छानी फिर फिर धूर ॥ १ ॥ त्रिभुवन में कोई रक्षक नाहीं काल बलीसे सूर। या से शरण लिया प्रभु थारा राखो आप हजूर इन का निग्रह तुम ही कीना ज्ञान गदा से चूर। अब मेरे वसु विधि अरि नाशो नित्य सताते क्रूर ॥ ३ ॥ भव गद नाशन को प्रभु तुमही सार सजीवन मूर। नाथूराम जिन भक्त तुम्हारे नित नित बाजो तूर ॥ ४ ॥

॥ श्री अभिनन्दन नाथ स्तुति ॥

श्री अभिनन्दन ईश । हमारे श्री अभिनन्दन ईश ॥ ॥ टेक ॥ अभि रुचि हमरी निज स्वभाव मे होय करो मुक्तीश । विषय भोग की मिटे वासना पाऊ शिव जगदीश ॥ १ ॥ राग द्वेष संशय विमोह बिभ्रम तुम डारे पीस । अब प्रभु जी मेरा रिपु नाशो दारुण मोह खवीश ॥ २ ॥ वसु बिधि मूल रु शाखा तिन की शत अरु वसु चालीस । ध्यान धनञ्जय से तुम जालीं कंटक यथा कृषीश ॥ ३ ॥ अजर अमर अव्यय पद जन को दान करो शिव ईश । नाथूराम जिन भक्त नवावत तुम पद पंकज शीश ॥ ४ ॥

॥ श्रीसुमति नाथ स्तुति ॥

सुमति सुमति करो मेरी सुमति प्रभु सुमति सुमति करो मेरी ॥ टेक ॥ कुमति सहित चिर काल व्यतीतो करत फिरत भव फेरी । भव वन सघन विषें अति भटको निज पुर वाट न हेरी ॥ १ ॥ इन्द्रिन विषयन में रुचि ठानी दिन दिन अधिक घनेरी । सुमति सु नारि दृष्टि ना आनी रमी कुमति नित चेरी ॥ २ ॥ कुमति कुमार्ग भटकाने को मावस रैन अन्धेरी । तुम मुखचन्द्र लख इम भागी ज्यों मृगपति लख छेरी ॥ ३ ॥ अब सु-

सतीश ईश तुम महिमा दिन दिन जन प्रगटेरी । नाथुराम जिन भक्त तुम्हारे नित्य बजो जय भेरी ॥ ४ ॥

३५ परमार्थ जकड़ी दौलतराम कृत

अब मन मेरा वे, सीख वचन सुनमेरा । भज जिनवर पद वे, जो विनशे दुख तेरा ॥ विनशै दुख तेरा भववन केरा, मन वच तन जिन चरन भजो । पंच करन वश राख सुज्ञानी, मिथ्यामत मग दौर तजो ॥ मिथ्या मत मग पगि अनादि तें, तैं चहुंगति कीधा फेरा । अबहू चेत अचेत होहु मत, सीख वचन सुन मन मेरा ॥ १ ॥ इस भव वन में वे, तैं साता नहिं पाई । वसु विधि वश ह्वैबे, तैं निज सुधि विसराई ॥ निज सुधि विसराई भाई, तातैं विमल न वोध लहा । पर परणति में मग्न भयो तू जन्म जरा मृत दाह दहा ॥ जिनमत सार सरोवर कू अव, गाहि लाग निज चिंतन में तो दुख दाह नशै सब नातर, फेर वसै इस भव बन में ॥ २ ॥ इस तन में तू वे, क्या गुन देख लुभाया । महा अपावन वे, सतगुरु याहि वताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मल मूत्रादिक का गेहा । क्रमि कुल कलित लखत घिन आवे, तासों क्या कीजे नेहा ॥ यह

तन पाप लगाय आपनी, परणति शिव मग साधनमें। तो दुख द्वंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥३॥ भोग भले न सही, रोग शोक के दानी। शुभ गति रोकन वे, दुर्गति पथ अगवानी ॥ दुर्गति पथ अगवानी है जे, जिनकी लगन लगी इन सों। तिन नाना विधि विपति सही है, विमुख भया निज सुख तिन सों॥ कुंजर झख अलि शलभ हिरन इन, एक अक्ष वश मृत्यु लही। यातें देख समझ मन माही, भव में भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरे तब वे, जब निजपद आराधै। नशै भवावलि वे, निराबाध पद लाधै ॥ निराबाध पद लाधै तब तोहि केवल दर्शन ज्ञान जहां। सुख अनन्त अति इन्द्रिय मडित वीरज अचल अनन्त तहां ॥ ऐसा पद चाहै तो भजि जिन, वार वार अब को उचरै। "दौल" मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५ ॥ इति।

३५ परमार्थ जकड़ी।

रामकृष्ण कृत।

अरहन्त चरण चित लाऊं। पुनः सिद्ध शिवंकर ध्याऊं ॥ वन्दों जिन मुद्रा धारी। निर्ग्रंथ यति अवि-

कारी । अविकार करुणा वन्त बन्दों सकल लोक शि-
रोमणी । सर्वज्ञ भाषित धर्म प्रणमू देय सुख सम्पति
घनी । ये परम मंगल चार जग में चार लोकोत्तम यही ।
भव भ्रमत इस असहाय जिय को और रक्षक को नहीं ॥१
मिथ्यात्व महारिपु दहो । चिरकाल चतुर्गति हंडो ॥
उपयोग नयन गुण खोयो । भरि नींद निगोदे सोयो ॥
सोयो अनादि निगोद मे जिय निकस फिर स्थावर भयो ।
भू तेज तोय समीर तरुवर थूल सूक्ष्म तन लियो । कृमि
कुंथु अलिसैनी असैनी व्योम जल थल सचरो । पशु
योनि बासठ लाख इस विधि भुगति मर मर अवतरो
॥ २ ॥ अति पाप उदय जब आयो । महा निद्य नर-
क पद पायो ॥ थित सागरों बन्द जहां है । नाना
विधि कष्ट तहां है ॥ है त्रास अति आताप वेदन शीत
वहु युत है मही । जहां मार मार सदैव सुनिये एक
क्षण साता नहीं ॥ नारक परस्पर युद्ध ठाने असुरगण
क्रीड़ा करें । इस विधि भयानक नरक थानक सहें जी
पर वश परें ॥ ३ ॥ मानुष गति के दुःख भूलो । वस
उदर अधोमुख झूलो । जन्मत जो संकट सेयो । अवि-
वेक उदय नहीं वेयो ॥ वेयो न कछु लघु बाल वय

में बश तरु कोंपल लगी। दल रूप यौवन बय सो आ-
यो काम दौ तब उर जगी ॥ जब तन बुढ़ायो घटो
पौरुष पान पकि पीरो भयो । झड़ परो काल बयार
बाजत वादि नर भव यों गयो ॥ ७ ॥ अमरापुर के सुख
कीने । मनो वाञ्छित भोग नवीने । उर माल जवे मु-
रझानी । बिलपो आसन्न मृत्यु जानी । मृत्यु जान हा-
हाकार कीनो शरण अब काको गहूं। यह स्वर्ग सम्पति
छोड़ अब में गर्भ वेदन क्यों सहूं ॥ तब देव मिल सम
झाइयो पर कुछ विवेक न उर वसो । सुर लोक गिरि
से गिर अज्ञानी कुमति कांदो फिर फसो ॥ ५ ॥ इस
विधि इस मोही जीने । परिवर्तन पूरे कीने ॥ तिन
की बहु कष्ट कहानी। सो जानत केवल ज्ञानी । ज्ञानी
बिना दुःख कौन जाने जगत् बन में जो लहो । जरा
जन्म मरण स्वरूप तीक्ष्ण त्रिविध दावानल दहो ।
जिनमत सरोवर शीत पर अब बैठ तपत बुझाय हुं ।
जय मोक्षपुर की बाट बूझो अब न देर लगाय हुं ।६।
यह नर भव पाय सुज्ञानी । कर कर निज कार्य प्राणी ॥
तिर्यंच योनि जब पावे । तब कौन तुझे समझावे ॥
समझाय गुरु उपदेश दीनो जो न तेरे उर रहै। तो

जान जीव अभाग्य अपना दोष काहू को न है। सूरज प्रकाशे तिमिर नाशे सकल जन का भ्रम हरे। गिरि गुफा गर्भ उद्योत होत न ताहि भानु कहा करे ॥ ७ ॥ जग माहि विषय वन फूलो। मन मधुकर तिस विच भूलो। रस लीन तहां लपटानो। रस लेत न रंच अघानो ॥ न अघाय क्यों ही रमो निशि दिन एक क्षण भी ना चुके। नही रहे बरजो बरज देखो बार बार तहा झुके ॥ जिनमत सरोज सिद्धान्त सुन्दर मध्य याहि लगाय हुं। अब रामकृष्ण इलाज याको किये ही सुख पाय हु ॥८॥ इति श्री रामकृष्ण कृत जकड़ी सम्पूर्ण।

ओं नमः सिद्धेभ्यः॥

३६ परमार्थ जकड़ी।

दौलतराज कृत।

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं। शारद अम्बा चितलाऊं दो विधि परिग्रह परिहारी। गुरु नमो स्वपर हित कारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु परखि निज उर लाइये। दुःखदाय कुपथ विहाय शिव सुख दाय जिनवृष ध्याइये। चिरसे कुमग पगि मोह ठगकर ठगो भव कानन परो। चौरासी लख नित योनि मे जरामरण ज-

न्मन दौ जरो ॥ १ ॥ मोह रिपुने दई है घुमरिया । तिस वश निगोद मे परिया । तहां स्वास एकके माहीं । अष्टादश मरण लहाहीं । लहि मरण एक मुहूर्त्त में छासट सहस्र शत तीन हीं । शत तीन काल अनन्त यों दुख सहे उपमाही नहीं ॥ कबहू लही वर आयु छिति जल पवन पावक तरुतनी । तसु भेद किंचित् कहूं सो मुनि कह्यो जो गौतम गणी ॥ २ ॥ पृथिवी दो भेद बखानं । मृदु माटी कठिन पाषाण । मृदु द्वादश सहस्र वरस की पाहन बाईस सहस की । पुनः सहस्र सात लही उदक त्रय सहस्र लही है समीर की । दिन तीन पावक दशसहस तरु प्रमिति ना तसु पीर की । विन घात सूक्ष्म देहधारी घातयुत गुरु तन लहो । तहां खनन तापन ज्वलन विजन छेद भेदन दुःख सहो । ३ । लखादि दो इन्द्री प्रानी । तिथि द्वादश वर्ष बखानी । कुन्थ्वादि ते इन्द्रिय है ते । वासर उंनचास जियेते । जीवै वर्ष नग अलि प्रमुख व्यालीस सहस उरगतनी । खगकी बहत्तर सहस्र नव पूर्वांग सरीसृप की भनी । नर मत्स्य पूर्व कोड़िकी थिति कर्म भूमि बखानिये । जलचर विकल विन भोग भूनर पशु त्रिपल्य प्रमाणिये । ४ । अघवश कर नरक

बसेरा । भुंगता तहां कष्ट घनेरा । छेदें तिलतिल तन सारा । झेपें द्रह पूति मझारा । मझार वज्रानल पचावै शूली ऊपरें । सींच देह जलक्षार से खल कहें ब्रह्म नीके करें । वैतरणी सरिता समलजल अति दुःखद तरुसेमल तने । अति भीमवन असि कोंत समदल लगत दुःख देने घने । ५ । तिस भू में हिम गरमाई । मेरुसम लोह गलाई । तहां की थिति सिन्धु तनी है । यों दुःख नरक अवनी है । अवनी तहांकीसे निकल कबहूं जन्म पायो नरो । सर्वांग सकुचित अति अपावन जठर जननी के परो । तहां अधोमुख जननी रसांश थकी जियो नव मास लो । तिस पीर में कोई सीर नाहीं सहै आप निकासलो ॥ ६ ॥ जन्मत जो संकट पायो । रसना से जात न गायो । लहे बालपने दुःख भारी । तरुणापो लियो दुःख कारी । दुःखकार इष्टवियोग अशुभ संयोगशोक सरोगतो । पर सेव ग्रीषमशीत पावस सहै दुःख अति भोगतो । काहूको त्रिय काहूको बांधव काहू सुता दुराचारिणी । काहू व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलत्र के ऊपर ऋणी ॥ ७ ॥ वृद्धापन के दुःख जेते । लखिये सब नैनों तेते । मुख लाल बहे तन हाले । बिन शक्ति न वसन सम्हाले । न सम्हाल जाको देह की तो कहो क्या वृष

की कथा। तब ही अचानक यम ग्रसे यों मनुज जन्म गयो वृथा। काहू जन्म शुभठान किंचित् लियो पद चउ देव को। अभियोग किल्विष नाम पायो सहो दुःख परसेवको ॥८॥ तहा देख महत्सुर ऋद्धी। झूरो कर विषयों गृद्धी। कबहूं परिवार नशानो। शोकाकुल हो विलखानो। बिलखाय अति जब मरण निकटो सहो सकट मानसी। सुर विभव दुःखद लगो तबै जब लखी माल मलानसी। तब अमर बहु उपदेश दें समुझाइयो समझो न क्यों। मिथ्यात्व युत डिग कुगति पाई लहै फिर सो सुपद क्यो ॥ ९ ॥ यों चिर भव अटवी गाही। किंचित् साता न लहाई॥ जिन कथित धर्म नही जानो। पर मे आपापन मानो ॥मान्यो न सम्यक् रत्नत्रय आतम अनातम में फंसो। मिथ्या चरण दृग् ज्ञान रजो जाय न ग्रीवकबसो ॥ पर लहो ना जिन कथित शिव मग वृथा भ्रम भूलो जिया। चिद्भाव के दर्शाव बिन सबगये पहले तप किया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य कुमायो। कुल जाति विमल तू पायो ॥ या में सुन सीख सयाने। विषयोंसे रति मति ठाने। ठाने कहा रति विषयसे ये विषय विषधर से लखो। ये देय मरण अनन्त इन को

त्याग आतम रस चखो ॥ या रस रसिक जन बसे शिव अब वसत फिर बसिहैं सही । दौलत स्वरचि पर विरचि सद्गुरु सीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥

इति श्री दौलतराम कृत जकड़ी सम्पूर्णा ।

३७ समाधि मरण ।

(चाल योगीरासा)

गौतम स्वामी वन्दौं नामी मरण समाधि भला है। मैं कब पाऊ निशदिन ध्याऊं गाऊं बचन कला है। देव धर्म गुरु प्रीति महादृढ़ सात व्यसन नहीं जाने। त्यागि बाईस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने॥१॥ चक्की चूली उखरी बुहारी पानी त्रस न विरोधे। बनिज करे पर द्रव्य हरे नही छहो करम इमि सोधे ॥ पूजा शास्त्र गुरुनकी सेवा सयम तप चहुंदानी । पर उपकारी अल्प अहारी सामायक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥ जाप जपे तिहुं योग धरे दृढ तनु की ममता टारे । अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे॥ आग लगे अरु नाव डुवे जब धर्म बिघन जब आवे। चार प्रकार अहार त्यागि के मन्त्र सु मन में ध्यावे ॥३॥ रोग असाध्य जरा वहु देखे कारण और निहारे। वात वड़ी है जो

बनि आवे भार भवन को डारे ॥ जो न बने तो घरमें रह करि सब सों होय निराला । मात पिता सुत त्रिय को सोंपे निज परिग्रह अहिकाला ॥ ४ ॥ कुछ चैत्यालय कुछ श्रावक जन कुछ दुखिया धन देई । क्षमा क्षमा सब ही सों कहि के मन को शल्य हनेई ॥ शत्रुन सों मिल निज कर जोरे मैं बहु करी बुराई । तुम से प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥ ५ ॥ धन धरती जो मुख सों मांगे सो सब दे संतोषे । छहों कायके प्रानी ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥ ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पेले । दूधाधारी क्रम क्रम तजि के छाछ अहार पहेले ॥ ६ ॥ छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि संथारा । भूमि मांहि थिर आसन माडे साधर्मी ढिंग प्यारा ॥ जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये । यों कहि मौन लियो संन्यासी पंच परम पद गहिये ॥ ७ ॥ चार आराधन मन में ध्यावे बारह भावन भावे । दश लाक्षण मन धर्म विचारे रत्नत्रय मन ल्यावे ॥ पैंतिस सोलह षटपन चारो दुइ इक बरन विचारे । काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञान मई तू सारे ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुण सों पूरे परमानन्द सुभावे । आनन्द कन्द चिदानंद साहब

तीन जगत पति ध्यावे ॥ क्षुधा तृषादिक होई परीषह सहे भाव सम राखे। अतीचार पांच सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे ॥९॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागे। अद्भुत पुण्य उपाय सुरग में सेज उठे ज्यों जागे। तहां ते आवे शिव पद पावे विलसै सुक्ख अनन्तो। द्यानत यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥ इति समाधिमरण समाप्तम् ॥

३८ निशि भोजन कथा।

[दोहा छन्द]

नमों सारदा सार बुध, करैं हरैं अघ लेप। निशि भोजन भुंज की कथा, लिखूं सुगम सक्षेप ॥ १ ॥

(चौपाई छन्द)

जंबू दीप जगत विख्यात। भरत खंड छवि कहि-यन जात ॥ तहां देश कुरु जांगल नाम। हस्त नागपुर उत्तम ठाम ॥ यशोभद्र भूपति गुण बास। रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास ॥ अष्टमास तिथि दिन आराध। पहिली पड़वा कियो सराध ॥ बहुत विनय सों नगरी तने।

न्योत जिमाये ब्राह्मण घने ॥ दान मान सबही कों दियो । आप बिप्र भोजन नहि कियो ॥ इतने राय पठायो दास । प्रोहित गयो राय के पास ॥ राज काज कछु ऐसो भयो । करत करावत सब दिन गयो ॥ घरमें रात रसोई करी । चूल्हे ऊपर हांडी धरी । हींग लैन उठि बाहर गई । यहा विधाता औरहि ठई ॥ मैंडक उछल परो तामाहि । बिप्र तहां कछु जानो नाहि । बैंगन छोंक दिये तत्काल । मैंडक मरो होय बेहाल ॥ तबहुं विप्र नहिं आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम । पराधीन को ऐसी बात । औसर पायो आधी रात ॥ सोय रहे सब घर के लोग । आग न दीवा कर्म सजोग । भूखो प्रोहित निकसे प्रान । ततछिन बैठो रोटी खान ॥ बैंगन भोले लीनो ग्रास । मैडंक मुंह में आयो तास । दांतन घले चबी नहिं जबै । काढ़ धरो थाली में तबै ॥ प्रात हुए मैंडक पहिचान । तौभी बिप्रन करी गिलानि । थिति पूरी कर छोड़ी काय । पशु की योनी उपजो आय ॥

सोरठा छन्द ।

१ घुघू २ काग ३ बिलाव, ४ सावर ५ गिरध पखेरुआ । ६ सूकर ७ अजगर भाव, ८ बाघ ९ गोह जल में

१० मगर ॥ दश भव इहि विधि थाय, दसों जन्म नरकहिं गयो । दुर्गति कारण पाय, फली पाप बट बीजवत् ॥ ॥ दोहा छन्द ॥

निशि भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय। परभव सब सुख संपजे, यह भव रोग न होय ॥

॥ छप्पय छन्द ॥

कीड़ी बुध बल हरे कप गद करे कसारी। मकड़ी कारण पाय कोढ़ उपजे दुख भारी। जुआं जलोदर जने फांस गल बिथा वढ़ावे। बाल सवे सुरभंग बवन माखी उपजावे ॥ तालुवे छिद्र वीछू भखत और व्याधि बहु करहिं सब। यह प्रगट दोष निशअसन के पर भव दोष परोक्ष फल ॥ दोहा छन्द ॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय। डसत सांप पीछे तुरत, लहर क्यों न दुख देय ॥ सुबचन सुन डाहारजे, मूरख मुदित न होय। मणिधर फण फेरे सही, नही सांप नहीं होय ॥ सुवचन सत गुरु के वचन, और न सुवचन कोय। सत गुरु वही पिछानिये, जा उर लोभ न होय ५ भूधर सुबचन सांभलो, स्वपरपक्ष कर बौन। समुद्र रेणुका जो मिले, तोड़ें ते गुण कौन ॥ इति निशि भोजन भुंजन कथा सम्पूर्णम्।

३८ श्री रविव्रत कथा ।

॥ चौपाई ॥

श्री सुख दायक पार्स जिनेश । सुमति सुगति दाता परमेश ॥ सुमरों शारद पद अरविंद । दिनकर व्रत प्रगटो सानंद ॥ १ ॥ वाणारस नगरी सुविशाल । प्रजापाल प्रगटो भूपाल ॥ मति सागर तहां सेठ सुजान । ताका भूप करे सन्मान ॥ २ ॥ तासु त्रिया गुण सुदरि नाम । सात पुत्र ताके अभिराम ॥ षट् सुत भोग करें परणीत । वाल रूप गुण धर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्त्र कूट शोभित जिन धाम । आये यति पति खंडित काम ॥ सुन मुनि आगम हर्षित भये । सर्व लोग वन्दन को गये ॥ ४ ॥ गुरु वाणी सुन के गुणवती । सेठिन तब जो करी बीनती ॥ व्रत प्रभु सुगम कहो समझाय । जासे रोग शोग सब जाय ॥ ५ ॥ करुणा निधि भाषैं मुनिराय । सुनो भव्य तुम चित्त लगाय ॥ जब आषाढ़ सित पक्ष विचार । तब कीजे अंतिम रविवार ॥६॥ अनशन अथवा लघु आहार । लवणादिक जो करे परिहार ॥ नवफल युत पचामृत धार । वसुप्रकार पूजो भवहार ॥७॥ उत्तम फल इक्यासी जान । नव श्रावक घर दीजे आन ॥

या विधि करो नव वर्ष प्रमाण। याते होय सर्व कल्याण ॥८॥ अथवा एक वर्ष एक सार। कीजे रवि व्रत मनहि विचार॥ सुन साहुन निज घर को गई। व्रत निंदा से निंदित भई ॥ ९ ॥ व्रत निन्दा से निर्धन भये। सात पुत्र अयोध्यापुर गये॥ तहां जिन दत्त सेठ गृह रहें। पूर्व दुःकृत का फल लहें॥१०॥ मात पिता गृह दुःखित सदा। अवधि सहित मुनि पूछे तदा॥ दयावंत मुनि ऐसे कहो। व्रत निन्दा से तुम दुःख लहो ॥ ११ ॥ सुन गुरु वचन बहुरि व्रत लयो पुण्य कियो घर में धन भयो ॥ भविजन सुनो कथा सम्बन्ध। जहां रहत थे वे सब नन्द ॥ १२ ॥ एक दिवस गुण घर सुकुमार। घास ले आये गृहद्वार ॥ क्षुधावन्त भावज पे गयो। दंत विना नहि भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गये जहां भूलो दन्त। देखो तासे अहि लिपटन्त॥ फणिपति की तहां विनती करी। पद्मावति प्रगटी सुंदरी ॥ १४ ॥ सुन्दर मणिमय पारस नाथ। प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ॥ देकर कहो कुंवर कर भोग। करो सम्यक पूजा संयोग॥१५॥ आनबिंब निज घर में धरो। तिहकर तिन को दारिद्र हरो ॥ सुख विलसत सेवे सब नन्द। दिन प्रति

पूजों पार्स जिनेन्द्र ॥१६॥ साकेता नगरी अभिराम। जिन प्रसाद राचा शुभ धाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य संयोग। आये भविजन संग सो लोग ॥ १७॥ सग चतुर्विधिको सन्मान। कियो दियो मन वांछित दान। देख सेठ तिन को सम्पदा। जात कही भूपति से तदा ॥१८॥ भूपति तब पूछो वृत्तान्त। सत्य कहो गुण धर गुणवन्त॥ देख सुलक्षणा को रूप। अत्यानन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥ भूपति गृह तनुजा सुंदरी। गुण धर को दीनी गुण भरी॥ कर विवाह मंगल सानन्द। हय गय पुरजन परमानन्द ॥२०॥ मन वांछित पाये सुख भोग। विस्मित भये सकल पुर लोग॥ सुख से रहत बहुत दिन भये। तब सब बन्धु बनारस गये॥२१ ॥ मात पिता के परशे पांय। अत्यानन्द हृदय न समाय॥ बिगटो विषम विषम बियोग। भयो सकलपुर जन संयोग ॥२२॥ आठ सात सोलह के अंक। रविव्रतकथा रची अकलक॥ थोड़े अर्थग्रंथ बिस्तार। कहें कवीश्वर जो गुण सार ॥२३॥ यह व्रत जो नरनारी करें। सो कबहूं दुर्गति नहिं परे॥ भाव सहित सो सब सुख लहें। भानु कीर्ति मुनिवर इमि कहें ॥ २४॥

इति श्री रविव्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

४० वारहमासी राजुल, सोरठ में ।

पिय प्यारे ने सुधि विसराई। अब कैसे जियों मेरी माई॥ टेक॥ सखी आयो अगम अषाढा। तव क्यों न गये गिरनारा॥ मेरी रच संयोग बिसारी। मन से क्या नाथ विचारी॥ अब क्यों छोड़ी अकुलाई। अब० ॥१॥ सावन में व्याहन आये। सब यादव नृपति सुहाये॥ पशु अन की करुणा कीनी। मेरी ओर दृष्टि ना दीनी॥ गिरि गमन कियो यदुराई। अब० ॥ २॥ भादों बरसत गंभीरा। मेरे प्राण धरे ना धीरा॥ मोहि मात पिता समझावे। मेरे मन एक न आवे॥ मो प्रभु बिन कछु न सुहाई। अब०॥ ३॥ सखी आयो अस्विन मासा। पहुंची अपने पिय पासा॥ क्यों छोड़े भोग बिलासा। कर पूर्व जन्म की आशा॥ तज वर्तमान सुखदाई। अब० ॥४॥ अब लागो कातिक मासा। सब जन गृह करत हुलासा॥ सब गृह गृह मंगल गावें। हमरे पिय ध्यान लगावें॥ मेरी मान कही यदुराई। अब० ॥ ५॥ लगी अगहन मास सुहाई। जामें शीत पड़े अधिकाई॥ सब जन कम्पे जग केरे। कैसे ध्यान धरों प्रभु मेरे॥

थिरता मन नाहि रहाई । अब० ॥ ६ ॥ सखी पूष में परम तुषारा । वर शीत भई अधिकारा ॥ कैसे के संयम मड़ो । कैसे वसु कर्मन दंडो ॥ घर चल के राज कराई । अब० ॥ ७ ॥ सखी माघ मास अब लागो । सब ही जन आनन्द दागो ॥ तुम लीनी जगत् बड़ाई । मोहि त्याग दया नही आई ॥ धृक मेरी पूर्व कमाई । अब० ॥ ८ ॥ फागुन में सब जन होरी । खेलत केसर रंग बोरी ॥ तुम गिरि पर ध्यान लगायो । मेरा कुछ ध्यान न आयो ॥ तुम शरणागत में आई ॥ अब० ॥९॥ सखी पहिले चैत जनायो । सव साल को आगम आयो । सब फूले वन अकुलाई । मोंहि तुम विन कछु न सुहाई ॥ मोहि अधिक उदासी छाई । अब० ॥ १० ॥ वैसाख पवन झकझोरे । लूह लपट लगे चहुं ओरे ॥ जे जड़ ते तपत पहारा । मो तन कोमल सुकुमारा ॥ घर छोड़ चले यदुराई । अब० ॥ ११ ॥ सखी जेठ मास अब आयो । तब घाम ने जोर जनायो ॥ कैसे भूख पियास सहोगे । कैसे संयम धारोगे ॥ थिरता मन में न रहाई। अब कैसे जियों मेरी माई ॥ १२ ॥ इति सम्पूर्णम् ।

४१ पुकार पच्चीसी।

दोहा=जे यह भव ससार में, भुगतें दुःख अपार।
सो पुकार पच्चीसिका, करैं कवित इक ढार ॥

[तेईसा छन्द]

श्री जिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सवे सुख दाई। दीन दयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुर्गति टारन पाप निवारन हो भव तारन को भव ताई। बारही बार पुकारतु हो जनकी बिनती सुनिये जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणों त्रय दोष लगे समको प्रभु काल अनाई। तासु नसावनको तुम नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निबारन को तुम्हरे पद सेवतु ही चित ल्याई। बारही० ॥ २ ॥ जो इक द्वै भवको दुख होय तो राख रहों मन को समझाई। यह चिरकाल कुहाल भयो अवलों कहुं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग माहि कलेश परे दुख घोर सहे नहीं जाई ॥ बारही० ॥ ३ ॥ देख दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्राम पतो शिरनाई। हो तुमनाथ त्रिलोक पती तुम से हम अर्ज़ करी शिर नाई ॥ मो दुःख दूर करो भव के वसु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई।

बारही० ॥४॥ कर्म बड़े रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई। दुःख अनन्त दिये हमको हर भातिन भांतिन खादि लगाई ॥ मैं इन वैरिनके वश ह्वै करिके भटको सु कहो नहीं जाई। बारही० ॥५॥ मै इस ही भव कानन मे भटको चिरकाल सुहाल गमाई। किञ्चित ही तिल से सुखको बहु भाति उपाय करे ललचाई ॥ चार गतें चिर मैं भट को जहां मेरु समान महा दुखदाई। बारही० ॥६॥ नित्य निगोद अनादि रहो त्रस के तनकी जहा दुर्लभताई। ज्यों कन सो निकसो व· हते त्यों इतर निगोद रहो चिर काई ॥ सुक्षम बादर नाम भयो जब ही यह भाति धरी पर्यायी। बारही० ॥ ७ ॥ जब ही पृथिवी जल तेज भयो पुनि मारुत होय बनस्पति काई। देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर दीरघताई ॥ एक उदै प्रत्येक भयो सहधारण एक निगोद बसाई। बारही० ॥ ८ ॥ इन्द्रिय एक रहो चिर में कब लब्धि उदै स्वय उपशमताई। द्वे त्रय चार धरी जब इन्द्रिय देह उदै विकल त्रय आई। पंचन आदि किधौं पर्यन्त धरे इन इन्द्रियके त्रस काई॥ बारही० ॥ ९ ॥ काय धरी पशु की बहुबार भई जल ज-

न्तुन की पर्याई । जो थल मांहि अकाश रहो चिर होय पखेरू पंख लगाई ॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वर्णों कहुं पार न पाई । बारही० ॥ १० ॥ नरक मझार लियो अवतार परो दुख भार न कोई सहाई । जो तिल से सुख काज किये अघते सब नरकन मे सुधि आई । ता तिय के तन की तुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई । बारही० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु मही जह हैं अरु शर्कर रेत उन्हार बताई । पक प्रभा जु धुआवत है तमसी सुप्रभा सु महातम ताई ॥ जोजन लाख जुआयश पिण्ड तहां इक ही छिनमें गल जाई॥बारही० ॥ १२ ॥ जे अघ घात महा दुख दायक मै विषया रसके फल पाई । काटत हैं जबहीं निरदय तबहीं सरितामहिं देत बहाई ॥ देव अदेव कुमार जहां विच पूरव बेर बतावत जाई ॥ बारही० ॥ १३ ॥ ज्यों नर देह मिली क्रमसों करि गर्भ कुवास महा दुखदाई । जे नव मास कलेश सहे मलमूत्र अहार महाजयताई ॥ जे दुख देखि जबैं निकसो पुनि रोवत बालपनै दुखदाई ॥ बारही० ॥१४॥ योवन में तन रोग भयो कबहूं विरहानल व्याकुलताई । मान विषें रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख

मानत ताही ॥ आइ गयो छण में विरधापन यह नर भव यह भांति गमाई । बारही० ॥१५ ॥ देव भयो सुर लोक विषें तब मोहि रहो परया उर लाई । पाय बिभूति बड़े सुर की पर सम्पति देखते झूरत जाई ॥ माल जबें मुरझाय रहो थित पूरण जानि तबें बिललाई ॥ बारही० ॥ १६ ॥ जे दुख मैं भुगते भव के तिनके बरणों कहुं पार न पाई । काल अनादि न आदि भयो तह मैं दुख भाजन हो अघ माही॥ सो दुख जानत हो तुम ही जबही यह भांति धरी पर्यायी ॥ बारही० ॥ १७ ॥ कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई। मैं न बिगाड़ करो इनको बिन कारन पाइ भये अरि आई ॥ मात पिता तुम हो जगके तुम छाड़ि फिरादि करों कह जाई । बारही० ॥१॥ सो तुम सो सब दुःख कहो प्रभ जानत हो तुम पीर पराई । मैं इन को सत्संग कियो दिनहूं दिन आवत मोहि बुराई ॥ ज्ञान महा निधि लूट लियो इन रंक कियो यह भांति हराई ॥ वारही० ॥ १९ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सही सब यह इन दुष्टन की कुटलाई । पाप सु पुण्य दुहूं निज मारग में हमको यह फांसि लगाई॥ मोहि थकाय दियो जग से विरहानल देह दहै न बुझाई ॥ बारही० ॥२०॥

यह बिनती सुन सेवक की निज मारग में प्रभु लेउ लगाई । मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई ॥ मैं करदास उदास भयो तुम्हरी गुणमाल सदा उरलाई । बारही० ॥२१॥ देर करो मति श्री करुणानिधि जू पति राखन हार निकाई ॥ योग जुरे क्रम सो प्रभु जी यह न्याय हजूर भयो तुम आई ॥ आन रहो शरणागति हों तुम्हरो सुनि के तिहुं लोक बड़ाई । बारही० ॥ २२ ॥ मैं प्रभु जी तुम्हरी सम को इन अन्तर पाय करो दुसराई । न्याय न अन्त कटे हमरो न मिले हम को तुम सी ठकुराई ॥ सन्तन राखि करो अपने ढिंग दुष्टनि देहु निकास बहाई ॥ बारही० ॥२३॥ दुष्टन की सत्संगति में हमको कछू जान परी न निकाई। सेवक साहब की दुबिधा न रहे प्रभु जी करिये सु भलाई ॥ फेर नमों सु करों अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई । बारही० ॥२४॥ यह विनती प्रभु के शरणागत जे नर चित्त लगाय करेंगे । जे जग मे अपराध करे अघ ते क्षण मात्र भरे मे हरेगे ॥ जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधी स्वर लोक धरेंगे । देवीदास कहे कलसों पुनि से भवसागर पार तरेंगे ॥ २५ ॥ इति ॥

४२ अथ कृपण पचीसी ।

॥ सवैया इकतीसा ॥

एक समय देहुरा मे पंच सब बैठे हुते संघईने वात जात जावे की चलाई है ॥ भली है जो चलो गिरनार परसन जहां जनम सफल और कीर्त्ति वड़ाई है ॥ वहां बैठी हुती एक कृपण पुरुष नारि तिन यह सुनी आन घर मे चलाई है ॥ सुनोजी पियारे पीव आवे जो तुम्हारे जीव हम तुम दोनो चले भली बन आई है ॥१॥

पुरुष वचन ॥ बावरी भई है नारि काहू की लगी वयार बुद्धी गई मारी तोहे कहा दिस आई है ॥ मोसो तू कहत अविचारी औंधी सीधी बात मेरे कुल माहि कौनने चलाई है ॥ कहा तोहे भूत लगा ज्ञान सब दूर भागा समझना परे तुझे कौने वहकाई है ॥ मोसे तू कहत धन खरचन जात जानत है गोरी हम क्योंकर कमाई है ॥ २ ॥ स्त्री वाक्य ॥ जानत हो नाथ माया तुमही से ऊपजी है फेर के कमाय लीजो कहा याकूं नही है ॥ चले है भलो जु साथ नेमनाथ पूजवे को फेर ऐसो साथ कही पायवे को नही है ॥ ताते पिया जात

कीजे जग में सुयश लीजै भगवत पूजा कीजे यही सार सही है ॥ लक्ष्मी अनेक बार आयके बिलाय गई मुझे तो बताओ यह काके थिर रही है ॥ ३॥ पु० व०॥ बावरी न जाने बात कौन काज इतरात जग में सुयश कहा पोट वांध लीजिये ॥ तोड़िये वे हाथ जिन हाथ न खरच डारो अपनी कमाई धन आय नहीं दीजिये ॥ कहा तू सयानी भई मोहे समझायवे को गोद में से पूत डार पेट आश कीजिये ॥ जानत न तिया वौरी, अन्त तोह मत थोरी कहत चलन जात जातैं धन छीजिये ॥ ४ ॥ धन तौ बढ़ैगा दिन दिन सुन मेरे पीव धर्मके किये ते धन अति अधिकायगा ॥ धर्म के किये से यश कीरति प्रकट होत धर्म के किये से नर भली गति जायगा ॥ लक्ष्मी है चंचल फिरति चक्रके समान थिरता नहीं है धन क्षण में पलायगा ॥ तातें पिया जात कीजे, जग में सुयश लीजे, चार विधि दान दिये महा सुख पायगा ॥ ५ ॥ कहत कहा है रांड़, घर में भई है सांड़, मुझे किया चाहे भांड़ धन खरचाय के ॥ मोहे ना रहण देत दिन रात जीये लेत ताते हूं रहूंगो अब और ठौर जाय के ॥ घरते निकस गयो, जाय कहीं बैठ गयो तहां

एक मित्र मिलो पूछति बनाय के॥ कहा मेरे मित्र आज देख्यो दलगीर तो है कारण सो कौन मुझे कहो सम-झाय के॥६॥ क्या तो मेरे मित्र तेरे घर कुछ चोरी हुई क्या हमारे मित्रद्वार मागत फकीर है॥ क्या हमारे मित्र कुछ राज दण्ड देनो पड़ो किधों मित्र प्यारे तेरे तन कछु पीर है॥ क्या हमारे मित्र तेरे कोई महमान आ-या या हमारे मित्र तेरा मरा हितू बीर है॥ सांची बात कहो मोसे ताही को इलाज करूं मेरे मन शोच भयो भाई दलगीर है॥ ७॥ नातो मेरे मित्र कुछ चोरी भई मेरे घर नहीं मेरे मित्र कुछ राजा दण्ड लिया है॥ न तो कोई मरा न तो कोई महमान आया ना तो भीड़ पड़ी नहीं खोटा काम किया है॥ रात्रि दिन मेरे मित्र घर मे सतावे नारि वही बात कहे जाते फाटा जात हिया है। हमने यह लक्ष्मी कमाई लड़ कष्टों से उसने उपाय धन खोयवे का किया है॥८॥ कहा कहूं मेरे मित्र कही पड़ती न कछु कोई बात कहै जासू होत उत्पात है॥ फिर मेरे सब चले मोसे कहे, तू भी चाल एती सुन मित्र मेरो हिये फाट्यो जात है॥ जाइके चढ़ाये एक बार फल फूल पान देवता न खाय सब

माली लेजात है ॥ बड़ो दुःख कहो कैसे सहूं मेरे मित्र गिरनार गये घरबार भी नशात है ॥ ९ ॥ मेरी कही मान मित्र भलो दलगीर भयो पापिनी तिया को वेग पीहर पठाइये ॥ जाती चले जांय जब पचास साठ कोश परे आदमी के हाथ दे सदेश उसैं लाइये ॥ और भांति जीवन न पावो सुनो प्यारे मित्र तुझे मैं सिखाऊ वही घर पर सुनाइये ॥ तेरे बाप भाई के बधाई बटी वेग दे बुलाई तिया देर ना लगाइये ॥१०॥ तेरे बिना मेरे मित्र मुझे को सिखावे ऐसो मेरे प्राण राखे भाई जीवदान दियो है ॥ पर उपकारी तै विचारी भली बात वह गयो हुयो घर मेरो तैने राख लियो है ॥ ऐसो मंत्र कौन को फुरत ऐसे अवसर मे उत्तम उपाव तैं बताया यश लियो है ॥ तेरी मै बड़ाई करूं कहा तांई मेरे मित्र राम की दुहाई डूबते कू थाम लियो है ॥११॥ झूठा एक कागज बनाय के सुनाया जाय सुन तिया चिट्ठी तेरे पीहर से आई है ॥ क्षेम है कुशल तेरे भाई के पुत्र हुआ लिखी है जरूर तेरे भाई ने बुलाई है ॥ वेग चली जायने विलम्ब नही ठीक तिया दिन चार ही में बटत बधाई है ॥ घणे दिना

बीते पीछे गई न गई समान औसर के बीते कहा आ-
दर बड़ाई है ॥ १२ ॥ आदर बड़ाई मैने छोड़ी सब
स्वामी नाथ रहूं घर बैठी कही जाऊगी न आऊगी॥
मेरी देह नीकी नांहिं ज्वर सो भयो है मेर तातें कछु
औषधि महीना एक खाऊगी ॥ अब तो पड़ी है जी-
की देखों कब होऊ नीकी नीकी हुई तौभी मास दो
एक में न्हाऊगी । सुगात वचन ये कृपण मन राजी
भयो सुन्दर सलोनी तैंने बात कही साऊंगी ॥ १३ ॥
इतने में सघ गिरनार कोन सग चलो भट्टारक बोल
तब दुन्दुभी बजाई है ॥ जात चौरासी सब श्रावकोंमें
चिट्ठी गई चतुर्विधि संघ लिये गौट सब आई है
॥ बाजत नकारे अति भारे भारे लोग आये नाचत अ-
खाड़ इन्द्र कैसो छवि छाई है ॥ आगो लेत संघई करत
मनुहार बिनोधन धन कहै सब तेरी ये कमाई है ॥१४॥

नाचत तुरंग चले शोभित सुरग सबे झूलत गयन्द
मानों घटा जुर आई है ॥ रथन पै नाना भाति धुजा
फहरात जात पालकी अनेक भाति लोगो ने बनाई है।
बल्लमरुआ से छडी आगण अनूप बने प्यादे सवार ल-
निशान चमकाई है॥ ऐसी भाति गावत बजावत चलत
सब बोलत है जैजै शब्द बांटत वधाई है ॥१५॥

जहां जहां जात खरचत खात भली भांति ठौर २ होत जेवनार एकवान की ॥ बाटत तम्बोल गांव गांव२ प्रति भलीभांति कहां लौं बड़ाई कीजै संघई के दानकी॥ हंसी राजी खुशी से ली संघ गिरनार गयो देखत स-माज सब ले सुध आनकी ॥ संघ ही के साथी सब गमन अनन्द भरे बार बार करत बड़ाई सन्मान की॥ १६ ॥ गढ़ गिरनार की तलहटी में डेरा किये एकलें सुरग एक मानों बनवाये हैं॥ बाजत नगारखाना गरजत घन जैसे बिजली चमक से निशान चमकाये है । बरषत मेघ से सरस लोक दान देत शुण सुण कीरति अधिक लोक धाये हैं ॥ भिक्षुक अनेक देश देशन के मेले भये सुणी गिरनार जीपै जैनी लोग आये हैं ॥ १७ ॥

चढ़े गिरनार जी पै तीन प्रदक्षिणा दै जय जयकार बोल २ मन हर्षाये हैं ॥ अष्ट द्रव्य हाथ लिये पूजनेका ठाठ किये कञ्चन के थार साच मोती भरवाये हैं ॥ रतनों के दीपक दशांग धूप खासी खरीं आरती उता री तन फूले ना समाये है ॥ १८ ॥

पूजे नेमिनाथ जिन नाथ तीन लोकनाथ इन्द्र च न्द्रनाथ पूजा कीनी जादोपति की ॥ पृथिवी के नाथ सुरनाथ मृत्युलोकनाथ विद्याधरनाथ चक्रवर्तिपतिरति

की ॥ व्यंतरके नाथ हरिनाथ प्रति हरीनाथ नारद सहित मुनिगण सब जति की ॥ इत्यादिक पूजन हरष जुत किये पीछे सब ही ने फेर पूजा कीनी राजमति की ॥ १९ ॥

करी है प्रतिष्ठा बिम्ब हेम के बनाय नये चतुर्विध संघ सन्मान अति कीनो है ॥ यथायोग्य सब पहराय के तम्बोल दीने गुरु ने तिलक संघ पदवी को दीनोहै। मासएक पूजन विधान कियो भली भाति उलटे पलट फेर निज घर चीन्हो है ॥ सुनके नगर लोगआदर सू लेने आये कृपण सुणत मन संकट नवीनो है ॥२०॥ हाय २ हम हूं न गये ऐसे संघ बीच देखो माली ल्याओ सब लक्ष्मी बटोर के ॥ जो कि हम जाते नित खाते तो पराये शिर चढ़ती सो मैं ही लेतो मांग के बिटोरके ॥ फूल माल मैं ही देतो नेवज समेट लेतो पैसा टका लेतो सब ही के हाथ जोर के ॥ मैं तो मन्द भागी मुझे कुमतिने घेर लियो छाती शिरपीट पीट रोवै शिर फोरके ॥ २१ ॥

घर आय खाट परे लक्ष्मी का शोक करे काल ज्वर चढ़ो आन अङ्ग तापतयो है ॥ बायु पित्त कफ बढ़े कंठ घरड़ान लगो हाथ पांव तेरि मोरे बावरो सो भयो है॥ सन्निपात व्याधि भई सुधि बुधि भूल गई हाय २ कर देखो नाली धन लियो है॥ आरि तरु रुद्र परिणाम न

शरीर तजो मरके कृपण नर्क तीसरे में गयो है ॥ २२ ॥

कृपण की नारी भली क्रिया करी आलस की बार में दिवस सर्व पञ्चन को जिमायो है । देख सब लक्ष्मी विचार कियो मन बीच यह तो चञ्चल अनित्य भाव भायो है ॥ लगी खरचन धन जिनको भवन कीनो करी है प्रतिष्ठा धन खूबही लगायो है ॥ आप लई दिक्षा ना इच्छा थी भोगन की मनकी बैराग्य भाव प्रगट दिखायो है ॥२३॥ द्वादशानुप्रेक्षाय मनमे बैराग्य लाय केशका कराय लोच अर्जा कासों भई है ॥ तप करे द्वादश परीषह सहै दोय बीस तीजे चौथे दिन उठ उदण्ड व्रत वई है ॥ तिहूं काल सामायक दस विध धर्म पाले तीनो रतन हिए धार सूधी पर नई है ॥ ऐसे काल पूरो कीनो अंत संन्यास लीनो शुभध्यान देह त्याग तीजे स्वर्ग गई है ॥२४

छापै ॥ कृपण गयो मर नरक स्वर्ग सुख बनिता पायौ । धिक धिक वाको हुई नार जस जग में गायौ । द्रव्य गया नहिं सग युगल में को जननी के ॥ जश अपजश रहजात वुद्धि नहिं हो सबही के ॥ कहे लाल विनोदी जन सुनो द्रव्य पाय जश लीजियो । कर जाति प्रतिष्ठा यज्ञ शुभ दान सवन को दीजियो ॥ २५ ॥

इति कृपण पचीसी समाप्तः ।

४३ उपदेशपचीसी प्रारम्भः ॥

दोहा ॥

वीतराग के चरणयुग, वन्दो शीस नवाय ।

कहूंपदेशपचीसिका, श्रीगुरु के सु पसाय ॥ १ ॥

चौपाई - बसत निगोद काल बहुगयो । चेतन स व धान ना भयो ॥ दिन दश निकश बहुरि फिर परना । एतेपर एता क्या करना ॥ २ ॥ अनन्त जीवकी एक ही काय । जन्म मरण एकत्र कराय ॥ स्वासमे बार अठारह मरना । एते पर एता क्या करना ॥ ३॥ अक्षर भाग अनन्तम कहो । चेतनज्ञान यहां तक रहो ॥ कौन शक्ति से तहा कि करना । एते पर एता क्या करना॥४॥ पृथिवी तेज नीर अरुवाय । बनस्पती मे बसे सुभाय ऐसी गति में बहु दुःख भरना । एते पर एता क्या करना ॥ ५ ॥ केतिक काल यहां ही गयो । तहं से कढ़ विकलत्रय भयो ॥ ताको दुःख कुछ जाय न बरना । एते पर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशुपक्षी की काया पाई । चेतन तहां रहो लपटाई ॥ बिना विवेक कहो क्यों तरना । एते पर एता क्या करना ॥७॥ इम तिर्यच महादुःख सहे । सो काहूसे जाय न कहे ॥ पाप कर्म से

इस गति परना। एते पर एता क्या करना ॥ ८ ॥ ब-
हुरो पड़ो नर्क के माही। सो दुःख कैसे वरणें जाहीं।
भू दुर्गन्ध नाक जहां सरना। येतेपर येता क्या करना ॥
९॥ अग्नि समान तप्त भू कही। कितहू शीत महा घन
रही ॥ शूली सेज क्षणक ना डरनो। येतेपर येता क्या
करना ॥ १० ॥ परम अधर्मी असुर कुमार। छेदन भेदन
करें अपार॥ तिनके वश से नाहि उबरना। येते पर
येता क्या करना ॥ ११ ॥ रचक सुख जहं जियको नाहीं
बसते यहां नर्क गति माहीं ॥ देखत दुष्ट महाभय भ
रना। येते पर येता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग
भयो सुर अवतार। फिरत फिरत इस जगति मझार ॥
आवत काल देख घर हरना। येते पर येता क्या करे-
ना॥ १३॥ सुर मंदिर अरु सुख सयोग। निशिदिन
मन वांछित वर भोग॥ क्षण इक नाहि तहां से टरना।
येते पर येता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्मतर पुण्य
कमाय। तब कहुं लही मनुज पर्याय॥ तामें लयो ज-
रादिक मरना। एतेपर येता क्या करना ॥ १५ ॥ धन
यौवन सबही ठकुराई। कर्म योग से नव निधि पाई॥
सो स्वप्नान्तर कैसा झरना। येते पर येता क्या करना

॥ १६ ॥ निशि दिन भोग विषय लपटाना। जाने नाहिं कौन गति जाना॥ क्षण २ काल आयु को घरना। येते पर येता क्या करना ॥ १७ ॥ इन विषयन के तो दुःख दीनो । तबहूं तू तिनही रस भीनो ॥ तनक विवेक हृदय ना धरना । एते पर एता क्या करना ॥ १८ ॥ पर संगति कितना दुःख पावे । तब भी तो को लाज न आवे ॥ बासन सग नीर ज्यों जरना । एते पर एता क्या करना ॥१९॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न जाने । स्वपरविवेक न उर में आने ॥ क्यों होसी भव सागर तरना । एते पर एता क्या करना ॥ २० ॥ पाचों इन्द्रिय अति वटपारे । परम धर्म धन मूसन हारे ॥ खाय पिबहिं एता दुःख भरना । एते पर येता क्या करना ॥ २१ ॥ सिद्ध समान न जाने आप । यासे तोहि लगत है पाप । खोल देख घट पटहि उघरना । येते पर येता क्या करना ॥ २२ ॥ श्रीजिन बचन अमिय रस बानी । पीवे नाहिं मूढ़ अज्ञानी ।। जासे होय जन्म मृत्यु हरना । येते पर येता करना ॥ २३ ॥ जो चते तो है यह दाव । नोतर बैठा मगल गाव ॥ फिर यह नर भव स्वत न फरना । येते पर येता क्या करना ॥ २४ ॥ भैया

खिलबे बारम्बार। चेतन चेत भलो अवतार। हो दूलह शिव रानी करना। येते पर येता क्या करना॥२५॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय। सो परमातम ध्याइये यही मोक्ष सुख दाय ॥ २६ ॥ सत्रह सौ इकताल के मार्ग शिर शिर पक्ष। तिथि आकर गण लीजिये श्री रविवार प्रत्यक्ष ॥२७।

। इति उपदेश पचीसी सम्पूर्णम्।

४४ धर्म्म पच्चीसी।

॥ दोहा ॥

भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्म धुरन्धर धीर।
नमत सुरेन्द्र जगतमहरण, नमो त्रिविध गुरबीर ॥

॥ चौपाई ॥

मिथ्या बिषयन में रत जीव। ता तैं जग में भ्रमें सदीव॥ विविध प्रकार गहै परयाय। श्री जिन धर्म न नेक सुहाय ॥ २ ॥ धर्म बिना चहुं गत में परे। चौरासी लख फिर फिर धरे॥ दुख दावानल माहि तपन्त। कर्म करे फल भोग लहंत ॥३॥ अति दुर्लभ मानुष पर्याय। उत्तम कुल धन रोग न काय॥ इस अव-

सर मे धर्म न करे । फिर यह अवसर कबहुं न सरे ॥४॥ नर की देह पाय रे जीव । धर्म विना पशु जान स-दीव ॥ अर्थ काम में धर्म प्रधान । ता बिन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करे पुनीत । शुभ संगत आवे कर प्रीति ॥ बिघ्न हरे सब कारज करे । धन सो चारो कूने भरे ॥ ६ ॥ जन्म जरा मृत्यु के वस होय । तिहूं काल जग डोले सोय ॥ श्री जिन धर्म रसायन पान । कबहूं न रुचे उपजे अज्ञान ॥ ७ ॥ ज्यों कोई मूर्ख नर होय । हलाहल गहे अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्म पदार्थ त्याग । विषयनसों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥ मिथ्या ग्रह गहिया जो जीव । छांड़ धर्म विषयन चित्त दीव ॥ ज्यों पशू कल्प वृक्ष को तोड़ । वृक्ष धतूरे की भू जोड़ ॥९॥ नर देही जानो प्रधान । विसर वि-षय कर धर्म सुजान ॥ त्रिभुवन इन्द्रतने सुख भोग । पूजनीक हो इन्द्र न जोग ॥ १० ॥ चन्द्र विना निश गज बिन दन्त । जैसे तरुण नारि विन कंत ॥ धर्म विना त्यों मानुष देह । ताते करिये धर्म सुनेह ॥११॥ हय गय रथ पायक वहु लोग । सुभट बहुत दल चार मनो ग ॥ ध्वजा आदि राजा बिन जान ॥ धर्म बिना त्यों

नर भव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध विना है फूल। नीर विहीन सरोवर धूल ॥ ज्यों विन धन शोभित नहीं भोन। धर्म विना त्यो नरचिन्तोन ॥ १३ ॥ अरचे सदा देव अरहन्त। चर्चै गुरु पद करुणावन्त ॥ खरचे दान धर्मसों प्रेम। रुचे विषय सुफल नर एम ॥१४॥ कमला चपल रहे थिर नाहि। यौवन रूप जरा लिपटाहिं ॥ सुत मित नारी नाव संयोग। यह संसार स्वप्नको भोग ॥१५॥ यह लख चित्त धर शुद्ध स्वभाव। कीजै श्रीजिन धर्मउ-पाव ॥ यथा भाव तैसी गति गहै। जैसी गति तैसो सुख लहै ॥ १६ ॥ जो मूर्ख है धर्म कर हीन। विषय ग्रन्थ रतिव्रत नहीं कीन ॥ श्रीजिन भाषित धर्म न गहै। सो निगोद को मार्ग लहै ॥ १७ ॥ आलस मन्द बुद्ध है जास। कपटी विषय मग्न शठ तास ॥ कायरता मद परगुण ढकै। सो तिर्यञ्चयोनि लह सकै ॥१८॥ आर-रत रुद्र ध्यान नित करे। क्रोध आदि मत्सरता धरै॥ हिंसक बैर भाव अनुसरे। सो पापिष्ठ नरक गति परै॥ १९ ॥ कपटि हीन करुणा चित मांहि। है उपाधि यह भूले नाहि ॥ भक्तिवन्त गुणवन्त जो कोय। सरल स्व-भाव सो मानुष होय ॥ २० ॥ श्रीजिन वचन मग्न तप

दान। जिन पूजे दे पात्रहि दान। रहे निरन्तर विषय उदास। सोई लहे स्वर्ग आवास ॥ २१ ॥ मानुषयोनि अन्त के पाय, सुन जिन बचनविषय विसराय ॥ गहे महाव्रत दुद्धर वीर। शुकल ध्यान धर लहै शिव धीर ॥ २२ ॥ धर्म करत सुख होय अपार। पाप करत दुःख विविध प्रकार ॥ वाल गुपाल कहै सब नार। इष्ट होय सोई अवधार ॥ २३ ॥ श्रीजिन धर्म मुक्त दातार। हिंसा धर्म परत संसार ॥ यह उपदेश जान बड़ भाग। एक धर्म सो कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिन पद्युतिसार। निर्मल सम्यक् भाव निवार ॥ अन्त कषाय विषय कृषि करो। जो तुम मुक्ति कामिनी वरो ॥ २५ ॥

॥ दोहा ॥

वुधकुमदनीशशिसुखकरन, भोदुख नाशन जान। कह्यो ब्रह्मजिनदास यह, ग्रंथ धर्मकी खान ॥ २६ ॥ द्यानत जे बांचे सुनें, मनमें करै उछाय। तेपावै सुख सासतो मन वांछित फल दाय ॥ २७ ॥

इति श्री धर्म पच्चीसी सम्पूर्णम्।

४५ अध्यात्म पञ्चासिका ।

दोहा—आठ कर्म के बन्ध से बन्धे जीव भव वास। कर्म हरै सब गुण भरे नमों सिद्ध सुखरास ॥ १ ॥ जगत माहि चहुं गति विषै जन्म मरण वश जीव । मुक्ति माहि तिहुंकाल मे चेतन अमर सदीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहिं सेती कभी जग मे आवे नाहि । जग के जीव सदीव ही कर्म काट शिव जाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उदोत तैं जीव करैं परणाम । जैसे मदिरापान तैं करै गहल नर काम ॥ ४ ॥ तातै बांधैं कर्मको आठ भेद दुखदाय । जैसे चिकने गातमें धूलिपुंज जमजाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मन के उदय करै जीव बहु भाय । फिरके बांधे कर्म को यह संसार सुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावन त पुण्य हैं अशुभ भाव तैं पाप । दुहू आच्छादित जीवसो जानत्तके नहीं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादि के पावक काठ बखान । क्षीर नीर तिल तेल ज्यों खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बंध्यो गठडी विषै भानु छिपो घन माहिं सिंह पीञ्जरेमैं दियो जोर चले कछु नाहिं ॥ ९ ॥ नीर बुझावे आगको जले टोकनी माहि । देह माहि चेतन दुखी निज सुख पावे नाहिं ॥ १० ॥ तदपि देह सो क-

टत है अन्तर तन हैं संग। सो तन ध्यान अग्नि दहै तब शिव होय अभग ॥११॥ राग दोष तैं आपही पड़े जगत के माहिं। ज्ञान भाव ते शिव लहै दूजा संगी नाहिं ॥१२॥ जैसे काहू पुरुषके द्रव्य गड़ो घर माहिं। उदर भरे कर भीख से व्योरा जाने नाहिं ॥ १३ ॥ ता नर से किन्हीं कहा तू क्यों मांगे भीख। तेरे घर में निधि गढ़ी दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥ ताके बचन प्रतीत सो हर्ष कियो मन माहि। खोद निकाले धन बिना हाथ परै कछ नाहिं ॥१५॥ त्यों अनादिकी जीव के परजै बुद्धि बखान। मैं सुर नर पशु नरकी मैं मूर्ख मतिमान ॥१६॥ तासों सतगुरु कहत हैं तुम चेतन अभिराम। निश्चय मुक्ति सरूप हो ये तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥ काल लब्ध परतीत सो लख्यो आप में आप पूर्णज्ञान भये बिना मिटे न पुण्य अरु पाप ॥१॥पाप कहत हैं पुण्य को जीव सकल संसार। पापकहैंहैंपुण्य को ते बिरले मति धार ॥१९॥ बन्दीखाने में परे जाते छूटे नाहिं। बिन उपाय उद्यम किये त्यों ज्ञानी जगमाहिं ॥ २० ॥ साबुन ज्ञान बिराग जल कोरा कपड़ा जीव। रजक दक्ष धोवे नहीं बिमल न लहै सदीव॥२१॥

ज्ञान पवन तप अगन विन दहे मूस जिय हेम । क्रोड वर्ष लों राखिये शुद्ध होय मन केम॥२२॥ दरव कर्म नौ कर्म तैं भाव कम ते भिन्न। विकल्प नहीं शुवुधके शुद्ध चेतना चिन्न ॥ २३ ॥ चारों नाहीं सिद्ध के तू चारों के माहिं । चार विना से मोक्ष है और वात कछू नाहिं ॥२४॥ ज्ञाता जीवन मुक्ति है एक देश यह वात। ध्यान अग्नि विन कर्म बन जले न शिव किम जात ॥२५॥ दपेण काई अथिर जल मुख दीसै नही कोय । मन निर्मल थिर विन भये आप दरश क्यों होय ॥२६॥ आदि-नाथ केवल लह्यो सहस वर्ष तप ठान। सोई पायो भरत जी एक महूरत ज्ञान ॥ २७ ॥ राग दोष संकल्प है नय के भेद विकल्प । दोय भाव मिट जाय जब तब सुख होय, अनल्प ॥२८॥ राग विराग दुभेद सो दोयरूप परणाम। रागी भूमि या जगत के वैरागी शिव धाम ॥२९॥ एक भाव हैं हिरण के भूख लगे तृण खाय । एकभाव मजार के जीव खाय न अघाय ॥ २२ ॥ त्रिविध भाव के जीव बहु दीसत हैं जग माहि । एक कछू चाहे नही एक तजे कछु नाहि ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनन्त है मुक्ति अनादि अनन्त । जीव अनादि अनन्त है कर्म दु-

विधि सुन संत ॥३२॥ सब के कर्म अनादि के कर्म भव्य के अन्त । कर्म अनन्त अभव्य के तीन काल भटकंत ॥३३॥ फरश वरन रस गंध सुर पाचो जाने कोय । बोले हाले कौन है जो पूछे है सोय ॥ ३४ ॥ जो जाने सो जीव है जो माने सो जीव । जो देखे सो जीव है जीवे जीव सदीव ॥३५॥ जान पना दो विधि लसे विषै निरविषय भेद । निरविषयी सम्बर लसे विषयी आश्रव वेद ॥३६॥ प्रथम जीव श्रद्धान सो कर वैराग्य उपाय । ज्ञान क्रिया सो मोक्ष है यही बात सुखदाय ॥ ३७ ॥ पुद्गल से चेतन बंध्यो यह कथनी है हेय । जीव बंध्यो निज भाव सो यही कथन आदेय ॥३८॥ बंध लख निज और से उद्यम करे न कोय । आप बंध्यो निज सो समझ त्याग करै शिव होय ।३९॥ यथा भूप को देख के ठौर रीति को जान । तब धन अभिलाषी पुरुष सेवा करैं प्रधान ॥ ४० ॥ तथा जीव सरधान कर जाने गुण परयाय । सेव शिव धन आश धर समता सो मिल जाय ॥ ४१ ॥ तीन भेद व्यवहार सो सर्व जीव सब ठाम । अहरन्त परमात्मा निश्चय चेतन राम ॥ ४२ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म रति अहं बुद्धि सब ठौर । हित अनहित सरधे नही मूढ़न से शिर सौर ॥४३॥ आप आप पर पर लखे

हेय उपादेज्ञान । अव्रती देश व्रती महा व्रती सवे मतिमान ॥ ४४ ॥ जा पद में सव पद लसे दर्पन ज्यों अविकार । सकल निकल परमात्म नित्य निरञ्जन सार ॥ ४५ ॥ वहिरात्मके भाव तज अन्तर आत्म होय । परमात्म ध्यावे सदा परमात्म सो होय ॥ ४६ ॥ बूंद उदधि मिल होत दधि वाती फरश प्रकाश । त्यों परमात्म होत है परमात्म अभ्यास ॥ ४७ ॥ सब आगम को सार ज्यों सब साधन को धेव । जाको पूजे इन्द्र सो सो हम पायो देव ॥ ४८ ॥ सोहं सोह नित्य जपे पूजा आगम सार । सत सगत मे वैठना यहै करै व्यवहार ॥४९॥ अध्यात्म पञ्चाशिका माहि कह्यौ जो सार । द्यानत ताहि लगे रहो सब ससार असार ५० (इति)

४६ हुक्कानिषेध ॥

दोहा—बन्दों बीर जिनेश पद, कहो धर्म जगसार ।
बरते पचमकाल में जगजीवन हितकार ॥१॥
ताहि न त्यागे धूम सो, जारे निज उर जान ।
देखोचतुर बिचारके, तिन सम कौन अयान ॥२॥

चौपाई छन्द ॥

हैं जग में पुरुषारथ चार, तिनमें धर्म पदारथ सार ।

जाके सधे होय सब सिद्ध, याबिन प्रगटे एक न रिद्धि ॥३॥ सो पुनि दयारूप जिन कहो, करुणा विन कहुं धर्म न लहो । या में छहो काय को घात, लहिये कहां दया की बात ॥४॥ सो अब सुनो सबै विरतत सुनिके त्याग करो मतिवंत । हरित काय की चतगति येह, अग्नि संयोग भूमि गनि लेह ॥५॥ अग्नि नीर है याको साज, इन बिन सरै नही यह काज । काढत धूम बदन तें जान, होय समीर काय की हान ॥६॥ इहि विधि थावर दया न होय, त्रस को त्रास होय सुनि सोय । कुथू आदि जीव या माहि, एंचत स्वास सवै मर जाहि ॥७॥ उपजें जीव गुड खू बीच हुइ है तहां त्रसन की मीच । हिंसा होय महा अघ संच, ऐसे दया पले नहीं रंच ॥८॥ यही बात जाने सब कोय, जह हिंसा तहं धर्म न होय बहुरि धर्मनाश भयो जहा सकल पदारथ विनशे तहां ॥९॥ तातें निंद्य जान यह कर्म, पाप मूल खोवे धनधर्म। यामें कोई न देखे स्वाद, प्रात होतही अ व याद ॥१०॥ भव्यजीव सामायक करे, सब जीवन सो समता धरे । यह जोरे सब याको साज, और सकल विसरे घर काज ॥११॥ सेवै याहि पुरुष उर अ ध, यातें सुख आवे दु

गंन्ध । उत्तम जीवन को नही काम, सिलगे हलक होय उर स्याम ॥ १२ ॥ जाको ना आदरे सो कुवस्तु सब यामें परे । यातें सब पवित्रता जाय, परकी जूठ गहे मन लाय ॥१३॥ यासों कछू पेट नहीं भरे, हाथ जरें मुख कड़ुवो परे गिने न याकर रैनि सवार, बुरो व्यसन है देख विचार ॥१४॥ दोहा ॥

स्वाद नही स्वारथ नही, परमारथ नहीं होय ।
क्यों झपटें जग जूंठ को, यही अचंभो मोय ॥१५ ॥

चौपाई छन्द ॥

साधर्मी जन बैठे जहां, सोभे नहीं पुरुष वह तहां । जिमि हसन की गोट मझार, काग न शोभा लहे लगार ॥१६॥ यामें नफा नहीं तिल मान, प्रगट हानि है शैल समान। यह विवेक बुध हिर्दे धरो, ऐसी मान भूलमत करो ॥१७॥ इतनी विनती पेहठ गहे, मोह उदय त्याग नहीं कहे । तांसो मेरी कछु न बसाय, लाठी लेय न मारो जाय ॥ १८ ॥ दोहा ॥

सरल चित्त सुनि भेद यह, तजे आप सों आप ।
हठ ग्राही हठ गहि रहे, जिन के पोता पाप ।
हठी पुरुष प्रति यह बचन सर्व अकारथ जाहि ।
ज्यों कपूर को मेलिये, कूकुर के मुख माहिं।।२२।। भूधर

दास मन सों कही यही यथारथ बात। सुहित जान हृदय धरो, कोप करो मत भ्रात॥ २१॥ सबही को हित सीख है, जात भेद नहीं कोय। अमृत पान जोई करे, ताही को सुख होय।२२। कबित्त॥

जहर की सास दुष्ट दुलही हलाहल की बीछी की बहिन परपंच रूप साजी है! नानो करियारे की धतूरे की ममानी पितियानी बच्छनाग की जहान में बिराजी है। कहैं गंगादत्त वह पचावै धन्य प्राणी औ अफीम की जिठानी विष खोपरे की आजी है। माहुर की मौसी महतारी सिंघिया की यह तमाखू दई मारी को किन्ने उपराजी है॥ २३॥ चित्त को भ्रमाय देत मन को लुभाय लेत गुण कों न देखे कछु खाये क्या भलाई है। दशन बिनास करे मुख मे दुर्गन्धि लहे उष्णता की वाधा ने रक्तता सुखाई है॥ गर्दभ के मूत्रवत जामन लगाय कर कूषोकार बोय पुनि सब ह्री करि तपाई है। धन्य है खवय्यन को खाय जो तमाखू कों सभा माँझ दूर होय पुच पुची लगाई है॥ २४॥

लावनी॥

धर्म मूल आचरण बिगाड़ा इस का हेतु नहीं रहा इलम।

विवेक जाता रहा हियेसे सबकी जूठी पियें चिलम॥टेक॥ प्रथम तमाखू महा अशुच है म्लेच्छ इसको बनाते हैं। छूने योग्य नहीं वर कुलके अपना तोय लगातेहैं॥ इंही चिलम में धूम योग ते जीव असंख्य बताते है। पीते ही मरजांय सबी वह जिन श्रुति में गाते हैं॥ होती इस में अपार हिन्सा जरा दया नहीं आती गिलम! विवेक०॥ कौम रजीलों के साथ पीते गई आबरू ये क्या बनी है। हया दूर कर धरम लजाते उन्ही में जा गन की मत सनी है॥ बो चर्म गांजा पियें पिलावे उसी ने वुद्धि तेरी ये हनी है। स्वांस प्रगट कर वदन जलाता प्राण हरण को ये हरफनी है॥ लगाना दमका वहुत बुरा है पीते तन में पड़े खिलम। विवेक०॥ थावर त्रस कर सहित भरा जल कुवास का ये निधान हुक्का। सुतोय पड़ते सुजीव मरते हैं पापका ये निधान हुक्का॥ रोग भिन्न हो जाय कहैं नर पीते हैं हम यह जान हुक्का। शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अशुचि जान करियो दूर हुक्का॥ सीख सुगुरकी यही रूपचन्द त्यागो जल्द मत करो ख़िलम। विवेक०॥ २५॥ इति॥

४७ स्तोत्र भूधर दास कृत।

॥ दोहा ॥

कर जिन पूजा अष्ट विधि भाव भक्ति वहु भाय।
अब सुरेश परमेश थुति करत शीश निज नाय ॥१॥

॥ चौपाई ॥

प्रभु इस जग समर्थ ना कोय। जा से तुम यश वर्ण· न होय। चार ज्ञान धारी मुनि थकें। हम से मंद कहां कर सकें ॥ २ ॥ यह उर जानत निश्चय कीन। जिन महिमा वर्णन हम हीन ॥ पर तुम भक्ति थके वाचाल तिस वस होय गुहूं गुण माल ॥ ३ ॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवन धनी। जय चन्द्रोपम चूड़ामणी ॥ जय जय परम धर्म दातार। कर्म कुलाचल चूरणहार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन कन्त महन्त। अतुल अनंत चतुष्टय वंत॥ जय २ आश भरण वड़ भाग। तप लक्ष्मीक सुभग सुभाग जय २ धर्म ध्वजा धर धीर। स्वर्ग मोक्ष दातावर वीर जय रत्न त्रय रत्न करंड। जय जिन तारण तरण तरंड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृंगार। जय सशय वन दहन तुषार ॥ जय २ निर्विकार निर्दोष। जय अनन्त गुण माणिक कोष ॥ ७॥ जय जय ब्रह्मचर्य दल साज। काम

सुभट विजयी भटराज। जय जय मोह महा तरु करी। जय जय मद कुंजर केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचंड। मान महीधर दामिन दण्ड ॥ माया बेलि धनं-जय दाह। लोभ सलिल शोषण दिन नाह ॥ ९ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार। ज्ञान जहाज न पहुचे पार॥ तटही तट परडोले सोय। कार्य सिद्धि तहांहीहोय १० तुम्हारी कीर्त्ति बेलि वहु बढ़ी। यत्न विना जग मंडप चढ़ी ॥ और कुदेव सुयश निज चहैं। प्रभु अपने थल ही यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमे बिन ज्ञान। कीना मोह महा विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी। यह मुनि जन मिल निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म लता मिथ्या मत मूल। जन्म मरण लगें तहां फूल ॥ सो कबहूं बिन भक्ति कुठार। कटै नहीं दुःख फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प तरोवर चित्रा बेलि। काम पोर वा नवनिधि मेलि ॥ चिन्तामणि पारस पाषाण पुण्य पदार्थ और महान ॥ १४ ॥ ये सब एक जन्म सं-योग। किंचित सुख दातार नियोग ॥ त्रिभुवन नाथ तु-म्हारी सेव। जन्म जन्म सुख दायक देव ॥१५॥ तुम जग बाधव जगतात। अशरण शरण विरद विख्यात॥ तुम सब

जीवन रक्षा पाल । तुम दाता तुम परम दयाल ॥१६॥
तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान । तुम समदर्शी तुम सब
जान । जय जिन यज्ञ पुरुष परमेश । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु
महेश ॥ १७ ॥ तुम जग भर्ता तुम जग जान । स्वामि
स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम बिन तीन काल तिहुं
खोय । नाहीं शरण जीव को कोय ॥ १८ ॥ इस से
अब करुणानिधि नाथ । तुम सन्मुख हम जोड़ें हाथ॥
जब लों निकट होय निर्वाण । जग निवास छूटे दुःख
दान ॥१९॥ तब लों तुम चरणांबुज वास । हम उर होउ

[पद्धड़ी छन्द]

राजत स्वभाव मय त्याग ग्रान। उपकारी सब जीव न सुजान॥ आनन्द रूप नित रहैं आप। तज दिये सर्व विधि पुण्य पाप॥ २॥ सामान्य विशेष गुणात्म शुद्ध। स्व चतुष्टय युत राजत सुबुद्ध॥ त्रैकाल्य अर्थ पर्याय जान। हो वीतराग सब भर्म भान॥ ३॥ शुद्धात्म रस आस्वाद लेत। आकुलता बिन सब सुख समेत॥ लहि स्वच्छ स्वच्छन्द अमन्द ज्ञान। लोक रु अलोक जानो प्रमाण॥ ४॥ स्व सिक सम्पति देन हार। स्वयमेव करन जीवन उधार॥ प्रभु तुम सरूप लखि धरत धीर। मैं दुःखी भयो मो सुनो पीर॥ ५॥ भर्मी अनादि अज्ञान धार। सुखमानों परसे प्रीति पार॥ इन्द्रियो जनित सुख लीन होय। सब बधि आपनपो दयो खोय॥ ६॥ प्रिय त्रिय सुत मात पिता सुदेख। अपने माने कारण विशेष॥ पर्याय बनी असमान जाति। बिन भेद लिये यह सब सुहाति॥ ७॥ मैं करो कहा कछु ना बसाय। बिधि योग पाय सुधिबिसर जाय॥ तुमसे कबलों कहिये सुजान। जानते स्वपर परणति प्रमाण॥ ८॥ मैं सहों दुःख सो हरो नाथ। अब ही

कीजे निज चरण साथ ॥ तुम सब लायक ज्ञायक उदार रत्नत्रय सम्पति देनहार ॥९॥ उपकारी तुम बिन नहीं कोय। तुम ही से यह विधिहो सुहोय ॥ मैं बिरद सुनो अद्वितिय एक। आपन सम कर तारे अनेक॥१०॥ यह विरद धार मुझे तार देव। उपकार उचित हो करो एक॥ हो ज्ञाननन्द सरूपधार। रागादिक से मैं करो उद्धार ॥ ११ ॥ मो चाह रही ना कछू और। मैं चाहत हों निज भाव दौर ॥ महिमा दीखे अद्भुत जि- नेश। इच्छा पूरत ना कष्ट लेश ॥ १२ ॥ मुझ अन्त रंग उपजी जो चाह। सो तुम बिन निज कहों पीर काह सुख लहों स्वसम्वेदन जो आप। अब देहु मिटे सब मोह ताप ॥ १३ ॥

दोहा।

सब बिधि समर्थ हो प्रभु मैं विधिवस हों दीन।
चरण शरण निज जानके उदय करो स्वाधीन ॥१४॥

। इति सम्पूर्णम्।

४९ स्तोत्र दौलत राम कृत।

॥ दोहा ॥

सकल यज्ञ ज्ञायक तदपि निजानन्द रस लीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित अरि रज रहस विहीन ॥१॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

जय बीतराग बिज्ञान पूर । जय मोह तिमिर को हरन सूर ॥ जय ज्ञान अनन्तानन्त धार । दृग सुख वीर्य मडित अपार ॥ २ ॥ जय परम शान्ति मुद्रा समेत । भवि जन को निज अनुभूति देत ॥ भव भोग तजे मन बचन काय । तुम ध्वनि हो सब बिभ्रम नशाय ॥३॥ तुम गुण चिन्तन निज पर बिवेक । प्रकटै विघटै आपद अनेक ॥ तुम जग भूषण दूषण बियुक्त । सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त ॥ ४ ॥ अबिरुद्ध शुद्ध चेतन सरूप । परमात्म परम पावन अनूप ॥ शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परणति मय अछीण ॥५॥ अष्टादश दोष बिमुक्त धीर । स्व चतुष्टय मे राजत गंभीर ॥ मुनि गणधरादि सेवत महन्त । भव केवल लब्धि रमा धरन्त ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय जीव । शिव पद जात जे हैं सदीव ॥ भव सागर में दुख क्षार बार । तारण को और न आप तार ॥ ७ ॥ यह लख निज दुख गद हरण काज । तुमही निमित्त कारण इलाज ॥ जाने यासे मैं शरण आय । उचरो निज दुखजो

चिर लहाय ॥ ८ ॥ मै भ्रमो आप पद विसर आप। अपनाये विधि फल पुन्य पाप ॥ निज को पर का कर्ता पिचान। पर मे अनिष्ट इष्टता ठान ॥ ९ ॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि। ज्यो मृग मृगतृष्णा जान वार। तन परणति मे आयो चितार। कबहूं न अनुभवो स्वपद सार ॥१०॥ तुम को जाने विन नाथ क्लेश पायो सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु नारक गति सुर नर मझार। धर धर भव मरो अनन्त वार॥११॥ अव काल लब्धि वल ये दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शाति भयो मिट सकल द्वन्द। चाखो स्वात्म रस दुख निकन्द ॥१२॥ या से ऐसी अव करो नाथ। विछुडे न कभी तुम चरण साथ ॥ तुम गुण का नाछेव देव। जग तारण को तुम विरद एव ॥१३ ॥ आत्म के अहित विषय कषाय। इन मे मेरी परणति न जाय॥ मैं रहूं आप मे आप लीन। सो करो होउ जो निजाधीन ॥१४॥ मेरे न चाह कुछ और ईश। रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश ॥ सो कारज के कारण हो आप। शिव करो हरो मनमोह ताप ॥ १५ ॥ शशि शाति करण

तप हरण हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूषयों रोगजाय । त्यों तुम अनुभव विभ्रम नसाय ॥१६॥ त्रिभुवन तिहूं काल मझार कोइ । ना तुम विन निज सुखदाय होय ॥ सो उर यह निश्चय भयो आज । दुःख जलधि उवारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

तुम गुण गण सणि गण पती गणत न पायो पार ।
दौल अल्प मति किम करे नमों त्रियोग सम्हार ॥१८॥

५० स्तोत्र द्यानत राय कृत ।

[भुजंग प्रिया छन्द]

नरेन्द्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीस । शतेन्द्र सु पूजें भजें नाय यीसं ॥ मुनीन्द्रं गणेन्द्र नमें जोड़ हाथं । नमों-देव देवं सदा पार्श्व नथं ॥ १ ॥ गजेद्रं मृगेन्द्र गहो तू छुड़ावे । महा आग ते नाग ते तू बचावे । महा वीर ते युद्ध में तू जितावे । महा रोग ते वन्ध ते तू खुलावे ॥२॥ दुखी दुःख हर्त्ता सुखी सुख कर्त्ता । सदा सेवकों को महा नद भर्ता ॥ हरे यक्ष राक्षस्स भूतं पिशाचं । विषं डाकनी विघ्नके भय अवाचं ॥ ३ ॥ दरिद्रीन को द्रव्य

के दान दीने । अपुत्रीन को ते भले पुत्र कीने ॥ महा संकटो से निकाले विधाता । सबै सम्पदा सर्व को देहि दाता ॥४॥ महा चोर का वज्र का भय निवारे । महा पवनके पुञ्ज ते तू उबारे ॥ महा क्रोध की अग्नि को मेघ धारा । महा लोभ शैलेश को वज्र भारा ॥ ५ ॥ महा मोह अंधेर को ज्ञान भानुं । महा कर्म कान्तार को दौ प्रधानं ॥ किये नाग नागिन अधः लोक स्वामी हरो मान तू दैत्य को हो अकामी ॥ ६ ॥ तुही कल्प-वृक्षं तुही कामधेनु । तुही दिव्य चिन्तामणी नाग एवं॥ पशू नर्क के दुःख से तू छुडावे । महा स्वर्ग में मुक्ति में तू बसावे ॥७॥ करै लोह को हेम पाषाण नामी । रटे नाम सो क्यो न हो मोक्ष गामी ॥ करै सेव ताकी करे देव सेवा । सुने बयन सोही लहे ज्ञान मेवा ॥८॥ जपे जाप ताको नहीं पाप लागे । धरे ध्यान ता के सबे दोष भाजे ॥ विना तोह जाने धरे भव घनेरे । तुम्हारी कृपा से सरे काज मेरे ॥ ९ ॥ ॥दोहा॥

गणधर इन्द्र न कर सके तुम विनती भगवान ।
द्यानत प्रीत निहार के कीजे आप समान ॥१०॥ इति।

५१ वैराग्य भावना ।

॥ दोहा ॥

बीज राख फलभोगवं ज्यों किशान जग मांहिं ।
त्यों चक्री सुख में मगन धर्म विसारै नाहिं ॥

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द ॥

इस विधि राज्य करै नर नायक भोगे पुण्य विशाल । सुखसागर मैं मग्न निरन्तर जात न जानो काल ॥ एक दिवश शुभकर्म योग से क्षेमं कर मुनि बंदे । देखे श्रीगुरू के पद पंकज लोचन अलि आनंदे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिरनायो कर पूजा स्तुति कीनी । साधु समीप विनय कर बैठो चरणों में दृष्टि दीनी ॥ गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो । राज्यरमा वनतादिक जो रस सो सब नीरसलागो ॥ २ ॥ मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुधि भागी । भव तन भोग स्वरूप बिचारो परम धर्म अनुरागी ॥ या संसार महा वन भीतर भर्मत छोर न आवे । जन्मन मरन जरादों दाहे जीव महा दुःख पावे ॥ ३ ॥ कबहूं कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी । कबहूं कि

पशु पर्याय धरे ताहा वध बन्धन भयकारी । सुरगति मे परि सम्मति देखे राग उदय दुख होई । मानुष योनि अनेक विपति मय सर्व सुखी नहीं कोई ॥ ४ ॥ कोई इष्ट वियोगी बिलखे कोई अनिष्ट संयोगी । कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तनका रोगी ॥ किसही घर कलिहारी नारीके वैरी सम भाई । किस ही के दुख बाहर दीखे किस ही उर दुचिताई ॥५॥ केई पुत्र बिना नित झूरे होय मरे तब रोवे । खोटी सतति से दुख उपजे क्यो प्राणी सुख सोवे ॥ पुण्य उदय जिनके तिनकोभी नाही सदा सुख साता । यह जग वास यथार्थ दीखे स बही है दुःख दाता ॥ ६ ॥ जो संसार विषे सुख होतो तीर्थंकर क्यो त्यागे । काहे को शिव साधन करते स· यम से अनुरागे । देह अपावन अथिर घिनावनी इसमे सार न कोई । सागरके जलसे शुचि कीजे तो भी शुद्धि न होई ॥७॥ सप्त कुधातु भरी मल मूत्र चर्म लपेटी सो है । अन्तर देखत या सम जग में और अपावन को है ॥ नव मल द्वार स्रवैं निश वासर नाम लिये घिन आवे । व्याधि उपाधि अनेक जहा तहा कौन सुधी

सुख पावे ॥ ८ ॥ पोषत तो दुख दोष करे अति सोषत सुख उपजावे। दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूर्ख प्रीति बढ़ावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको बिरचन योग्य सही है। यह तन पाय महा तप कीजे इसमें सार यही है ॥९॥ भोग बुरे भवरोग बढ़ावे बैरी हैं जग जी के। वे रस होय विपाक समय अति सेवत लागैं नीके ॥ वज्र अग्नि बिष से बिष धर से हैं अधिक दुखदाई। धर्म रत्नको चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥१०॥ मोह उदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने। ज्यों कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग सयोग मनोहर मन वांछित जन पावे। तृष्णा नागिन त्यों त्यों फके लहर लोभ बिष लावे ॥ ११ ॥ मै चक्री पद पाय निरन्तर भोगे भोग घनेरे। तो भी तन क भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे ॥ राज समाज महा अघ कारण वैर बढ़ावन हारा। वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल इसका कौन पत्यारा ॥१२॥ मोह महा रिपु वैर बिचारे जग जीव संकट डारे। घर कारागर वनिता बेड़ी परजन हैं रखवारे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये

जिय को हितकारी । ये ही सार असार और सब यह चक्री जीय धारी ॥ १३ ॥ छोड़े चोदह रत्न नवोनिधि और छोड़े संग साथी । कोडि अठारह घोड़े छोड़े चोरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण तृणवत त्यागी । नीति विचार नियोगी सुत को राज्य दियो बड़ भागी ॥ १४ ॥ होइ निस्सल्य अनेक नृपति सग भूषण वसन उतारे । श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा पंच महाव्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्य धारी । ऐसी सम्पति छोड़ वसे वन तिन पद धोक हमारी ॥१५ ॥

॥ दोहा ॥

परिग्रह पोट उतार सब लीनो चारित्र पथ ।
निज स्वभाव मे स्थिर भये वज्र नाभि निग्रंथ ॥

इति वैराग्य भावना सम्पूर्ण ॥

५२ निर्वाण काण्ड भाषा ।

॥ दोहा ॥

वीतराग वन्दो सदा भाव सहित शिर नाय ।
कहो कांड निर्वाण की भाषा विविध बनाय ॥१॥

॥ चौपाई ॥

अष्टापद आदीश्वर स्वामि । वांस पूज्य चंपापुर नामि ॥ नेमनाथ स्वामी गिर नारि । वन्दों भाव सहित उर धारि ॥ २ ॥ चर्म तीर्थंकर चर्म शरीर । पावापुर स्वामी महावीर ॥ शिखर सम्मेद जिनेश्वर वीस । भाव सहित बन्दों जगदीश ॥३॥ वरदत्त बरांगदत्त मुनीन्द्र । सायर दत्त आदि गुण वृन्द । नगर तार वन मुनि अठ कोड । भाव सहित वन्दों कर जोड ॥ ४ ॥ श्री गिरि नारि शिखिर विख्यात । कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात ॥ शंवु प्रद्युम्न कुमर दो भाय । अनुरुद्धादि नमो तिन पाय ॥५॥ रामचन्द्र के दो सुत वीर । लाड नरेन्द्र आदि गुण धीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्ति मझार । पावागिरि बन्दों निर्धार ॥ ६ ॥ पांडव तीन वड़े रा जान । आठ कोट मुनि मुक्ति प्रमाण । श्रीसेतुंजय गिरि के शीस । भाव सहित वन्दों निशिदीश ॥ ७ ॥ सात वलभद्र मुक्ति को भये । आठ कोड़ि मुनि औरहू भये ॥ श्री गज पन्थ शिखिर सुविशाल । तिनके चरण नमो तिहुकाल ॥८॥ राम हनू सुग्रीव सुडोल । गवय गवा-

रुय नील महा नील ॥ कोडि निन्यान्वे मुक्ति प्रमाण। तुंगी गिरि वन्दो धर ध्यान ॥ ९॥ नंग अनग कुवर दो जान । पञ्च कोडि अरु अर्ध प्रमाण ॥ मुक्ति गये सोना गिर शीस । ते वन्दो त्रिभुवन के ईश ॥ १० ॥ रावण के सुत आदि कुंवार । मुक्ति गये रेवा तट सार॥ कोड पञ्च अरु लाख पचास । ते वन्दो धर परम हुलाश ॥११॥ रेवा नदी सिद्ध वर कूट । पश्चिम दिशा देह यहा छूट॥ द्वे चक्री दश काम कुमार । आठ कोडि वन्दो भव पार १२ वडवानी वड नगर सुचंग । दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग ॥ इन्द्रजीत अरु कुम्भजु करण। ते वन्दों भव सागर तर्ण ॥ १३ ॥ सुवर्ण भद्र आदि मुनि चार । पावा गिरवर शिखर मझार ॥ चेलना नदी तीर के पास । मुक्ति गये वंदों नित तास ॥ १४ ॥ फलहोडी वर गांव अनूप । पश्चिम दिशा दौन गिरि रूप ॥ गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहां । मुक्त गये वन्दो नित तहां ॥१५॥ व्याल महा व्याल मुनि दोय । नाग कुमार मिले त्रय होय ॥ श्री अष्टापद मुक्ति मझार । ते वन्दों नित सुरत सम्हार ॥१६॥ अचलापुर को दिशि ईशान। तहां मेढ़ गिरि

नाम प्रधान ॥ साढ़े तीन कोडि मुनिराय । तिनके चरण नमों चितलाय ॥ १७ ॥ वंश स्थल वन के ढिग जोय । पश्चिम दिशा कुंथुगिरि सोय ॥ कुल भूषण देश भूषण नाम । तिनके चरणों करों प्रणाम १८ दशरथ राजा के सुत कहे । देश कलिंग पञ्च सौ लहै ॥ कोट शिला मुनि कोडि प्रमाण । वन्दन करों जोड़ युग पान १९ समोशरण श्रीपार्श्व जिनेन्द्र । रेसंह गिरि नयनानन्द ॥ बरदत्तादि पञ्च रिषिराज । ते बन्दों नित धर्म जहाज ॥ मथुरापुर पवित्र उद्यान । जम्मू स्वामी जी निर्वाण ॥ चर्म केवली पञ्चम काल । ते वन्दों नित दीन दयाल ॥ २१ ॥ तीन लोक के तीरथ जहां । नित प्रति बन्दन कीजे तहां ॥ मन वच भाव सहित शिर नाय् । बन्दन करो भविक गुण गाय ॥ २२॥ संवत सत्रह सौ इकताल । अश्विन शुदि दशमी सुविशाल ॥ भैया बन्दन करै त्रिकाल । यह निर्वाण कांड गुण माल ॥ २३ ॥

इति निर्वाण काण्ड भाषा सम्पूर्णम् ॥

५३ निर्वाण कांड गाथा।

[प्राकृत गाथा]

अट्ठावयम्मि उसहो। चम्पाये वासुपुज्ज जिणणाहो। उज्जन्ते णेमि जिणो। पावाए णिव्वुदो वीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिन्दा। अमरासुर वन्दिदा धुदकिलेसा ॥ सम्मेदा गिरि सेरे। णिव्वाण गया णमो तेस ॥२॥ वरदत्तो य वरांगो। सायर दत्तो य तारवर णयरे ॥ आहुट कोडि मुणिया। णिव्वाण गया णमो तेस ॥ णेमि सामि पज्जुण्णो सम्बु कुमारो तहेव अणुरुद्धो ॥ बाहत्तरि कोडीओ। उज्जन्ते सत्तसय सहिया ॥४॥ राम सुवा विण्णि जणा लाड णरिंदाणं पंच कोडियो ॥ पावागिरि वरसेरे। णिव्वाण गया णमो तेस ॥५॥ पाण्डु सुवा तिण्णि जणा। दविण णरिंदाण अट्ठकोडिओ। सेतुंजय गिरि सेरे। णिव्वाण गया णमो तेस ॥६॥ सत्त जे बलभद्दा। जादव णरिंदाण अट्ठ कोडिओ॥ गजपंथे गिर सेरे। णिव्वाण गया णमो तेस ॥७॥ राम हनू सुग्रीवो गव गवाक्ख णील महणीलो ॥ णव णवदी कोडिओ। तुंगी गिर णिव्वुदो वन्दो ॥८॥ णंग अणंग कुमारा। कं डी

पचर्ध मुणिवरा सहिया। सोनागिरि वर सेर। णिव्वाण
गया णमो तेस ॥९॥ दस मुह राइस सुत्रा। कोडी प-
चद्ध मुणिवरा सहिया ॥ रेवा उभई तड़ागो। णिव्वा०
॥१०॥ रेवा नद्दी तीरे। पच्छिम वाव्यव्य सिद्ध वर
कूट। दो चक्की दह कम्मे। हूंठ कोडि णिव्वदो बन्दो
॥११ बड़ वाणी बण णयरे। दक्खिण बायव्य चूल गिर
सेर ॥ इन्द जित कुम्भकरणो। णिव्वाण गया णमो तेस
॥१२॥ पावा गिरवर णियरे। सुवराण भद्दाय मुणि-
वरे चउरे ॥ चेलना नदी तड़ग्गो। णिव्वा०॥१३॥ फल
होड़ी बड़गम्मे। पच्छिम वाइव्वदोन गिर सेर ॥ गुर-
दत्तादि मुणिन्दो। णिव्वा० ॥१४॥ णागकुमार मुणिन्दो
वालि महावालि छेय अव्भेआ ॥ अट्ठापद गिरि सेर।
णिव्वा० ॥१५॥ अचला पुर बर णयर। ईसान बाइव्व
मेढ़ि गिरसेर ॥ आहूंठ कोडि सहिया। णिव्वा० ॥१६॥
वसत्थल वर णियर पश्चिम बाइव्व कुथु गिरि सेर॥ कुल
भूषण देशभूषण। णिव्वा०॥१७॥ जस धर राइत्स सुत्रा।
पच सयाभूत्र कलिग तेशम्मि॥ कोडि सिजा कोडि मुणि
। णिव्वा० ॥ १८ ॥ पासस्स स नासरण। सहिया वरदत्त

मुणिगण पणा ॥ रेसहा गिरि मेर । णिठ्याठ ॥ १९ ॥
पासत्तह तहिणदण । णायदह मगणापुरी वन्दे ॥ णासा
रस्मं पहुण । मुणि मुठ्वह तहेव यन्दामि ॥ २० ॥ वाणु
वणि नाह यदमि । पोदना पुर हत्थिना पुर वन्दे ।
जिण शान्ति कुथ अरहो । वाणारसी पासु पासंण ॥२१॥
मुहराय जह रुत्ते । वीर पास तहेव वन्दानी । जम्बु
मुणिंदो वन्दमि । णिठ्वह पत्त ड वण वहणं ॥ २२ ॥
पञ्च कल्याण टाणइ । जीगं सी मंघ जात लोयम्मी ।
मण वयकाय तिसुद्दो । सिद्दो सिद्दा णमस्मामी ॥ २३॥
अगल देवयन्दामी । यणाणयरत्तीउ अणादीयन्दे । पा-
सम्सिव पुरवन्दमि । हुलह गिरि संख देवम्मि ॥ २४ ॥
गोमह देव वन्दमि । पञ्चसया धनुप देह उच्चन्त । देवा
कुणान्ति वि्टी केसर कुसुमाणि तवरम्मी ॥ २५ ॥ णि
व्वाण ठाण जाणयि । अइसह सहियाण अइसहे सहि
या संजाद मच्चलोए । मव्वसिरसाण ममस्मासी ॥ १६ ॥
जो जण पढ़य तियाल । णिठ्वह करणान्त भाउ शुद्दीये।
भुमइ नर सर सुक्ख । पच्छामि लहेह णिव्वाणम् ॥२७॥
इति समाप्तम् ।

५४ आलोचनापाठ ।

॥ दोहा ॥

बन्दूं पांचो परमगुरु, चौबीसो जिनराज ।
करूं शुद्ध अलोचना, सिद्ध करन के काज ॥ १ ॥

॥ छन्द ॥

सुनिये जिन अर्ज हमारी, हम दोष किये अतिभारी। तिनकी अब निर्वृत्ति काज, तुम शरण लयो जिनराज ॥ २ ॥ एक वे ते चो इन्दीवा, मन रहित सहित जे जीवा। तिन की नहीं करुणा धारी, निर्दय हो घात विचारी ॥३॥ समरम्भ समारम्भ, आरम्भ। मन बच तनु कीनो प्रारंभ। कृतिकारित मोदन करके, क्रोधादि चतुष्टय धरके ॥ ४ ॥ शत आठ जो इन भेदनते, अघ कीने परछेदनते। तिन की क्या कहों कहानी, तुम जानत केवल ज्ञानी ॥५॥ बिपरीत एकान्त विनयके, संशय अज्ञान कुनयके, । वश होय बहुरि अघ कीने, बचसे नहीं जात कहीने ॥६॥ कुगुरों की सेवा कीनी, केवल अदया कर भीनी। तामें मिथ्यात्व बढ़ायो, चहुगति मे दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसापुन झूठ जो चोरी, पर वनिता

में दुखकारी। आरम्भ परिग्रह भीने, पनपापनो या विधि कीने॥ ८॥ सपरस रसना घ्राननको दृगकान विषय सेवनको। बहुकर्म किये मनमाने, कुछ न्याय अन्याय न जाने॥९। फल पंच उदम्बर खाये, मद्य मांस मधु चित भाये। नहीं अष्टमूल गुण धारे॥ सेयेकुव्यिसनदुःखकारे ॥१०॥ द्वाइस अभक्ष जिन गाये, सोभी निशिदिन भुंजाये। कुछ भेदाभेद न पायो ज्योंत्योंकरउदरभरायो॥ ११ ॥ अनंतानुबन्धी सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो। संज्वलन चौकड़ी गुनियें, सब भेद सो षोडश मुनिये॥ ॥१२॥ पुनि हास्य अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग। पनबीस जो भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥१३॥ निद्रा वश शयन कराया, स्वप्ने मे दोष लगाया। फिर जाग विषय वन धायो, नानाविधि विषफल खायो॥ १४॥ आहार विहार निहारा, इन मे नहीं यत्न विचारा। बिन देखे धरा उठाया, बिन सोधा भोजन खाया, ॥१५॥ जब ही सो प्रमाद सतायो, बहुविधि बिकल्प उपजायो। कुछ सुधि बुधिनाहि

ढिंग लीनी, सो भी सदोष हम कीनी। भिन्न २ सो कैसे कहिये, तुम ज्ञान विशेष सबलहिये ॥ १७ ॥ हाहा मै दुष्ट अपराधी, त्रिसजीवों का जो विराधी। स्थावर रक्षा ना कीनी, उसर में करुणा नहीं लीनी ।' १८ ॥ पृथिवी बहुखोद कराई, महलादिक जगह चुनाई। बिन छानो पानी डोहलो। पंखासे पवन झकोलो ॥१९॥ हाहा मैं अदयाचारी, बहुहरित जो काय विदारी। यामें जीवोंके खंदा, हम खाये धर आनंदा ॥२०॥ हाहा मैं प्रमाद वशाई, बिन देखे अग्नि जलाई। तामध्यजीव जो आये, तेसव परलोक सिधाये ॥ २१ ॥ बीधी अन्नराशि पिसावो, ईंधन बिनसोधजलाओ। झाडू ले जगह वुहारी, चिटियादिक बहुत विदारी २२ जल छान जीवानी कीनी, सो भी भूडाल सो दीनी। नही जल थानक पहुंचाई, किरिया बिन पाप उपाई२३ जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि कुल बहु घात करायो नदियों में चीर धुवाये, कोसों के जीव मराये। अन्नादिक सोध कराये, तामध्यजीव निकराये ॥ तिन का नही यत्न कराओ, गलिआरे धूप डरायो ॥ २५॥ फिर द्रव्य

कमायन काढे, चतुरारम्भ दिनामाते । किये सब तृष्णा वश भारी, करुणा नहीं रंच विचारी ॥ २६ ॥ इत्यादिक पाप अनंत, हम कीने श्री भगवन्त । सन्तति चिर काल उपाये, वाणी से कहत न जाये ॥ २७ ॥ ताको जो उदय अब आयो, नाना विधि मोहि सतायो । फल भुगतत जो दु:ख पाऊं वचनै कैसे करगाऊं, ॥ २८ ॥ तुम जानत केवल ज्ञानी दु:ख दूर करो शिव थानी । हम तो तुम शरण लही है, जिन तारण विरद सही है ॥ २९ ॥ इक ग्रामपती जो होवे, सो भी दु खिया दु:ख खोवे । तुम तीन भवन के स्वामी, दु:ख मेटो अन्तर्यामी ॥३०॥ द्रौपदी को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो । अञ्जन से किये अकामी, दु:ख मेटो अन्तर्यामी, ॥३१॥ मेरे औगुण न चितारो, जिन अपना विरद निहारो । सब दोष रहित करो स्वामी, दुख मेटो अन्तर्यामी ॥ ३२ ॥ इन्द्रादिक पद नही चाहूं, विषयो में नाहिं लुभाहूं । रागादिक दोष हरी जे, परमात्मनिज पद दीजे ॥ ३३ ॥

दो०—दोष रहित जिन देवजी, निज पद दीजे मोहि ।
सब जीवो को सुख बढ़े, आनंद मंगल होहि ॥३४॥

अनुभव मणि के पारखी, जौहरी आप जिनेन्द्र।
यही सुवरमोहि दीजिये, चरण शरण आनद ॥ ३५ ॥

५५ संकटहरण।

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणानिधान जी। अवमेरी बिथा क्यों ना हरो बार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहान के जिनराज आपही। ऐबो हुनर हमारा कुछ तुमसे छिपा नही ॥ बेजान में गुनाह जो मुझ से बनगया सही। ककरीके चोर को कटार मारिये नही हो दीन० ॥ १ ॥ दुःखदरद दिलका आपसे जिसने कहा सही। मुशकल कहर बहरसे लई है भुजा गही ॥ सब वेद और पुराण में परमाण हैयही। आनन्द कन्द श्री जिनन्द देव है तूही ॥ हो दीन० ॥ २ ॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती। गगामें गिराहने गही गज राज की गती ॥ उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें सती। भय टारके उभार लिया हो कृपापती ॥ हो० ३ ॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा। सीता से सत्य लेनेको जब रामने कहा॥ तुम ध्यान धर जानकी पग धारती तहां। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल ल-

विशाला । तो कुम्भ में से काढ भला नाग ही काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जो डाला । तत्काल ही वो नाग हुआ फूल की माला ॥ हो० १० ॥ जब राजरोग था हुआ श्रीपालराजको । मैना सती तप आप को पूजा इलाज को ॥ तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को । वह राज भोग २ गया मुक्तिराजको ॥ हो० ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया । रानी के कहे भूपने शूलीपै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया । शूली से उतार उसको सिंहासन पै विठाया ॥ हो० १२ ॥ जब सेठ सुधन्ना जी को वापी में गिराया । ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने में ध्याया तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया ॥ हो०१३ ॥ एक सेठ के घरमें किया दारिद्र ने डेरा । भोजन का ठिकाना भी था नही सांझ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान मे घेरा । घर उसके तब करदिया लक्ष्मी का वसेरा ॥ हो० १४ ॥ वलिवाद में मुनिराज सो जब पार न पाया । तब रातको तलवार ले शठ मारने आ-

या ॥ मुनिराज ने निज ध्यान में मनलीन लगाया । उस वक्त हो परतक्ष तहा देव वचाया ॥ हो० १५ ॥ जब राम ने हनुमन्त को गढ़लंक पठाया । सीता की खबर लेने को फिलफौर सिधाया ॥ नग वीच दो मुनिराज की लख आग में काया । झटवार मूसलधार से उपसर्ग बुझाया ॥ हो० १६ ॥ जिननाथ ही को माथ निवाता था उदारा । घेरे मे पड़ा था वह कुम्भकरण विचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकट में उवारा । रघुवीर ने सब पीर तहा तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांव मे वेरी । उस वक्त तुम्हें ध्यान में ध्याया था सवेरी । तत्काल ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी वेरी । तुम राजकुंवर की सभी दुःख द्वन्द्व निवेरी ॥हो०१८ ॥ जब सेठ के नन्दन को डसा नाग जु कारा ॥ उस वक्त तुम्हें पीर मे धरधीर पुकारा ॥ तत्काल ही उस वाल का विषभूरि उतारा । वह जाग उठा सो के मानो सेज सकारा ॥हो० १९ ॥ मुनि मानतुङ्ग को दई जब भूपने पीरा । ताले में किया बन्द भरी लोहे जंजीरा । मुनीश ने आदीश की थुति की है गंभीरा । चक्रेश्वरी तब आन

के झट दूरकी पीरा ॥ हो० २० ॥ सिव कोट ने हठला किया सुमन्त भद्र सो। शिवपिण्डकी वन्दन करो संको अभद्र सो॥ इस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो। जिन चन्द्र की प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्र सो ॥हो०२१॥ सूवे ने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया। मैंडक ले चला फूल भरा भक्त का भाया॥ तुम दोनों को अभिराम स्वर्गधाम बसाया। हम आपसे दातार को लख आजही पाया ॥ हो० २२ ॥ कपि स्वानसिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यंच जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे ॥ इत्यादि को सुरधाम दे शिवधाम में धारे। हम आपसे दातार को प्रभु आज निहारे ॥ हो० २३ ॥ तुम ही अनन्त जन्तु का भय भीड़ निवारा। वेदो पुराणमें गुरु गणधर ने उचारा ॥ हम आपकी शरणागति में आके पुकारा। तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छु अहारा ॥हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी। आनन्द कन्द वृन्द को हो मुक्तिके दानी॥ मोहि दीन जान दीनबन्धु पातक भानी। संसार विषय धार तार अन्तर जामी ॥ हो० २५ ॥ करुणानिधान वान को अव

क्यो न निहारो। दानी अनन्त दानके दाता हो सभारो॥ वृष चन्द नन्द वृन्दको उपसर्ग निवारो। संसार विषमक्षार से प्रभु पार उतारो॥ हो दीन बन्धु श्रीपति करुणा-निधान जी। अब मेरी विथा क्यों ना हरो वार क्या लगी ॥२६॥ सम्पूर्णाम् ॥

५६ दुःख हरण।

[चाल छन्द]

श्रीपति जिनवर करुणा इतनी दुख हरण तुम्हारा बाना है। मत मेरी वार अवार करो मोहि देहु विमल कल्याण है॥ टेक॥ त्रैकाल्यक वस्तु प्रत्यक्ष लखो तुम सों कछु वात न छाना है। उर आरत मेरे जो बरते निश्चय सो तुम सब जाना है॥ अब लोपो व्यथा मत मौन गहो नहीं मेरा कहीं ठिकाना है। हो राज विलोचन सोच विमोचन मैं तुम सों हित ठाना है॥१॥ सब ग्रन्थन में निर्ग्रंथन में निर्धार यही गणधार कही। जिन नायक जी सब लायक हो सुखदायक क्षायक दान मई॥ यह बात हमारे कान पड़ी जब आन तुम्हारी शरण गहीं। मत मेरी वार अवार करो जिन नाथ सुनो यह बात

सही॥२॥ काहूको भोग मनोग करो काहूको स्वर्ग छिनाना है। काहू को नाम नरेश पती काहूको ऋद्ध निधाना है॥ अब मो पर क्यों न कृपा करते यह क्या अंधेर जमाना है। इन्साफ करो मत देर करो सुख वृन्द भजो भगवा-ना है ॥ ३ ॥ दुख कर्म मुझे हैरान किया जब तुम सों आनि पुकारा है। समरत्थ सवी विधि सो तुम हो तुमही लग दौर हमारा है ॥ खल घायल पालक बालक क्या नृप नीति यही जगसारा है। तुम नीति निपुण त्रैलोक पती तुम्हरी शरणागत धारा है ॥ जब से तुम से पहिचान भई तब से तुम ही को जाना है। तुम्हरे ही शासन का स्वामी हम को शरणा सरधाना है ॥ जिन को तुम्हरो शरणागत है तिनको यमराज डराना है। यह सुयश तुम्हरे सांचे का यश गावत वेदपुराना है ॥ ५ ॥ जिस ने तुम से दिल दर्द कहा तिस का दुःख तुम ने हाना है। अघ छोटा मोटा नाश तुरत सुख दिया तिन्हें मन माना है ॥ पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया असमाना है। भोजन था जिस के पास नहीं सो किया कुवेर समाना है ॥ ६ ॥

चिंतामणि पारस कल्पतरु सुख दायक यह परधाना है। तुम दासनके सब दास यही हमरे मन मे ठहराना है ॥ तुम भक्तन को सुर इन्द्रपती फिर चक्रवती पद पाना है। क्या बात कहों विस्तार बढ़े वे पावें मुक्ति ठिकाना है ॥७॥ गति चार चौरासी लाख विषे चिन्मूरति मेरा भटका है। हो दीन बन्धु करुणा निधान अबलों न मिटो वह खटका है ॥ जब योग मिलो शिव साधन को तब विघन कर्म ने हटका है। अब विघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है ॥ ८ ॥ गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया और अंजन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपद रूप किया मैना का संकट टारा है ॥ ज्यों शूली से सिंहासन और बेड़ी को काटि बिडारा है त्यो मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकों आस तुम्हारा है ॥ ९ ॥ ज्यो फाटक टेकत पांव खुला और सर्प सुमन कर डाला है। ज्यो खड्ग कुसुम का माल किया बालक का जहर उतारा है। ज्यो सेठ विपति चक चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तारा है। त्यो मेरा सकट दूर करो प्रभु

मोकों आस तुम्हारा है ॥१०॥ यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं और सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित शुद्धि दिशा शिव थाना है॥ तद् भक्तन को भयभीत हरो सुख देत तिन्हें जु सुहाना है। वह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारे को क्या पावे पार सयाना है ॥११॥ दुख खण्डन श्री सुख मण्डन को तुम्हरा यश परम प्रमाना है। वरदान दिया यश कीरत को तिहुंलोक ध्वजा फहराना है॥ कमलाकर जी कमला धर जी करिये कमला अमलाना है। अब मेरी व्यथा अवलोपो रमापति रंच न वार लगाना है॥ १२॥ हो दीनानाथ अनाथ हितू जिन दीनानाथ पुकारी है। उदयागत कर्म बिपाक हला हल मोह व्यथा निरवारी है॥ तो और आप भव जीवनको तत्काल व्यथा निरवारी है। वृन्दावन अब ये अर्ज करे प्रभु आज हमारी बारी है॥ १३॥

॥ दोहा ॥

प्रभु तुम दीनानाथ हो, मैं अनादि दुखकंद।
सुनि सेवक की बीनती, हरो जगत दुखफंद॥

॥ इति ॥

५७ जिनेन्द्र स्तुति ।

(गीता छन्द)

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरणय जिनेश जी । तुम अधम तारण अधम मम लखिमेट जन्म कलेशजी ॥ टेक ॥ तुम मोह जीत अचीत इच्छातीत शर्मामृत भरे । रजनाश तुम वरभास दृग नभ ज्ञेय सब इक उड़ धरे ॥ रटरास घाति अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो । सब रहित दूखण त्रिजगभूषण अज अमल चिद्रूप हो ॥१॥ इच्छा बिना भवभाग्य ते तुम ध्वनि सुहोय निरक्षरी । षट् द्रव्य गुण पर्यय अखिल युत एक क्षण में उच्चरी ॥ एकान्त वादी कुमति पक्ष विलिप्त इभ ध्वनि मद हरी । संशय तिमिर हर रविकला भव शस्य को अमृत झरी ॥२॥ वस्त्राभरण विन शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरे । नाशाग्रदृष्टि विकार बर्जित नि-रखि छवि सकट टरे ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि सूर्य प्रभा धरे । देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुट मणि द्युति विस्तरे ॥३॥ अतर वहिर इत्यादि लक्ष्मी

तुम असाधारण लसे। तुम जान पाप कलाप नासे ध्यावते शिव थल वसे। मैं सेय कुदृग कुबोध अव्रत चिर भ्रमो भववन सवे। दुख सहे सर्व प्रकार गिर सम सुख न सर्षप सम कवे ॥ ४ ॥ पर चाह दाह दहो सदा कवहूं न साम्य सुधा चखो। अनुभव अपूरव स्वादु विन नित विषय रस चारो भखो॥ अव वसो मो उर में सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहो। वर भक्ति अतिदृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥५॥ एकेन्द्रिय। दिक अन्त ग्रीवक तक तथा अन्तर धनी। पाये पर्याय अनन्तवार अपूर्वसो नहिं शिवधनी॥ ससृत भ्रमण तें थकित लखि निज दास की सुन लीजिये। सम्यक् दरश वर ज्ञान चारित पथ विहारी कीजिये॥ ६ ॥

इति समाप्तम्॥

५८ विनती भूधर दास कृत।

(गीता छन्द)

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्दीवरो। दुर्बुद्धि चकवी बिलख बिछुरी निवड़ मिथ्या तम हरो॥ आनन्द अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निरदले।

जिन वदन पूर्ण चन्द्र निरखत सकल मन वांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो । संसार सागर तीर निवटो अखिल तत्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठये । दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भये ॥ २ ॥ मन हरण मूरति हेर प्रभु की कौन उपमा ल्याइये । नव सकल तनके रोम हुलसे हर्ष और न पाइये । कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभु को लखे जो सुर नर घने । तिस समय की आनन्द महिमा कहत क्यों मुख से बने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको और वांछा ना रही । मन ठठ मनोरथ भये पूरण रंक मानो निधि लही । अब होहु भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर भूधर दास विनवे यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति ।

५९ विनती भूधर दास कृत ।

अहो जगत गुरु एक सुनिये अर्ज हमारी । तुम प्रभु दीन दयालु मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव वनके माहि काल अनादि गमायो । भ्रमत चतुर्गति माहि

सुख नहीं दुख वहु पायो ॥ २ ॥ कर्म महा रिपु जोर ये कलकान करेंजी । मन माने दुख देय काहू से न डरें जी ॥ ३ ॥ कवहूं इतर निगोद कवहूं कि नर्क दि· खावें । सुर नर पशुगति मांहि वहु विधि नाच नचावें ॥ ४ ॥ प्रभु इन को परसग भवभव मांहि वुरो जी । जो दुख देखो देव तुम से नाहि दुरो जी ॥ ५ ॥ एक जन्म की बात कहि न सकों सब स्वामी । तुम अनन्त पर्याय जानत अन्तर्यामी ॥ मै तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे। कियो वहुत वेहाल सुनिये साहब मेरे॥७॥ ज्ञान महानिधि लूट रक निवल कर डारो । इन ही मो तुम माहि हे प्रभु अन्तर पारो ॥ ८ ॥ पाप पुण्य मिल दोय पायन बेरी डारी । तनकारागृह माहि मूंद दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इन को नेक विगार मैं कुछ नाहि करो जी । बिन कारण जगबन्धु वहुबिध बैर धरो जी ॥ १० ॥ अब आयो तुम पास सुन कर सुयश तुम्हारो । नीति निपुण महाराज कीजे न्याय हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकाल साधुन को रख लीजे । बिनवे भूधर दास हे प्रभु ढील न कीजे ॥ १२ ॥ इति ।

६० विनती नाथूराम कृत।

(दोहा)

चौवीसों जिन पद कमल वन्दन करों त्रिकाल।
करो भवोदधि पार अब काटो वसु विधि जाल ॥१॥

(रोड़क छन्द)

ऋषभ नाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो। अजित अजित अरि जीत वसु विधि शिवपद पायो ॥ २ ॥ संभव संभ्रम नाशि बहु भवि बोधितकीने। अभिनन्दन भगवान अभिरुचि कर व्रत दीने ॥ ३ ॥ सुमति सुमति वरदान दीजे तुम गुण गाऊं। पद्मप्रभु पदपद्म उरधरशीश नवाऊं ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास राखो शरण गहोंजी चन्द्रप्रभु मुखचन्द्र देखत बोध लहोंजी ॥ ५ ॥ पुष्पदन्त महाराज विकसत दन्त तुम्हारे। शीतल शीतल बैन जग दुःख हरण उचारे ॥ ६ ॥ श्रेयान्स भगवान् श्रेय जगति को कर्त्ता। वासु पूज पद वास दीजे त्रिभुवन भर्त्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद पाय विमल किये बहु प्राणी। श्री अनन्त जिन राज गुण अनन्त के दानी ॥८॥

धर्म नाथ तुम धर्म, तारण तरण जिनेश। शान्त नाथ अघ ताप शान्ति करो परमेश ॥ ९ ॥ कुंथु नाथ जिन राज कुंथु आदि जिय पाले। अरह प्रभू अरि नाश बहु भव के अघ टाले ॥ १० ॥ मल्लि नाथ क्षण माहि मोह मल्ल क्षय कीना। मुनि सुव्रत व्रत सार मुनि गण को प्रभु दीना। नमि प्रभु के पद पद्म नवत नशें अघ भारी। नेमि प्रभु तज राज जाय वरी शिव नारी ॥१२॥ पार्श्व स्वर्ण स्वरूप कहु भविजनमें कीने। वीर वीर विधि नाश ज्ञानादिक गुण लीने ॥ १३ ॥ चार बीस जिन देव गुण अनन्त के धारी। करों विविध पद सेव मैटो व्यथा हमारी ॥ १४ ॥ तुम सम जग में कौन ताका शरण गहीजे। याते मागों नाथ निज पद सेवा दीजे ॥ १५ ॥

(दोहा)

नाथूराम जिन भक्त का, दूर करो भव बास।
जब तक शिव अवसर नहीं, करो चरण का दास ॥

६१ विनती भूधर दास कृत।

वे गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज। वे गुरु

मेरे उर वसो ॥ आप तरें पर तार ही ऐसे ऋषिराज। वे गुरु मेरे उर वसो ॥ ॥ टेक ॥

मोह महा रिपु जीत के। छोड़ो है घरबार॥ भये दिगम्बर वन वसे। आतम शुद्ध विचार ॥१॥ रोग म-दन तन ध्यावही। भोग भुजग समान ॥ कदली तरु संसार है। इन छोड़े सब जान ॥२॥ रत्नत्रय निज उर धरें। पर निरग्रन्थ त्रिकाल॥ मारो काम खवीस को। स्वामी परम दयाल ॥ ३ ॥ धर्म धरे दश लक्षणी। भा-वन भावे सार। सहे परीषह वीस दो। चारित्र रत्नभ-ण्डार ॥ ४ ॥ ग्रीष्म ऋतु रवि तेज से। सूखे सरवर नीर॥ शैल शिखर मुनि तप तपे। ठाड़े अचल शरीर ॥ ५ ॥ पावस रैनि भयावनी। वरसे जलधर धार ॥ तरु तल निवसे साहसी। चाले झंझा बयार ॥६॥ शीत पड़े रवि मद गले। दाहे सब वनराय। ताल तरङ्गि-णी तट विषे। ठाढ़े ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ इस विधि दुर्द्धर तप तपे। तीनों काल मंझार ॥ लागे सहज स्व-रूप मे। तन से ममता टार ॥ ८॥ रंग महल में सोव-ते। कोमल सेज विछाय ॥ सो अब पश्चिम रैनि में।

पोढ़ें सवर काय ॥ ९ ॥ गज चढ़ चलते गर्व से । सेना सज चतुरंग ॥ निरख निरख भू पद धरें । पालें करुणा अङ्ग ॥ १० ॥ पूर्व भोग न चिन्तवें । आगे वांछा नांहि ॥ चहुं गतिके दुख से डरें । सुरति लगी शिव मांहि ॥११॥ ते गुरु चरण जहां धरें । तहं तहं तीरथ होय ॥ सो रज मम मस्तक चढ़ी । भूधर मांगे सोय ॥ १२ ॥

इति सम्पूर्णम् ।

६२ विनती भूधर दास कृत।

बन्दों दिगम्बर गुरु चरण जग तरण तारण जान जो भरम भारी रोग को हैं राज वैद्य महान॥ जिनके अनुग्रह विन कभी ना कटे कर्म जंजीर । ते साधु मेरे उर बसो मेरी हरो पातिक पीर ॥१॥ यह तन अपावन अशुचि है संसार सकल असार । ये विषय भोग नशायगे इस भांति सोच विचार॥ तव विरचि श्रीमुनि वन बसे सब त्याग परिग्रह भीर । ते साधु० ॥२॥ जे काच कंचन सम गिने अरि मित्र एक सरूप। निंदा बड़ाई सारखी वन खण्ड शहर अनूप॥ सुख दुःख जन्मन मरण सें ना खुशी

ना दिलगीर । ते साधु० ॥ ३ ॥ जे वीच पर्वत बन वसें गिर गुफा महल मनोग । शिल सेज समता सहचरी शशि किरण दीपक जोग ॥ मृग मित्र भोजन तप मई विज्ञान निर्मल नीर । ते साधु० ॥ ४ ॥ सूखे सरोवर जल भरे सूखें तरंगिणी तोय । वाटें बटोही ना चले जब घाम गर्मी होय ॥ तिसकाल मुनिवर तप तपें गिरि शिखिर ठाड़े धीर । ते साधु० ॥ ५ ॥ घन घोर गर्जें घन घटा जल पड़े पावस काल । चहुं ओर चमके बीजली अति चले शीतल बयार ॥ तरुहेट तिष्ठे तब यती एकान्त अचल शरीर । ते साधु० ॥ ६ ॥ जब शीतकाल तुषार से दाहै सकल बनराय । जब जमे पानी पोखरा थर हरे सब की काय ॥ तब नग्न निबसें चौहटे के सरति के सर तीर । ते साधु० ॥ ७ ॥ करजोर भूधर बीनवे कब मिलें वे मुनिराज । यह आस मेरी कब फले अरु सरें सगरे काज ॥ संसार विषम विदेश मे जे बिना कारण बीर । ते साधु० ॥ ८ ॥ इति ।

६३ विनती, भूधरदास कृत ।

त्रिभुवन गुरु स्वामी जी करुणा निधि नामी जी ।

सुनो अन्तर यामी मेरी बीनती जी ॥ १ ॥ मैं दास तुम्हारा जी दुःखिया अति भारा जी । दु.ख मैंटन हारे तुम यादों पति जी ॥ २ ॥ भ्रमियो संसारा जी भरो बित्त भडारा जी । कहीं सार न जाना चहुंगति डोलियो जी ॥ ३ ॥ दु ख मेरु समाना जी सुख सरसों दाना जी इम जानि धर ज्ञान तराजू तोलियो जी ॥ ४ ॥ स्थावर तन पाया जी त्रस नाम धराया जी । कृमि कुंथू कहाया मर भ्रमरा भया जी ॥५॥ पशु काया सारी नाना विधि धारा जी । जलचारी थलचारी उड़न पखेरुआ जी ॥६॥ नर्कों के माही जी दुःख ओर कहां ही जी । अति घोर तहा हैं सरिता नीर की जी ॥ ७ ॥ पुनि असुर संहारे जी निज बैर विचारैं जी । मिल मारें अरु बांधें निर्दय नारकी जी ॥ ८ ॥ मानुष अवतारा जी रहा गर्भ मझारा जी । रटि जन्मती बारा रोयो घनो ही जी ॥ ९ ॥ यौवन तन भोगी जी यह विपति वियोगी जी अति रोगी पन शोकी मरण की वेदना जी ॥ १० ॥ सुर पदवी पाई जी रंभा उरआई जी । तहां देख देख पराई सम्पति झूरियो जी ॥११॥ माला मुरझानी

जी तव आरति ठानी जी तिथि पूरण जानी मरण विसूरियो जी ॥ १२ ॥ यह दुःख भव केरो जी भुगतो बहुतेराजी । प्रभु मेरे कछु कहत न मैं पार लहो जी ॥ १३ ॥ मिथ्या मद माता जी चाहे नित साता जी । सुख दाता जग त्राता मै जानै नही जी ॥ १४ ॥ प्रभु भाग्य निपाये जी गुण शरण सहाये जी । तकि आया अव सेवक की विपदा हरो जी ॥ १५ ॥ भव बास बसे-रा जी फिर होय न मेरा जी । सुख पाऊं निज केरा स्वामी जो करोजी ॥१६॥ नर नारी गावे जी सो भवि सुख पावे जी । प्रभु होय सहाई पार उतारिये जी ॥ १७ ॥ भूधरकर जोरे जी ठाड़े प्रभु ओरैं जी तुन दास निहारे निर्भय कीजिये जी ॥ १८ ॥ इति ।

६४ अठाई रासा ।

वरत अठाई जे करते पावें भव पार प्राणी । वरत अठाई जे करे ॥ टेक० ॥ जम्बूद्वीप सुहावणो लख्यो-जन विस्तार प्राणी । वरत अठाई० ॥ १ ॥ भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा पोदणपुर लिह सार प्राणी । विद्यापति विद्याधरो सोमाराणी रायप्राणी । वरत० ॥ २ ॥ चारण

मुनि तहां पारणें आये राणा गेह प्राणी । सोमाराणी अहार दे पुण्य बढ़ो अतिनेह प्राणी। वरत० ॥३॥ तिणी समय नभ देवता चले जात विमान प्राणी । जय जय शब्द भयो घणो मुनिवर पूछ्यो ज्ञान प्राणी ।वरत०॥४॥ मुनिवर बोलेसुन राणी नन्दीश्वर को जात प्राणी । जे नर करहि स्वभाव सो ते पावें शिवकांत प्राणी । वरत० ॥ ५ ॥ यह वचन राणी सुनों मन में भयो आनन्द प्राणी । नन्दीश्वर पूजा करै ध्यावै आदि जिनेन्द्र प्राणी वरत० ॥ ६ ॥ कातिक फागुण साढ मे पालै मनवचदेह प्राणी। वसु दिवस पूजा करै तीन भवान्तर लेय प्राणी वरत० ॥ ७ ॥ विद्यापति मुनि चालियो रच्यो विमान अनूप प्राणी ! राणी वरजै राय को तू तो मानुष भूप प्राणी वरत० ॥८॥ मानुषोत्र लंघत नहीं मानुष जेती जात प्राणी । जिन वाणी निश्चय सही तीन भवन विख्यात । प्राणी व०॥९॥ सो विद्यापति चा रह्यो चलो नन्दीश्वर दीप प्राणी । मानुषोत्र गिरसो मिलो जाय ग मान महीप प्राणी व०१० । मानुषोत्र,की भेटते परो धरणि सिर भार प्रा० । विद्यापति भव पूरियो देव भयो

सुरसार प्रा० व० ॥११॥ द्वीप नन्दीश्वर छिनक मे पूजा
बहु विधि ठान प्राणी। करी सुमन वच काय से
माला दई फरमान प्राणी व० ॥ १२ ॥ आनंद सों फिर
घर आयो नन्दीश्वर कर जात प्राणी। विद्यापतिका
रूपकर पूछे राणी बात प्राणी वरत० ॥ १३ ॥
राणी बोली सुण राजा यह तो कतगुन होय प्राणी।
जिन वाणी मिथ्या नही निश्चय मनमे सोय प्राणी ब०
॥ १४ ॥ नन्दीश्वरकी जयमाला राय दिखाई आण प्राणी
अबतू बाचो मोहि जाणो पूजन करी बहुमान प्राणी।
ब० ॥ १५ ॥ राणी फिर तासों कहै यह भवपरसैं नाहि
प्राणी ॥ पश्चिम सूर उदयहुवे जिन वाणी सुचिताहि
प्राणी ब० ॥१६॥ राणी सों नृप फिर बोल्यो बावन भ-
वन जिनालय प्राणी। तेरह तेरह मैं बदे पूजन करी
तत्काल प्राणी वरत० ॥१७॥ जयमाला तहां मो मिली
आयो हूं तुझ पास राणी। अब तू मिथ्या मत माने
पूजाभई अवश्य। प्राणी ब० ॥ १८ ॥ पूरब दक्षिण मैं
बन्दे पश्चिम उत्तर जात प्राणी। मैं मिथ्या नहीं
भाषिहूं मोहि जिनवर की आण प्राणी० ॥ १९ ॥

सुनि राजा तैं सब कही जिनवाणी शुभसार प्राणी। ढाई द्वीपन लघई मानुष जन विस्तार प्राणी ब० २० ॥ विद्यापति से सुर भयो रूप धरो शुभ सोई प्राणी ॥ राणी की अस्तुति करी निश्चय समकित तोय प्राणी। बरत० ॥२१॥ देव कहे अब सुनराणी मानुषोत्र मिलोजाय प्राणी। तिहतैं चय मैं सुर भयो पूज नंदीश्वर आय प्राणी। बरत० ॥२३॥ एक भवांतर मो रहो जिन शासन परमाण प्राणी। मिथ्याती माने नहीं श्रावक निश्चय आण प्राणी। ब०॥ २३ ॥ सुरचय तहां हथणांपुरी राज कियो भर पूर प्राणी। परिग्रह तज संयम लियो कर्म महागिर चूर प्राणी ब० २४ केवल ज्ञान उपार्ज कर मोक्ष गयो मुनिराय प्रा०। शाश्वत सुख विलषै सदा जन्म मरण मिटाय प्राणी० ॥२५॥ अब राणीकी सुनो कथा संयम लीनो सार प्राणी। तप कर चयकें सुर भयो बिलषे सुख विस्तार प्राणी ब० ॥ २६॥ गजपुर नगरी अवतरो राज करे बहु भाय प्राणी। सोलह कारण भाइयो धर्म्म सुनो अधिकाय प्राणी ब० ॥२७॥ मुनि संघाटक आइयो माली सार जणाय प्राणी। राजा बंदो भाव

सों पुण्य वढो अधिकाय प्राणी व० ॥ २८ ॥ राजामन वैरागियोसयमलीनोसार प्राणी । आठ सहस्त्रनृप साथ ले यह ससार असार प्रा० व० ॥२९॥ केवल ज्ञान उपार्ज के दोय सहस्त्र निर्वाण प्राणी । दोय सहस्त्र सुख स्वर्ग के भोगे भोग सुथान प्राणी व० ॥३०॥ चार सहस्त्र भूलोक में हंडे वहु संसार प्राणी । काल पाय शिवपुर गये उत्तम धर्म विचार प्राणी व०॥३१॥ बरत आठईजे करैं तीन जनम परमाण प्राणी । लोकालोक सुजाणही सिद्धारथ कुल ठाण प्राणी । व० ॥ ३२ ॥ भवससुद्र के तरण को बावन नौका जान प्राणी । जे जिय करैं सुभाव सों जिनवर सांच बखान प्राणी० ॥ ३३ ॥ मन बचकाया जे पढ़े ते पावे भवपार प्राणी । विनयकीर्त्ति सुख सों भणे जनम सफल ससार प्राणी० । बरत आठई जे करैं ॥ ३४ ॥

इति अठाई रासा समाप्तम् ।

६५ श्रीजिनगिरा स्तवन ।

(शिखरणी छंद)

शरण आया मात, जिनेश्वर वाणी दुख हरो ।
विरद अनुपम तेरा, प्रगट जग त्राता सुख करो ॥ भ्रमो

जग बहुतेरा, सहा दुख जन्मन मरण का । टरे नाहीं टारा, यतन बहु कीना हरण का ॥ १॥ यजे बहुते देवा करी बहु सेवा सरण की । फंसे भव दुख सोही, न पाई आशा शरणकी ॥ अष्ट विधि खल भारी, हमारी कीनी दुर्दशा । इन्हीं के वश माता, भवोदधि दुख में मैं फंसा ॥ २ ॥सतत चारों गतिमें, भमावैंमोकों ये वली । ज्ञान धनको हरिके भलाई मोको शिवगली ॥ नरक पशु नरदेवा, चतुर्गति में जो दुख लहो । कहा जाता नाहीं तुम्हीं सब जानो जो सहो ॥३॥ निवल मोको याके, सताते ये खल अति घने । शरण राखो माता, बचावो इनसे निज जने ॥ सुमति अब दे माता, विनाशों आठोंखलन में । लहोंशिवपुर पंथा, दहोंना फिर भव ज्वलन में ॥४॥ अल्प मतिमैं माता, सुमति निज दीजे दासको । यही विनतीमेरी, पुरावो अम्बे आश को ॥ युगल पदकी सेवा, करत नर देवा, धायके । लहत शिव सुख मेवा, शरण मा तेरा पायके ॥ ५ ॥

दोहा-तुम पदाब्जमो उर वसो, नशो तिमिर अज्ञान ।
सेवक नाथूरामको, दीजे मा बरदान ॥ ६ ॥

इति श्रीजिनगिरास्तवनम् समाप्तम् ।

९९ जिनदर्शन दोहा।

दर्शन श्रीजिन देवका नाशक है सब पाप। दर्शन सुरगति दाय है साधन शिवसुख आप ॥ १ ॥ जिन द-र्पन गुरु वन्दना इनसे अघक्षय होय। यथा छिद्रयुत कर विषैं चिर तिष्टे ना तोय ॥ २ ॥ वीत राग मुख दर्शियो पद्म प्रभा समलाल। जन्म जन्म कृत पापसो दर्शन नाशे हाल ॥ ३ ॥ जिन दर्शन रवि सारिखाहोय जगत तम नाश। विगशित चित्त सरोज लख करता अर्थ प्रकाश ॥ ४ ॥ धर्मामृत की वृष्टि को इन्दु दर्श जिन राय। जन्म ज्वलन नाशे बढ़े सुखसागर अधि-काय ॥५॥ सप्त तत्व दरशै ग्रहे वसु गुण सम्यक सार। शांति दिगम्बर रूप जिन दर्शि नमों बहु बार ॥ ६ ॥ चेतन रूप जिनेश किय आत्म तत्व प्रकाश। ऐसे श्री सिद्धान्त को नित्य नमों सुख आश ॥ ७ ॥ अन्य शरण यांछो नहीं तुम्हीं शरण स्वयमेव। यासे करुणाभाव धर रखो शरण जिनदेव ॥ ८ ॥ त्रिजगत में इस जीव को तारणहार न कोय। वीतराग वरदेव विन भया न आगे होय ॥ ९ ॥ श्रीजिन भक्ति सदा मिलो प्रतिदिन

भव २ माहि । जब तक जगबासी रहों अन्तर वांछों नाहिं ॥ १० ॥ बिन जिन वृष शिवहो नही चाहें हो चक्रीश । धनी दरिद्री होत सब जिन वृष से शिव ईश ॥ ११ ॥ जन्म जन्म कृत पाप भव कोटि उपार्जा होय । जन्म जरादिक मूल से जिन बन्दत क्षय होय ॥१२॥ यह अनूप महिमा लखी जिन दर्शनकी व्यक्त । यासे पद शरणालिया नाथूराम जिन भक्त ॥ १३ ॥ जिन दर्शन लखि संस्कृति भाषा किया बनाय । भव्य जीवनित उरधरो । यह भव भव सुखदाय ॥ १४ ॥

इति श्रीजिनदर्शन सम्पूर्णम्

बन्देजिनवरम् ॥

६७ नरकोंके दोहे ।

दोहा—जनम थान सबनरकमें, अंध अधोमुखजौन । घंटाकार योना बनी, दुसह वास दुख भौंन ॥१॥ तिन में उपजें नारकी तल शिर ऊपर पांय । विषम वज्र कण्टक मई, परें भूमि पर आय ॥ २ ॥ जो विषैल बीछू सहस, लगे देह दुख होय । नरक धराके परशते, सरस

वेदना सोय ॥ ३ ॥ तहा परत परवान अति, हाहा क-
रले एम । ऊचे उछलेनारकी, तपे तवातिल जेम ॥ ४ ॥

सोरठा—नरकसातवे माहिं उछलत योजन पानसे ।
और जिनागम मांहि यथायोग सव जानिये ॥ ५ ॥

दोहा—फेरि आन भूपर परे और कहा चढि जाहि
छिन्न भिन्न तन अति दुखित, लोट लोट बिललाहि॥६॥
सव दिशि देखि अपूर्व थल चकित चित भयवान ।
मन सोचें मै कौन हू परो कहा में आन ॥ ७ ॥ कौन
भयानक भूमि यह, सव दुख थानक निन्द । रुद्ररूप ये
कौन हैं निटुर नारकी वृन्द ॥ ८ ॥ काले वरण कराल
मुख गुंजा लोचन धार । हुंडक डील डरावने, करें मा-
रही मार ॥९॥ सुजनकोई दिठि परे शरण न सेवक
कोय । त्यां सो कुछ सूझे नहीं, जासों छिण सुख होय
॥ १० ॥ होत विभगा अवधि तव, निज पर कों दुख
कार । नरककूप में आपको, परो जान निरधार ॥११॥
पूरव पाप कलाप सव आप जाप कर लेय । तव वि-
लाप की ताप तव पश्चात्ताप करेय ॥१२॥ मै मानुष प-
र्याय धरि, धनयोवन मदलीन । अधम काज ऐसे किये

नरकवास जिन दीन ॥ १३ ॥ सरसो सम सुख हेत तज,भयो लंपटीजान। ताही को अब फल लगो, यह दुख मेरु समान ॥ १४ ॥ कन्दमूल मदमांस मधु, और अभक्ष अनेक। अज्ञान वश भक्षण किये, अदक्ष न मानी एक ॥ १५ ॥ जल थल नभ निल घर विविधि विल-वासी बहुजीव। मैं पापी अपराध बिन मारो दीनअ-तीव ॥ १६ ॥ नगर दाह कीनो निठुर, गाव जलाये जान। अटवी मैं दीनी अगिन हिंसा करि सुख मान ॥ १७ ॥ अपने इन्द्री लोभकों बोलो मृखा मलीन। कलपित ग्रन्थ बनायकें, बहकाये बहु दीन। दावघात पर पञ्चसों परलक्ष्मी हरिलीन। छल बल हठ बल द्रव्य बल, परबनिता वशकीन ॥ १९ ॥ बढ़त परिग्रह पोट शिर, घटी न धनकी चाह। ज्यों इंधन के योग से, अगिन करे अतिदाह ॥ २० ॥ विन छानो पानी पियो, निशिभुंजो अविचार। देव द्रव्य खायो सही, रुद्र ध्यान उरधार ॥ २१ ॥ कीन्हीं सेव कुदेवकी कुगुरुनि कों गुरु मान। तिनही के उपदेश सों, पशुहो मोहित जान ॥ २२ ॥ दियो न उत्तम दान मैं लियो

म संयमभार। पियोमूढ़ मिथ्यात्व मद, कियो न तप अगसार ॥ २३ ॥ जो धरनी जन दया करि, दीनी सीख निहोर। मैं तिनसों रिस करि अधम, भाखे वचन कठोर ॥ २४ ॥ करी कमाई परजनम सो आई मुझ तीर। हाहा अब कैसे धरों, नरक धरा में धीर ॥२५॥ दुर्लभ नरभव पायके केई पुरुष प्रधान। तपकरि साधैं स्वर्ग शिव मैं अभाग यह थान ॥ २६ ॥ पूरब सन्तन यों कही करनी चाले लार। सो आखिन दीखी अवे, तव न करी निरधार ॥ २७ ॥ जिस कुटुम्ब के हेतु मैं कीने बहु विधि पाप। ते सब साथी बीछुरे, परो नरक में आप ॥ २८ ॥ भरी लक्ष्मी खानकू सीरी हुते अनेक। अब इसे विपति विलापसें, कोई न दीखे एक ॥ २९ ॥ सारस सरवर तजि गये, सूको नीर निहार। फल बिन वृक्ष विलोकिकें, पक्षी लागे बाट ॥३०॥ पंच करण पोषण अरथ, अनरथ किये अपार। ते रिपु सो न्यारे भये मोहि नरक में डार ॥ ३१ ॥ लव तिलभर दुख सहन कों, हुतो अधीरजभाव। अब ये कैसे दुसह दुख भरि हौं दीरघ आव ॥३२॥ अब बैरी के वश परों,

कहा करों कित जांउ। सुनै कौन पूछे किसे; शरण कौन इस ठांउ ॥ ३३ ॥ इहि कुछ दुख हतन कूं युक्ति उपाय न सूर। थिति बिन विपति समुद्र यह, कब तिरहों तट दूर ॥३४॥ ऐसी चिन्ता करत तह, बढ़ै वेदना येम। घीव तेल के योगतें, पावक प्रजलें जेम ॥ ३५ ॥

सोरठा—इस विधि पूरब पाप, प्रथम नारकी सुधि करे। दुख उपजावन जाप, होय विभंगा अवधिते ॥३६॥

दोहा—तबहीं नारक निर्दई, नयो नारकी देष। धाइ धाइ मारन उठे, महादुष्ट दुर भेष ॥ ३७ ॥ सब क्रोधी कलही सकल, सब के नेत्र फुलिंग। दुख देनेको अति निपुण, निठुर नपुंसक लिंग ॥ ३८ ॥ कुंत कृपाण कमान शर, शकती मुग्दर दंड। इत्यादिक आयुध विविधि, लिये हाथ परचण्ड ॥ ३९ ॥ कहि कठोर दुरवचन बहु, तिल तिल खंडे काय। सो तब हीं ततकाल तनु, पाराघत मिलजाय ॥ ४० ॥ काटे कर छेदें चरन, भेदें परम विचार। अस्थिजाल चूरण करें, किवलें चाम उपार ॥ ४१ ॥ चीरें कर खत काठ ज्यों, फारे पकरि कुठार। तोडें अंतर मालिका, अंतर उदर विदार ॥४२॥

पेले कोलू मेलिके पीसे घण्टी घाल। तावे ताते तेल में, दहे दहन पर जाल ॥ ४३ ॥ पकरि पाय पटक पुहमि झटक परस्पर लेहि। कंटक सेज सुवावही शूली पे धर देहि ॥ ४४ ॥ घिसे सकण्टक रूखसो वेतरणी ले जाहि। घायल घेरि घसीटिये किंचित् करुणा नाहि ॥ ४५ ॥ केई रक्त चुचात तन, विह्वल भाजें तास। परवत अन्तर जायकें, करो वैठि विसराम ॥४६॥ तहा भयानक नारकी धारि विक्रिया भेष। वाघ सिंह अहि रूपसो दारे देह विशेष ॥ ४७ ॥ केई कारसों पाय गहि गिरिसो देहिं गिराय। परे आनि दुभूमिपे खण्ड खण्ड हो जांय ॥ ४८ ॥ दुखसों कायर चित्तकर ढूंढ़ैं शरण सहाय। वे अति निर्दय घात ही, यह अतिदीन घिंघाय ॥४९॥ व्रण वेदननीकीकरैं ऐसे करि विश्वास। सींचे खारे नारसों, ज्यों अति उपजे त्रास ॥ ५० ॥ केई जकड़ जंजीरसो खेंचि खम्भ तें बांधि। सुधि कराय अघ मारिये, नाना आयुध साधि ॥ ५१ ॥ जिन उद्धत अभिलाख सों, कीने पर भव पाप। तपत लोह आसन विषें त्रास दिखावे थाप ॥ ५२ ॥ ताती पुतली लोह की, लाय लगावैं अंग। प्रीति करी जिन पूर्व भव, पर

कामिनि ये सग ॥ ५३ ॥ लोचन दोषीं जानिके, लोचन लेहिं निकाल। मदिरा पानी पुरुषकों, प्यावे तांवो गाल ॥ ५४ ॥ जिन अंगनसों अघ किये, तेईछेदे जाहिं। पल भक्षणके पापते तोड़ि तेड़ितनखाहिं ॥५५॥ केई पूरब वैरकों, याद दिवावे नाम। कहि दुर्वचन अनेक विधि, करें कोप सग्राम ॥ ५६ ॥ भये विक्रिया देहसों, वहु विधि आयुध जात। तिनही सों अति रिस भरे, करें परस्पर घात ॥ ६७ ॥ शिथिल होय चिर यद्धते, दीन नारकी जाम। हिंसा नदी असुरदुठ आनि लरावें ताम ॥ ६८ ॥

सोरठा

त्रितिय नरक परजंत, आसुरो दीरघदुःखहै। भाखो जैन सिद्धन्त, असुर गमन आगे नहीं ॥ ५९ ॥

दोहा

इहि विधिनरक निवासमें, चैनएक पल नाहिं। तपै निरतर नारकी, दुख दावानल मांहिं ॥ ६० ॥ नार २ सुनिये सदा, खेत्र महा दुर्गंध। वहैं व्यार असुहावनो अशुभ क्षेत्र सम्बन्ध ॥६१॥ तीनलोक को नाज सब, जो भक्षण कर लेय। तोभी भूक न उपशमे कौन एक कण देंय ॥ ६२ ॥ सागर के जल सों जहां पीवत प्यास न

जाय। लहे न पानी बूंद सम, दहे निरंतर काय ॥६३॥ वात पित्त कफ जनित जे, रोग जात यावंत। तिनके मदा शरीर में, उदै आयु परयंत ॥ ६४ ॥ कटु तूवी सो कटुक रस, कर व्रत की सम फांस। जिनकी मृतक मं जार सो, अधिक देह दुर्वास ॥६५॥ योजन लाख प्रमाण जहा, लोह पिण्ड गलजाय। ऐसी है अति उष्णता ऐसी शीत सुभाय ॥ ६६ ॥

अडिल्ल—पंक प्रभा परयंत उष्णता अति कही।
धूप प्रभा में शीत उष्ण दोनों सही ॥
छटी सातवीं भूनिनि केवल शीत है।
ताकी उपमा नाहि महा विपरीत है ॥ ६७ ॥

दोहा-श्वान स्याल मंजार की, परी कलेवर रास।
मास नसा अरु रुधिर की, कादौ जहां कुवास६८

ठाम २ असुहावने, सेवल के तरु भूर। पैने दुख देने कठिन, कंटक कलितक शूर ॥६९॥ और जहां असि पत्रवन, भीम तरोवर खेत। जिनके दल तरवार से, लगत घाव करदेत ॥७०॥ वैतरणी सरिता समल, लोहित लहर भयान। बहै त्वार श्रोणित भरी, मांस कीच

घिन थान ॥ ७१ ॥ पक्षी वायस गीध गण, लोह तुंड सो जेह । मरम विदारें दुख करें, चोंथे चहुंदिश देह७२ पंचेन्द्री मनको महा, जो दुखदायक भोग । ते सब न के निकेत में, एक निंद असनोग ॥ ७३ ॥ कथा अपार कलेश की, कहै कहां लों कोय । कोटजीभ सों बरनिये तऊ न पूरी होय ॥ ७४ ॥ सागर बंध प्रमाण थिति लण २ तीक्षण त्रास । ये दुख देखे नारकी परवश परो निरास ॥ ७५ ॥ जैसी परवश वेदना, सहै जीय बहु भाय । सुवस सहैजो अंशभी, तो भवजल तरिजाय॥७६॥ ऐसे नरक नारकी भयो भील दुठभाव । सागर सत्ताईस की, धारी मध्यम आव ॥ ७७ ॥ सागर काल प्रमाण अब, बरनो औसर पाय । जिनसों नरक निवास की, थित बरनी जिनराय ॥ ७८ ॥

॥ इति सम्पूर्णम् ॥

६८ श्रीजिनवर पचीसीछप्पयछन्द

ऋषभ आदि चउवीस तीर्थ पति तिन गुण गाऊं । दिव पुर कुल पितु मात वर्ण लक्षण बतलाऊं ॥ काय आयु शिव आसन अरु शिव थान मनोहर । कहूं सर्व

दरशाय जांय पातक भवभय हर ॥ प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़े स्वर्ग मुक्ति सुखसों लहै । क्रमशः ऊंचे पाय पद नाथूराम सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धि से ऋषभोजन वसे अयोध्या । वंशेक्ष्वाकु प्रधान नाभिपितु अनुपम योद्धा ॥ मरुदेवा जिनमात वर्ण कंचन तनु सोहै । वृष लक्षण शतपांच चाप तनु लख जग मोहै ॥ थिति चौरासी पूर्वलख पद्मासन कैलास गिरि । मुक्त थान जिनराज का नमों जन्म ना होय फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थ सिद्धि अयोध्या वसे अजित जिन । श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु पिता जिन शत्रु कहे तिन ॥ विजयासेना मात तनु गज लक्षण वर । ढौंच शतक धनु तनु थिति पूर्व लाख वहत्तर । कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेद चल । नमो त्रियोग सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथल ॥ ३ ॥ संभव ग्रीवक त्याग जन्म श्रावस्ती लीना । वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना । मात सुसेना हेम वर्ण घोटक शुभ लक्षण । शतक चार धनु देह साथ लख पूर्व आयु गण ॥ खड्गासन से शिव गये मुक्ति थान सम्मेद गिरि । नमो त्रिलोकीनाथ को

जन्म मरण ना होय फिर ॥ ४॥ अभिनन्दन तज वि-
जय अयोध्या पितु सवर घर । सिद्धार्थो जिन मात
वश इक्ष्वाकु जन्मवर ॥ कनक वर्ण कपि चिन्ह हूंठ
शत चाप काय जिन । पूर्व लाख पचास आयु खड्गासन
है तिन ॥ श्रीसम्मेदाचल विमल मुक्तिथान जिनराज
का । त्रिकाल वंदों भावसे धन्य जन्म है आजका ॥५॥
वैजयत तज सुमति अयोध्या नगरी आये । पितामेघ
प्रभु मात मंगला अति मन भाये । विमल वंश इक्ष्वाकु
हेम तनु चकवा लक्षण । धनुष तीन शत देह तुंग त्रि
भवन के रक्षण ॥ आय पूर्व चालीसलख खड्गासन राजे
अटल । सम्मेद शिखरसे शिवगये नमों नमो तुमको
स्वथल ॥ ६ ॥ पद्मप्रभ ग्रीवक सु त्याग कोशाम्बीआ-
ये । धारण नृप पितु मात सुसीमा आनद पाये । वश
कहो इक्ष्वाकु ~मल सम लालवर्ण तन । कमल चिन्ह
तन, तुग चाप ढाईसौ भगवन ॥ आयु तीस लख पूर्व
का खड्गासन से शिवगये । सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र जिन
नमो आज आनन्द लये ॥ ७ ॥ नाथ सुपार्श्व ग्रीवकसे
काशी उपजाये । सुप्रतिष्ठत पितुमाता पृथिवी के मन

भाये ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु हरिततनु स्वस्तिक लक्षण। धनुष दोयशो काय बीस लख पूर्व आयु भण ॥ खड्गासन सम्मेद गिरि सिद्ध क्षेत्र से शिव गये। त्रिजग ताप हर्त्तारिको हाथ जोड़ हम श्रुत नये ॥ ७ ॥ वैजयंत तज चन्द्रपुरी चन्द्रप्रभु स्वामी। महासेन पितु मात लक्ष्मणा के भये नामी। श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि लक्षण वर। धनुष डेढसौ देह लाख दश पूर्व आयु धर। खड्गासन से मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये। शिवथान शिखर सम्मेद जिन तिन पदको हमनित नये ॥ ८ ॥ पुष्पदन्त आरण दिव तज काकन्दी राजे। पिता नृपति सुग्रीव मात रामा सुख साजे ॥ वंश लहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मगरा लक्षण। सौधनु तुंग शरीर आयु दोलाख पूर्व गण ॥ खंगासन से शिवगये सम्मेदाचल मुक्ति थल। नमो त्रिलोकोनाथ मैं तुम पद पंकज युगविमल ॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग वास भद्दलपुर लीना। दृढरथ तात सुमात सुनन्दा को सुख दीना ॥ निर्मल कुल इक्ष्वाकु हे तन श्रीतरु लक्षण। नब्बे धनुष शरीर आयु लख पूर्व विचक्षण ॥ खंगासन दृढधार

के सम्मेदाचल ध्यान धर। मुक्त भये तिनको नवें शीस नाय हम जोड़कर ॥ ११ ॥ श्रेयान्स पुष्पोत्तर से चय बसे सिंहपुर। विष्णु पिता विष्णु श्रीमाता उभय धर्म धुर ॥ वंशइक्ष्वाकु पुनीत हेमतन गेंड़ा लक्षण। असी धाप तनु लाख असीचउ वर्ष आयु भण ॥ खड्गासन दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर। नवों त्रियोग लगाय के अशुभ कर्म खलु जांयखिर ॥ १२ ॥ वासु पूज्य कापिष्ठस्वर्ग से चय चम्पापुर। लिया जन्म वसु पूज्य पिता माता विजया उर ॥ख्यात वंश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण। सत्तर धनुष शरीर उच्च जग जन के रक्षण ॥ लाख बहत्तर वर्ष का आयुपद्म आसन अटल। सिद्ध क्षेत्र चम्पापुरी बन्दों सुख दाता अचल ॥ १३ ॥ विमल शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लिया वर। कृतवर्म्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकर ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु तनक तन वराह लक्षण। साठ धांप तनु तुंग साठलख वर्ष आयु गण ॥ खड्गासन सम्मेद गिर मुक्ति थान वन्दन करों। त्रिभुवन नाथ प्रसादसे अब न भवोदधि में परों ॥ १४ ॥ सहस्रार दिव से अ-

नन्त जिन जन्म अयोध्या। सिंहसेन पितु ग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा ॥ सर्व यशा जिनमात वंश इक्ष्वाकु बखानो। हेमवर्ण सेहै लक्षण जिनवर के मानो ॥ काय धनुष पचास का आयतीसलख पूर्व जिन। खड्गासन सम्मेद शिव नवोचरण करजोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुष्पोत्तर से धर्मनाथ चय वसे रत्नपुर। भानु पिता सुव्रता मात इक्ष्वाकु वंश धुर ॥ हेमवर्ण लक्षण सु वज्र तनु धनुपैंतालिस। आयुलाखदशवर्षखड्ग आसन विधि जालिस ॥ सम्मेदाचल मुक्तिथल धर्मपोत धर भव्यजन। पार किये भव उदधि से करुणाकर करुणायतन ॥ १६॥ शान्तिनाथ पुष्पोत्तर से चय गजपुर आये। विश्वसेन ऐरा माता गृह बजे बधाये॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहै। काय धनुष चालीस आयु लखवर्ष लयो है ॥ खड्गासन से शिवगये मुक्तिथान सम्मेदगिरि। युगचरण कमल मस्तक धरों बधे कर्म खलु जायखिरि ॥ १७ ॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तर से चय जन्म गजपुर। सूर्य पिता श्रीदेवी माता उभय धर्मधुर ॥ कुरुवंशी तनु हेम वर्ण लक्षण अज जानो। काय धनुष पैंतीस कामसुरकी

पहिचानो ॥ आयु सहस्र पचानवे वर्ष खग आसन कहो । सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र शुभ जिनवन्दत हम सुख लहो ॥ १८ ॥ अरहनाथ सर्वार्थ सिद्ध से गजपुर आये । पिता सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये ॥ शुभ कुरुवंश महान हेम तनु मच्छ चिन्हवर । तीस चांप तनु तुंग त्रिजग मनमोहन सुन्दर ॥ सहस्र चउरासी वर्ष का आयु खड्ग आसन अटल । शिवथान शिखर सम्मेद जिनबन्दों तिनके पदकमल ॥ १९ ॥ मल्लि नाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना । कुम्भ पिता रक्षिता मात को वहुसुख दीना ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु हेम तनु घट लक्षण वर । काय धनुष पच्चीस तुङ्ग माहैं लख सुर नर ॥ आयु वर्ष पचपन सहस्र खड्गासन सोहै अचल । शिवथान शिखर सम्मेद वर तीर्थराज विसरे न पल ॥ २० ॥ मुनि सुव्रत अपराजित से कुशाग्रपुर राजे । पितु सुमित्र पद्मावति माता को सुख साजे ॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहै । वीस धनुष का कायु तुङ्ग देखतमन मोहै ॥ तीस सहस्र सु वर्ष का आयु खड्ग आसन सुभग । सम्मेद शिखर शिवथान

प्रभु तीर्थ राज भवि मुक्तिमग ॥ २१ ॥ प्राणत तज न
मिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना । विजय पिता वप्रा
माता को अतिसुख दीना ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु वर्ण
तनु हेम सुहावन । पद्म पाखुरी अङ्क पञ्चदश चाप सुभग
तन ॥ आयु वर्ष दश सहस्त्र का पद्मासन से शिवगये ।
सिद्धक्षेत्र सम्मेद गिरि वन्दत हो मङ्गल नये ॥ २२ ॥
वैजयन्तसे नेमनाथ सूरी पर प्रगटे । सिध विजय शिव
देवी के देखत दुख विघटे ॥ लहो अंष्ठ हरिवंश श्याम
तनु शख अङ्कवर । काय धनुष दश सहस्त्र वर्ष का आयु
पूर्णधर ॥ खगासन गिरिनारि से राजमतीपति शिव गये ।
पशवदि छुड़ाई दयाकर तिन पद पङ्कज हम नये ॥ ३॥
पारस प्रभु आनत दिव तज काशी में राजे । अश्वसेन
वामा माता गृह दुंदुभि वाजे ॥ उग्र वंश तनुनील
चिन्ह अहिराज विराजे । नवकर काय उतग आयु श
तवर्ष सु छाजे ॥ खगासन सम्मेद गिर मुक्ति थान मद
कमठ हर । समवच तनु वन्दन करो तेवीसम जिनरा
जवर ॥ २४ ॥ वर्धमान पुष्पोत्तर से कुण्डलपुर आये ।
सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये । नाथ

बंश तनु हम वर्ण हरि चिन्ह मनोहर । सात हाथ तन आयु बहत्तर अब्द लयोवर ॥ खगासन पावा पुरी मुक्ति थान जगतापहर । नवे सुनाथूरामनित हाथ ओड़ युग शीसधर ॥ २५ ॥

इति श्रीजिनवरपचीसीसम्पूर्णम् ।

९९ जिनगुणमुक्तावली।

श्रीजिनेश यतीश को, सुमिर हिये उपकार ।
जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूं स्वपर सुखकार १

चौपाई ॥ तीर्थंकर पद के गुण घणे । घन धारावत जाहिं न गिणे ॥ यथाशक्ति करिये चिन्तौन, जाते होय पाप विष वौन ॥ २ ॥ सतयग में प्रगटै परवीन । मानुष देह दोषकर हीन । आर्य्यखण्ड आय अवतरे । युगल सृष्टि में जन्म न धरे ॥ ३॥ क्षत्री वंश बिना नहिं और । जाके गर्भ जन्म की ठौर । माता के रज दोष न होय ॥ एक पूत जन्मै शुभ सोय ॥ ४ ॥ मात पिता के देह मझार । मल अरु मूत्र नही निर्धार ॥ गर्भ शोध देवी आदरे । स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचिकरै ॥ ५ ॥ जाके औदारिक तन माहिं । सात कुधातु मल तैं नाहिं ॥

यातैं परमोदारिक कहो । आदि पुराण देख सर दहो ॥ ६ ॥ केवल ज्ञान समय तन सोय। सहज निगोद विना तब होय ॥ नारी नपुंसक के संबंध । तीर्थंकर पद उदय न बंध ॥ ७ ॥ जाके संयम समय सही । आहारक विधि-वरणी नहीं ॥ मस्तक भाग विराजे केश। प्रधान सचिक्कन सुभग सुवेश ॥ ८ ॥ अधिक हीन जिस अंगन होय-। आधिव्याधि व्यापे नहि कोय । विष शस्त्रादिक कारण पाय। आयु कर्म स्थित छेद न ताय ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

इत्यादिक महिमा घणी, तीर्थंकर परमेश ।

दश विधि जाके जन्म तै, अतिशय और विशेष १०

चौपाई ॥ प्रभुके अङ्ग न होय पसेव, नहीं निहार क्रिया स्वयमेव । नाशा नेत्र कर्ण मल नही । जीभ दंत मल मूल न कही ११ क्षीर बराबर रुधिर अनूप, शंख वर्ण शुचिसन्न सरूप। समचतुरस्त्र सुभग संठान। तुंग देह दश ताल प्रमाण ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

अपने कर अंगुष्ठ सो, मध्यमिका परयंत ।

बारह अंगुल ताल यह, अवधारी मतिवंत १३

याही अपने ताल सों दशगुण ऊच शरीर ।
सम चतुरस्त्र सठानको, यह प्रमाण है वीर ॥ १४ ॥

चौपाई ॥ प्रथम सार सहनन अविद्ध । बज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध ॥ रूप सम्पदा अचरजकार । सुरनर नाग नयन मनहार ॥ १५ ॥ सहसअठोतर लक्षण लसें । चक्री के तन चौसठ बसैं । लक्षण पाय सुलक्षण भिन्न। सोप्रतिमा के आसन चिन्ह ॥ १६ ॥ सहज सुगन्धि बसै वपु माहिं । सब सुगन्धिजासो दवजाहिं ॥ लोक उठावन शक्ति निवास । अतुल अनन्त देह बल जास ॥ १७ ॥ प्रिय हित बचन अमृत उनहार । सब जगजंतु श्रवण सुखकार ॥ जन्म जातअतिशय दश येह । अब दश केवल के सुन लेह ॥ १८ ॥ दोसौ योजन परिमित लोय । चहुंदिशमें दुर्भिक्ष न होय ॥ व्योम विहार भूमिवत जास । वपुसो होय न प्राण निवास ॥ १९ ॥ सब उपसर्ग रहित जग सूप । निराहार अतितृप्त स्वरूप ॥ एक दिशा सन्मुख मुख जोय । चतुरानन देखे सबकोय २० । सब विद्यापति अति गंभीर । छाया वरजित विमल शरीर ॥ पलक पात लोचन नहिगहैं । नख अरु केश एक से रहैं ॥ २१ ॥

सोरठा—नष्ट रसादिक घात होय न अशन अभावतैं, तिसकारण ते भ्रात, नखअरुकेशवढ़े नहीं ॥ २२ ॥

। दोहा ।

ये दश अतिशयज्ञान के, लिखे ग्रन्थ परिमान ।
चौदह सुरकृत होतहैं, ते अब सुनों सुजान ।। २३ ।।

चौपाई ।

भाषा अर्धमागधी नाम । सकल जीव समझै तिहिठाम ॥ मागध नाम देव परिभाव । यह गुण प्रगटैंस हज सुभाय ।। २४ ।। सबकी होय एकसी टेव । उर मैत्री वरतेस्वयमेव ।। सब ऋतुके फलफूल समेत । बनस्पति अति शोभा देत ।।२५।। रत्नभूमि दर्पण उनहार गति अनुकूल पवन सचार । सकल सभा आनन्द रसलेह । मरुत कुमार बुहारी देह ।। २६ ।। योजन मिति निर्मलभूठवै । मेघ कुमार गंधि जल चवै ॥ छप्पन छप्पन चहुंदिशमांहि। कंचनकमलगगनपथ जाहि ।। २७ ।। एक सरोज मध्य सुर करै । तातै अधर पेंड प्रभु धरै ॥ निर्मल दिश निर्मल नभ होय । जन आह्लाल करें सुरलोय ।। २८ ।। धर्म चक्र आगे तन [भिन्न । चलै धर्म

चक्रीपति चिन्ह। झारी दर्पण प्रमुख मनोज्ञ । मंगल द्रव्य आठ विधियोग्य ॥ २९ ॥

। दोहा ।

आठ प्रातिहार्यब विभव, तीरथ प्रभु के होय।
नाम ठामतिन के सुगम, सुनिये सज्जनलोय ॥ ३० ॥
समोसरण में मणिखचित, मध्य त्रिमेखलपीठ । गंधकुटी तापर बनी, चतुरामुख मन ईठ ॥ ३१ ॥ बीच सिंहासन जगमगै, मणिमाणकमय रूप । अन्तरीक्ष राजै तहां पद्मासन जग भूप ॥ ३२ ॥

॥ सोरठा ॥

समोसरण में मीत, प्रभु पद्मासन हो रहैं ।
यह अनादि की रीति, और भांति मत जानयो ॥३३॥

॥ दोहा ॥

तीन छत्र सिर सोहिये, चन्द बिंब उनहार ॥ भामंडल चहुंदिशदिपै, रविछबिछिपै निहार ॥ ३४ ॥ यक्ष अमर चौसठ चमर, ढारत खरे सुहाहिं । बरसैं सुमन सुहावने सुरदुन्दुभि गरजांहि ॥ ३५ ॥ जातरु नीचे नाथ को उपजै केवल ज्ञान । लोक शोक के हरणतें, सो अशोक

अभिराम ।। ३६।। तीन काल वाणी खिरे, छहछहघड़ी प्रमाण । श्रोताजन के श्रवणलो, सो निरक्षरी जान ।३७। इह विधिजिनवर गुण कथा कहत लहत कोपार । वाहिय गुण निज प्रगट सो, लिखे ग्रन्थ अनुसार ।३८। अन्तरंग महिमा अतुल का पे वरणी जाय । सुरगुरुसे नहि कहसके, पकेस्थविर मुनिराय ।।३९।। तीर्थङ्कर गुण चिंतवन, परम पुण्यको हेत । सम्यक् रत्न अंकूर है, उजै भवि उर खेत ।। ४० ।। जिनवर गुण मुक्तावली छंद सूत मे पोय । गुण माला भूधर गुही धारत कंठ सुख होय ।। ४१ ।। इति सम्पूर्णम् ।

७० साधु बन्दना भाषा ।

॥ दोहा ॥

श्रीजिन भाषित भारती सुमिर आन मुख पाठ ॥ कहूं मूल गुण साधुके परमित विंशति आठ ।।१।। पंच महाव्रत आहरन समिति पच विधिसार । प्रबल पच इन्द्रिय विजय षटावश्यकाचार ।। २ ।। भूमि शयन मंजन तजन बसन त्याग कच लोंच । एक बार लघु अशन थिति असन दतवन मोच ।। ३ ।।

॥ चौपाई ॥

थावर जीव पंचपरकार । चार भेद जंगम तनधार। जो सब जीवनका रक्षपाल । सो साधू वन्दों त्रयकाल ॥ ४ ॥ संतत सत्य वचन मुख कहैं। अथवा मौन सु अलधर रहैं ॥ मृषा वात बोले ना रती । सो जिन मारग साचेयती ॥ ५ ॥ कौड़ी आदि रत्न पर्यन्त । घटित अघट धन भेद अनन्त ॥ दत्त अदत्त न परसें जोय । ता रण तरण मुनीश्वर सोय ॥ ६ ॥ पशु पक्षी नर दानव देव । इत्यादिक रमणी रति सव ॥ तजें निरन्तर मदन विकार। सो मुनि नमो जगति हितकार ॥ ७ ॥ द्वि बिधि परिग्रह चउविस जान । सख्य असंख्य अनन्त बखान ॥ सकल संग तज होंय निरास। सो मुनि लहैं मोक्षपुर बास ॥८॥ अधोदृष्टि मार्ग अनुसरें । प्राशुक भूमि निरख पद धरें॥ सदा हृदय साधे शिव पन्थ । सो तपसी निर्भय निर्ग्रन्थ ॥ ९ ॥ निराभिमान निवन्ध अधीन । कोमल मधुर दोष दु:ख हीन ॥ ऐसे सुवचन कहैं स्वभाव । सो ऋषिराज नमों धर भाव ॥ १० ॥ उत्तम कुल श्रावक साचार । तास गेह प्राशुक आहार॥

भुंजे दोष छयालिश टालि। सो मुनिवर बहु सुरति सम्हालि ॥११॥ उचित वस्तु निज हित परहेत। तथा धर्म उपकरण अचेत ॥ निरख यतन से गहते सोय। सो मुनि नमों जोड़ कर दोय ॥ १२ ॥ रोग विकृत पूर्व आदान। नवो द्वार मल अग उठान॥ डाले प्रासुक भूमि निहारि। सो मुनि नमो भक्ति उर धारि ॥ १३ ॥ कोमल कर्कश हरुवे भार। रूक्ष सचिक्कण तप्त तुषार-छुन को परसि न सुख दुःख लहैं। सो मुनि राज जिनेश्वर कहैं ॥ १४ ॥ आमल कटुक कषायल मिष्ट। तिक्त क्षार रस इष्ट अनिष्ट ॥ इन्है स्वादि रति अरति न वेव। सो ऋषि राज नवे तिन देव॥ १५ ॥ शुभ सुगन्ध नानाज्ञ प्रकार। दुःख दायक दुर्गन्ध अपार ॥ नाशा विषय गिने सम तूल। सो मुनि जिन शासन तरु मूल ॥ १६ ॥ श्याम हरित सित रक्त पीत। वर्ण विवर्ण मनोहर भीत॥ ये निरखें तज राग विरोध। सो मुनि करें कर्म मल सोध ॥ १७ ॥ कुशब्द सुशब्द समरस स्वाद। श्रवण सुनत नहीं हर्ष विषाद ॥ स्तुति निन्दा को सम सुनें। सो मुनि राज परमपद गुने ॥१८॥ सा-

मायक साधें तिहुंकाल । मुक्ति पथ की करें सम्हाल ॥ शत्रु मित्र दोनों सम गनें । सो ऋषि राज कर्म रिपु हनें ॥ १९॥ अरिह सिद्ध सूर उवझाय । साधू पंच परम पद दाय ॥ इन के चरण नवें मन ल्याय । तिन मुनिवर के वन्दों पांय ॥२०॥ पावन पत्र परम पद श्रष्ट । जगति माहिं जाने उत्कृष्ट ॥ ठाने गुण थुति बारबार । सो मुनि राज लहैं भवपार ॥ २१ ॥ ज्ञान क्रिया गुण धारें चित्र । दोष बिलोकि लहैं प्रायश्चित्त ॥ नित प्रतिक्रमण करें रस लीन । सो साधू संयमी प्रवीण ॥२॥ श्री जिन बचन रचन विस्तार । द्वादशांग परमागम सार ॥ निज मति सान करें सम भाव । सो मुनिवर वन्दों धर चाव ॥ २३ ॥ कायोत्सर्ग मुद्रा धर नित्त । शुद्ध स्वरूप विचारें चित्त ॥ त्यागे त्रिविधि योग ममकार । सो मुनिराज नमों उरधार ॥२४॥ प्राशुक शिला उचित भू खेत । अचल अंग सम भाव सचेत ॥ पश्चिम रैन अल्प निद्राल । सो योगीश्वर बंचे काल ॥ २५॥ धर्म ध्यान युत पर्व विचित्र । अन्तर बाहर सहज पवित्र न्हौन विलेपन तजें त्रिकाल । सो मुनि वन्दों दीन द-

याल ॥ २६ ॥ लोक लाज विगलित भयहीन । विषय वासना रहित अदीन ॥ नग्न दिगम्बर मुद्रा धार । सो मुनिराज जगति हितकार ॥ २७ ॥ सघन केश गर्भित मल कीच । त्रस असख्य उपजे तिन बीच ॥ कच लुंचे यह कारण जान । सो मुनी नमो जोड़ युग पान ॥ २८ ॥ क्षुधा वेदना उपशम हेत । रस अनरस सम भाव समेत ॥ एक वार लघु भोजन करे । सो मुनि मुक्ति पंथ पद धरें ॥ २९ ॥ देख सहारा साधन मोक्ष । तव लों उचित काय बल पोष ॥ यह विचार थिति लेत अहार । सो मुनि परम धर्म धनधार ॥ ३० ॥ जंह जंह-नव द्वारा मल पात । तंह तह अमित जीव उत्पात ॥ यह लख तजें दन्तवन काज । सो शिव पद साधक ऋषि राज ॥ ३१ ॥

। दोहा ।

ये अट्ठाइस मूल गुण जो पालें निर्दोष,। सो मुनि कहत बनारसी पावें अविचल मोक्ष ॥ ३२ ॥

॥ ओंनमः सिद्धेभ्यः॥

७१ सूवा बत्तीसी ॥

॥ दोहा ॥

नमस्कार जिन देवको, करों दुहुं करजोर॥ सुवा बतीसी सुरस मैं, कहुं अरिनदल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु बचन, पढ़त रहै दिन रैन॥ करत काज अघरीतिके, यह अचरजलखि नैन॥ २॥ सुगुरु पढ़ावे प्रेम सों, यहू पढ़त मनलाय ॥ घटके पट जो ना खुलै, सबहि अकारथ जाय ॥ ३ ॥

॥ चौपाई ॥

सुवा पढ़ायो सुगुरु बनाय । करम बनहि जिन जइयो भाय ॥ भूले चूके कबहु न जाहु। लोभ नलिन पैं दगा न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जन मोह दगाके काज । बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम जिन बैठहु सुवा सुजान । नाज विषयसुख लहि तिहं थान ॥ ५ ॥ जो बैठहु तो पकरि न रहियो । जो पकरो तो दृढ़ जिन गहियो ॥ जो दृढ़ गहो तो उलटि न जइयो । जो उलटो तो तजि भजि

धइयो ॥ ६ ॥ इह विधि सूआ पढ़ायो नित्त । सुवटा पढिके भयो विचित्त ॥ पढत रहै निशदिन ये वैन । सुनत लहै सब प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन सुवटै आई मनै । गुरु सगत तज भज गये वनै ॥ वन में लोभ न-लिन अति वनी । दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तरु विषय भोग अन धरे । सुवटै जान्यो ये सुख खरे उतरे विषय सुखन के काज । वैठ नलिनपैं भिलखे राज ॥ ९ ॥ वैठो लोभ नलिनपे जवै । विषय स्वाद रस लटके तवै ॥ लटकत तरैं उलटि गये भाव । मुत्तरडी ऊपर भये पाव ॥ १० ॥ नलिनी दृढ़ पकरै पुनि रहै । मुखतैं वचन दीनता कहै । कोउ न वनमे छुड़ावन हार । नलनी पकरहि करहि पुकार ॥ ११ पढ़त रहै गुरुके सब वैन । जे जे हित कर सिखये ऐन ॥ "सुवटा वनमे उड जिन जाहु । जाहु तो भूल खता जिन खाहु ॥ १२ ॥ नलनीके जिन जइयो तीर । जाहु तो तहा न वैठहु वीर ॥ जो वैठो तो दृढजिन गहो । जो दृढ़ गहो तो पकरि न रहो १३ जो पकरो तो चुगा न खइयो । जो तुम खावो तो उ-लटन जइयो । जो उलटो तो तज भज धइयो । इतनी

सीख हृदय में „लहियो"॥१४॥ ऐसे बचन पढ़त पुन रहै। लोभ नलनि तज भज्यो न चहै॥आयोदुर्जन दुर्गति रूप। पकड़े सुवटा सुन्दरभूप॥ १५॥ डारे दुखकेजाल मझार। सो दुख कहत न आवै पार। भूख प्यास बहु संकट सहै। परबस परे महा दुख लहै॥ १६॥ सुवटा की सुधि बुधि सब गई। यह तो बात और कछु भई। आय परे दुख सागर मांहिं। अब इततैं कितको भज जाहिं॥ १७॥ केतोकाल गयो इह ठौर। सुवटे जिय में ठानी और। यह दुख जाल कटै किहं भाति। ऐसी मन में उपजीखांति॥ १८॥ रात दिना प्रभु सुमरन करै। पाप जाल काटन चित्त धरै॥ क्रम२ कर काट्यो अघ जाल। सुमरन फल भयो दीनदयाल॥ १९॥ अब इततैं जो भजके जाउं। तो नलनीपर वैठ न खांउ॥ पायो दाव भज्योतत्काल। तज दुर्जन दुर्गति जंजाल॥२०॥ आप उड़त बहुर वनमांहिं। बैठे नरभव द्रुमकी छांहिं तिल इक साधु महा मुनिराय। धर्म देशना देत सुभाय ॥२१॥ यह संसार कर्मवन रूप। तामहि चेतन सुआ अनूप॥ पढ़त रहै गुरु वचन विशाल। तौ हू न अप-

नी करै सभाल ॥२२॥ लोभ नलिन पै वैठे जाय। वि-
षय स्वाद रस लटके आय ॥ पकरहि दुर्जन दुर्गति परै
तामें दु ख वहुत जिय भरै ॥ २३ ॥

सो दुख कहत न आवै पार। जानत जिनवर ज्ञान म-
झार ॥ सुनते सुवटा, चौक्यो आप। यह तो मोहि प-
रयो सव पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तो सव मैं ही सहे।
जो मुनिवर ने मुखतें कहे ॥ सुवटा सोचे हिये मझार
ये गुरु साचे तारनहार ॥ २५ ॥ मै शठ फिरयो करम
वन मांहिं। ऐसे गुरु कहुं पाये नाहिं ॥ अव मोहि
पुण्य उदै कुछ भयो। साचे गुरुकोदर्शन लयो ॥२६॥ गुरु
की गुण स्तुति वारंवार। सुमिरै सुवटा हिये मझार ॥
सुमरतआप पाप भज गयो। घट के पट खुल सम्यक
थयो॥२७॥समकितहोत लखी सव बात। यहमै यह पर-
द्रव्य विख्यात ॥ चेतन के गुण निज महि धरे। पुद्गल
रागादिक परिहरे ॥२८॥ आप मगन अपने गुण माहि।
जन्म मरण भय जिय को नाहि ॥ सिद्ध समान निहा-
रत हिये। कर्म कलंक सवहि तज दिये ॥ २९ ॥ ध्या-
वत आप मांहि जगदीश। दुहुंपद एक विराजत ईश॥

इहविधि सुवटा ध्यावत ध्यान। दिनदिन प्रति प्रगटत कल्यान ॥ ३० ॥ अनुक्रम शिवपद जिसको भया। सुख अनंत विलसत नित नया ॥ सतसगति सब को सुख देय। जो कछु हियमें ज्ञान धरेय ॥ ३१ ॥ केवलि पद आतम अनुभूत। घट घट राजत ज्ञान सजूत ॥ सुख अनंत विलसे जिय सोय। जाके निजपद परगट होय ॥३२॥ सुवा बतीसी सुनहु सुजान। निज पद प्रगटत परम निधान। सुख अनत विलसहु ध्रुव नित्त। भैयाकी बिनती धर चित्त ॥ ३३ ॥ सवत सत्रह त्रेपन मांहिं। आशिवन पहिले पक्ष कहाहिं ॥ दशमी दशों दिशा परकास। गुरु संगति तैं शिव सुखभास ॥

इति सूवाबत्तोसी।

७२ अथ सुगुरुशतकम्।

। दोहा।

नमूं साधु निर्ग्रन्थगुरु, परम धर्महित दैन। सुगति करण भवि जननको, आनंदरूप सुवैन ॥ १ ॥ बुद्धि वधे सुधरुपजे, सुगुरु कुगुरु सुध होय। सुगुरु शतक के सुनत ही, दुविधा रहै न कोय ॥ २ ॥ ठौर ठौर जिन

ग्रन्थ मे, कही साधुको भेद । आठ वीस गुण मूल विन यथा लिग को खेद ॥ ३ ॥ उत्तर गुण के फरकते, मुनि पद विनसे नाहि । मूल विनट्ठे वृक्ष ज्यूं डाल फूल फल जाहिं ॥ ४ ॥ तिल तुष आदि लगाय के बहुत परिग्रह भेद । सो कबहू राखे नही, तीनो काल निषेद ॥ ५ ॥ अब इस पंचम काल मे सो गुरु दीखे नाहि तिन विन और गुरु नही, नमे तो सम्यक जाहिं ॥६॥ विमल शीलयुत नारि को, भर्तागये विदेश । पति पै रहे सुशीलिवा, तजे कुशीली शेष ॥ ७ ॥ ताते समकित भावको राखा चाहे कोय । नेकमात्र भी कुगुरु को नमे न कबहू सोय ॥ ८ ॥ कल्पित युक्ति बनाय के, केई कहें हर्षाय । नेकनमे तो कुगुरु को, हिसा किस विधिथाय ॥ ९ ॥ हिंसा के दो भेद है स्वपर कहे जिनेश । आपो आप डवोइयो, हिंसा भई विशेष ॥१०॥ पर हिसा पर जीवके करे प्राण को नाश । स्व हिसा ऐसी कही, भव भव पावे त्रास ॥ ११ ॥ केई भोले यूं कहें, जैन जैन सब एक । तिनके जैन अभ्यास को कैसे होय विवेक ॥ १२ ॥ शिव मारग को गौणकर मुख्य

कहैं जगराह । गुरु नाहीं ठग है वही, बिन पूजी के साह ॥ १३ ॥ सांची कथनी कुगुरु बिन, कहै न लोभ लगाव । कै सांचो श्रावक कहे, लेनेको नहीं भाव॥१४॥ परको धर्म सुनायके, चाहें पूजा भेट । ग्रन्थ सहित गुरु बन रहे, दया धर्म सब मेट ॥ १५ ॥ ऐसे कुगुरु जाके घरां, गुरुहो भोजन लेह । धर्मगयो धनहू गयो, गयो जन्म नरदेह ॥१६॥ गिरहूतें गिरणो भलो, पड़न जलधि में सार । बांबी मुखपैंठन भलो, बुरो कुगुरुव्यवहार ॥१७॥हालाहाल पीतो भलो, अग्नि प्रवेशहु ठीक । लाल पाल कुगुरुनायकी, भली नहीं है अलोक॥ १८ ॥ घर बन चैत्यालो गिनें, श्रावक जनकू शिष्य। हो महंत तिनसू कहैं, हमतो तुम्हरे भित्त ॥ १९ ॥ तुम्हरे बड़े कदीम ते, भानत चालत आहि। ताही मारग तुमचलो धर्म मूर्त्ति लीलाहि ॥२०॥ ऐसे वचनन से वध्यो, वोझ बड़ाई पाय । सूवो पकरो नलनी से उड़ो न तासो जाय ॥२१॥ जैसे वेश्यासक्त नर, ठगो थको हर्षाय । त्यूं जो ठगो मिथ्यात गुरु, हस हस धर्म ठगाय ॥ २२ ॥ नेक नमें सग्रन्थ गुरु, सम्नकित रत्न ठगात । खल सांटे नहीं

खोइये, अन्म जवाहर भात ॥ २३ ॥ परनर नेक निहार ते, जात त्रिया को शील । त्यों जो नमें सग्रंथको समकित जाय न ढील ॥ २४ ॥ नेक फिरे तो जङ्ग मे,सूरपना सब जाय । नेक नमे सग्रन्थको, समकित जाय पलाय ॥ २५ ॥ विन्दु गिरे जो स्वप्न भी यती सतीपन जाय । स्वप्न मात्र सग्रन्थ को, नमते समकित जाय ॥ २६ ॥ केई कुगुरू यू कहे, भोलोको बहकाय । ऊपर से नमनेयकी, समकितकिस विधि जाय ॥ २७ ॥ मन वच काया तीन में प्रवल काय को पाप । तीनो आरभ के विषं, निर्णय करो स्थाप ॥ २८ ॥ ताते मन वच काय में, प्रवल कौउ हो जाय । ताही को दूषण अधिक, कहो सुगुरु मुनिराय ॥ २९ ॥ मात तात मित भात को, नमें जगत् की राह । धर्म नमें शिवराह है

तें व्यवहार तो, छोड़ उपजे खेद ॥ ३३ ॥ काल अनन्ता बीतियो, साधतही व्यवहार । कबहूं तुम को नाभयो, सुगुरु कुगुरु निर्धार ॥३४॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म को, नमस्कार एक वार । दोष लगै परनाम को, यामें फेरन-सार ॥३५॥ श्रुत सागर टीका करी, कुगुरु निषेध अपार । सशय जाके होय सो, देख करो निर्धार ॥ ३६ ॥ गत गत में बहु बिपत युत, कहो ग्रहीत मिथ्यात । बोझ वड़ाई पाय कर, तजन सको यह बात ॥ ३७ ॥ जो मूरख अज्ञान से, ग्रहो न छांड़ों जाय । तव ग्रहीत मत जासको, भव अनंत दुखदाय ॥३८॥ परिवर्तन करवावही, यह ग्रहीत मिथ्यात । भेद विना छाड़ो नहीं, धरे अनंते गात ॥३९॥ नमे कायते कुगुरु को, मन वच भेद न पाय । ता विपाक भव भव विषे, धरे अनन्ती, काय ॥४०॥ नाम दिगम्बर को कहे, अवर धारें जेह । देखत भूली करत है, मूढ़ नजाने केह ॥ ४१ ॥ पक्षपात छाड़े नहीं, पर को मूरख जान । श्रावक जन को नायकर, चतुर आप को मान ॥ ४२ ॥ वैसे गुरु श्रावक नहीं ऐसे दुक्खम काल । जेसे तुम श्रावक रहे, तैसे हम

गुरु चाल ॥ ४३ ॥ निगुरा रहना योग्य नहीं, गुरु बिन ज्ञान न होय। ऊंट व्याह खर गान को, कौतुक कहिये सोय ॥ ४४ ॥ कमल कजोड़े नीपजे, अग्नि माहिं हिम होय। धारें संग दिगम्बरां, तिन मुख धर्म न कोय ॥ ४५ ॥ वालू पेले तेल हू, अहिमुख अमृत जोय। तोऊ न कबहूं जैन के, वसन सहित गुरु होय ॥ ४६ ॥ अर्द्ध दग्ध अज्ञान नर, पक्षपात को मूल। भेद जानकर नमत हैं, तिन के मस्तक धूल ॥ ४७ ॥ जान हलाहल खाइये, अन जानेहू खाय। दोउ मरे संशय नहीं, पाप न अहलो जाय ॥ ४८ ॥ यासे जान अजान तू, भूल विसरहू चित। नमस्कार मुनि सुगुरु बिन, कहुन कीजो मित ॥ ४९ ॥ हस नहीं जादेश मे, कालदेश है सोय। कागन को हसा गिने, ऐसे मूरख लोय ॥ ५० ॥ लौकिके बचननते ठगे, मूढ़ न जाने भेद। गुरु सज्ञा के कथनतें, वह कावे घर खेद ॥ ५१ ॥ बचन गुरु शिक्षा गुरु, वय अधिको गुरु होय। धर्म गुरु कछु और है, समझ नमो पद दोय ॥ ५२ ॥ हेय कथनहू बहुत है, गेय कथनहू

काल अनन्ता बीतियों, इस विधि धर २ काय। सुगुरु कुगुरुकी परख, को कबहुन बनो उपाय ॥ ५४ ॥ उलट पलट शिक्षा सुनी, मत मत की बहुवार। स्वरग नरक चहूं गति विषे, नाहि भयो निर्धार ॥ ५५ ॥ चेतन को यह दाव है, जो चेते तौ वीर। सहज नवेड़ो होत है, सुगम गहते धीर ॥ ५६ ॥ मोक्षदेश की राह यह, कुंद कुंद मुनिराय। प्रगट दिखाई सवन को, ह्वै विदेह अब जाय ॥ ५७ ॥ नय प्रमाण निक्षेप तें; देवधर्म गुरु ठीक कर आत्मानुभवन कर, विकल्पत जो अलीक ॥ ५८ ॥ कर समाधि तन छांड़के, सदा चाउथो काल। उस सुक्षेत्र मे उपजे, तुरतहिं होत सभाल ॥ ५७ ॥ श्रुतकेवलि केवलि जहां, रहै सासते धीर। शुद्धात्म मुनिपद विमल, भावलिंगधरवीर ॥ ६० ॥ प्रश्न करे फिर शिष्य यह, किसविधिसाधन होय। इस दुक्खम कलिकालि में किस विधि पैये सोय ॥ ६१ ॥ अनंतानुबंधी प्रबल, प्रथम चौकड़ी सोय। बहुर तीन मिथ्यात हैं, सात प्रकृति इस होय ॥ ६२ ॥ क्षय होते सातूं प्रकृति, क्षायक समकित होय। उपशन्तें उपशम कहो, क्षय उपशम क्षय

होय ॥ ६३ ॥ क्षय उपशम विधि तीन हैं, वेद कहै वि-
धचार । क्षायक के द्वै भेद हैं यू, नव भेद विचार ॥६४॥
करण लब्धि है पचमी, सो न भई रे जीव । चारलब्धि
वहु वर भई, जानहु आतमपीव ॥ ६५ ॥ काल लब्धि
ते सहज ही, उपजे विन उपदेश । कै गुरु के उपदेशते
द्वय प्रकार परवेश ॥ ६६ ॥ चारों गति में होत है, सैनी
जिय सरपंग । मिथ्या भाव विदार के, समकित होय
अभग ॥ ६७ ॥ ज्ञानगर्व मतिमंदता, निठुर वचन दुर-
भाव । आलस पाचो विधि थकी, समकितनाश प्रभाव
॥ ६८ ॥ चित्त प्रभावना में रहै, हेयाहेय सुज्ञान ॥ धी-
रज हर्ष प्रवीणता, भूषण पांच बखान ॥ ६९ ॥ षट् अ-
नायतन मूढ़त्रय, आठ दोष मद आठ । यह पच्चीसों
मल कहे, मलो मूलते ठाठ ॥ ७० ॥ ठौर ठौर जिन
ग्रंथ में, भरा भेद आपार । देख सीख निर्णय करो, तु-
रत होय निर्धार ॥ ७१ ॥ सरधानी जन देखकर, मन में
हर्षित होय । मिथ्या विषई जनन को, नाहिं सराहै
सोय ॥ ७२ ॥ इक मिथ्या औगुण लगे, सब गुण जाय
पलाय । हीरकणी मोदक पड़ी, तिनको कोउ न खाय

॥ ७३ ॥ घृत मीठो मेवा विविध, औगुण भये समस्त। शुभ क्रिया बाह्यादिबहु, समकित विना निरस्त ॥७४॥ एकहु गुण न सराहिये, सब गुण गहिये मित्त। विष-मेलाके मोद का, चतुर न चाखे चित्त ॥ ७५ ॥ प्रगटभेष मिथ्यात को, मूढ़ न जाने भेद। गुण बिन आप पुजाइ है, अतते करे निषेद ॥ ७६ ॥ निंद्यनीय सो निंद्य है, वंदनीय सो ऐन। निंद्य वंद्य अरु वंद्यनिंद, ऐसो भेद न जैन ॥ ७७ ॥ सम्यक्ज्ञान बिना कछू, भेद न जानो जाय। तातें समकित होन को जैनी करो उपाय ॥७८॥ जैसे चिंतामणि बड़ो सब रतनके माहिं। त्यूं सब धर्मन में बड़ो समकित संशय नाहिं ॥ ७९ ॥ सिद्ध भये हैं होंयगे तीनकाल तिहुं लोय। समकित को परताप यह भ्रम जानो मत कोय ॥ ८० ॥ चार चिन्ह समकित भये कहे जिनागम माहिं। प्रशमभाव सवेगता दया आस्तिक ताहि ॥ ८१ ॥ कुगुरादिकके त्यागते वाहिर की सुध होय। अन्तरंग पर द्रव्य तें भिन्न तत्व है सोय ॥ ८२ ॥ वाहिर वस्तर त्यागतें होत छठे गुण थान। कुगुरादिक वाहिर तजे कहिये सम्यक् वान् ॥ ८३ ॥ वाहर की द्र-

ढ़ता भये शंकादिक सव जाय। धर्मरत्न खोवे नहीं वोझ वड़ाई पाय ॥८४॥ जिते न वाहिरते मिटे नमनक्रिया की भूल। तिते न सरधा उज्जली है है कवहु न मूल ॥८५॥ नेक वड़ाई के कहे तजे न मूरख टेक। भेप कुभेप लखे नही नमे धार अविवेक॥ ८६ ॥ वह मूरख वहिरा तमा करे कुगुरु की पोप। कहे नमन क्रिया विषे हमे न दीखे दोप ॥ ८७ ॥ अध्यातम शैली विपे सुने सिद्धात न

सौवार ॥ ९४ ॥ पढ़े सुने इस शतक को मन मे धारे ज्ञान । होय दिगंवर पंथ को ताही के सरधान ॥९५॥ अल्पकाल में शिव लहे यामें संशय नाहिं । सुगुरु दिगंवर पंथ के इत उत भटकैं नाहिं ॥ ९६॥ मध्य देशमें देश यह नाम दुढाहड़ कोय। जयपुर नगर सुहावनो तामें कहिये सोय ॥ ९७ ॥ तहां जैनमत को बड़ो सदा रहे परभाव । जैन जैन में है रहे भेदा भेद लखाव ॥९८॥ भेद भाव अति होत ही सुदृढ़ भई परतीत । पितामह पिता ते हमै तजी कुलिङ्गन प्रीत ॥ ९९ ॥ गोधा जाको गोत है श्रावक कुल है जास । अध्यात्म शैली विषै नाम कहैं जिनदास ॥ १०० ॥ अठारह से बानवे चैत मास तम लीन ॥ सोमवार आठैंतिथि शतक संपूरण कीन ॥ १०१ ॥

इति सुगुरु शतकम् ।

ओंनमः सिद्धेभ्यः ।

७३ प्रतिमाचालीसी ।

दोहा ॥

दुःखहरण सब सुख करण श्रीजिनमुद्रासार । नित-

प्रति वदे भव्यजन नागा करे गंवार ॥१॥ प्रतिमा आगे विघ्नलय मंगल होय हजूर। जैसे आंधी मेटके घन वर्षे भरपूर ॥२॥ दर्शन चिन्ता कोटि फल चलते कोटा कोर। कोटा कोटि कोट पथ फल अनंत प्रभु ओर ॥३॥

चौपाई ॥

अब जो ढूंढिया करत हैं आन। प्रतिमा निन्दा-चार विधान॥ प्रथम अचेतन कृत्रिम दोय। एकेंद्री अरु आरम्भ होय ॥ ४ ॥ उत्तर दोहा ॥

तासो जैनी कहत है उत्तर चार विचार। सांच होय तो पूजियो तज झूठा हकार ॥ ५ ॥

अचेतनका उत्तर चौपाई ॥

वाणी श्रीजिनवर की होय। पुद्गलमई अचेतन सोय। तिन के सुनते प्रगटे ज्ञान। यू प्रतिमा लख उ-पजे ध्यान ॥ ६ ॥ जिनवर अमर भये शिव पाय। रही अचेतन जड़मय काय॥ सो पूजी बन्दी सुरराय। बहु विधि नाचे गाय वजाय ॥ ७ ॥

कृत्रिम का उत्तर चौपाई ॥

उत्तम स्तवन अनेक प्रकार। ढाल बीनती आदि क-

सार ॥ पढ़ते सुनते पुण्य बढ़ाय । ज्यों प्रतिमा तैं निर्मल भाय ॥ ८ ॥

एकेन्द्री का उत्तर दोहा ॥

बनस्पती कागद कलम, स्याही अग्नि सुभाय । एकेन्द्री पुस्तक प्रगट, क्यों मानो शिरनाय ॥ ९ ॥

प्रश्नोत्तर दोहा ॥

पोथी पंचेंद्री विखेतातें कही मनोज्ञ । प्रतिमा पचेंद्री घड़े सो क्यू नाहीं योग्य ॥१०॥ पोथी ज्ञानी पढ़त हैं, ताते उपजे बोध । पूजा चरती करत है आरत रौद्र निरोध ॥ ११ ॥

आरभ का उत्तर । गीता छन्द ॥

जिन गर्भ होत नगर बनायो न्हवनजन्म कल्याणमें । तप में करी वर्षा पुहुप की बाग तरवर ज्ञान नें ॥ निर्वाण होत शरीर दाहा इन्द्र हरष सुर मे गया । यह पंचकल्याणक भक्ति कर एक अवतारी भया ॥ १२ ॥

व्रती को आरभ का फल । चौपाई ॥

भरत सन क्षिती गृह व्रत-धार । सेना सहित नाग असवार ॥ पूज्यो आदीश्वर जिनराय । अवधि ज्ञान

पायो सुखदाय ॥१३॥ भरत जाय कैलाश पहार । करे बहत्तर जिन ग्रह सार ॥ तामे धरे वहत्तर विम्ब । मुक्ति भये तजके जगडिम्भ ॥ १४ ॥ श्रेणिक हो हाथी असवार ॥ महावीर पूजो जिनसार ॥ बाध्यो शुभतीर्थंकर गोत । आरंभ को फल प्रगट उद्योत ॥ १५ ॥

दोहा ॥

साधु वन्दने जात हो, जूती पहर हमेश । राह पाप तुम को लगे, किधौ साध को लेश ॥ १६ ॥ जो पातक तुमको चढ़ै, क्यों जावो हो वीर । जो मुनि बरको लगत है मने करे किन धीर ॥१७॥ पूजा मे हिंसा सहल पुण्य अनत अपार । विषकनिका नहि कर सके, सागरदोष लगार ॥ १८ ॥ पैसे का टोटा जहां बढ़ता लाख किरोर । सो व्यापार करे नही, सांच कहो तज थोर ॥ १९ ॥ चित्र लिखी नारी लखे, मन गदला बहु होत । मूर्ति शात जिनेशकी, देखे ज्ञान उदोत ॥२०॥ यह बातें प्रगटे सुनी, ज्वाब दियो नहिं जाय । हारमान के यू कह्यो हम नहिं मानें भाय ॥ २१ ॥

चौपाई ॥

नाम थापना द्रव्यरु भाव । निक्षेपे हैं चार सुभाव ॥ तीनों मानत हो महाराज । थापन नहि मानो किह काज पैंतालीसों आगम माहिं । प्रतिमा पूजा है सब थांहि ॥ सो तुम साधु सुनो सब लोय । नरभव सफल करो भ्रम खोय । जीवा अभिगम ग्रन्थ मंझार । सुरविज इन्द्र नामनेसार ॥ अक्रितम प्रतिमा की बहुकरी । पूजा भक्ति विनय बहुधरी । उववाई में कथन निहार । अंवड़ सं-न्यासी व्रतधार ॥ जिन पूजा वंदना सो करी । है कि नहीं तुम भाषो खरी ॥ ज्ञातृ कथा में देखो वीर । सती द्रौपदी ने धर धीर । कृत्रिम प्रतिमा पूजा करी । महा सती में सो गुण भरी ॥ २६ ॥ नाम उपासक ,दशा प्र-धान । दश श्रावकने किया प्रवान । परतीर्थ परदेवन रमें । निज तीरथ निजदेव सो नमें । सूत्र कृतांग माहि विस्तार । प्रतिमा भेजी अभय कुमार। आर्द्रकुमार 'मी-तको जान । तिस तें पायो सम्यक् ज्ञान । सूत्र भगौती माहिं विचार । जंघा चारण विद्या चार ॥ अक्रितम प्रतिमा पूजाकरी ॥ महामुनों ने युतिरस भरी ॥

॥ दोहा ॥

इन्हें आदि बहु गाम हैं, तुम आगम में वीर।
साखी के झूठी कहो, पक्षपात तजधीर ॥ ३० ॥

। प्रतिमा मानी तिसका वचन ॥दोहा॥

प्रतिमा दर्शन योग्य है, दोप चढ़ावन वीर।
दीप धूप फल फूल चरु, चन्दन अक्षत धीर ॥ ३१ ॥

॥ उत्तर दोहा ॥

आठों आरंभके किये, गरा स्वर्ग जे जाहि।
तिनकी कथा प्रसिद्ध है, जिन आगम के माहि ॥३२॥

। पूजाफल । कवित्त ।

नीरके चढाये भवनीर तोर पावे जीव चंदन चढ़ाये चदसेवे दिन रात है। अक्षत सो पूजते न पूजे अक्षदुख जाको फूलन सों पूजे फूल जात में न जात है ॥ दोजे नैवेद्य तातें लीजे निर्वेदपद दीपक चढ़ाये ज्ञान दीपक विकसात है। धूपके खेयते भ्रमदौर धूप जाय जैसे फल सेती मोक्ष फल अर्घ अघघात है ॥

॥ सवैया ॥

साधु हु कीपूजातें हजार गुणा फल जिन जिनते ह-

जार गुणा फल पूजा सिद्ध की। सिद्ध ते हजार गुणा फल पूजा प्रतिमा की तिहुंकाल दाता आठों नवों निधिसिद्ध की॥ शांत मुद्रा देख साध अरहंत सिद्ध भये प्रतिमा ही कर्ता है पांचों पद वृद्धि की। करे न वखान सिद्ध होनको है यही ध्यान मोक्षफल देय कौन बात स्वर्ग ऋद्धि की॥ ३४॥

॥ कुंडली छंद ॥

चूल्हा चक्की ऊखली नीर बुहारी पंच। छट्ठा द्रव्य उपावना छहों कार्य अघसंच॥ हरण इन्होके पाप अर्थ षट्कर्म बखानं। जिन पूजा गुरु सेव पढत संयम तपदानं॥ सब में पहिले प्रात उठत पूजा सुख मूला। कर पूजा जिनराज काज तज चक्की चूल्हा॥३५॥

॥ सवैया ॥

धन्य जिन भवन करे है सोभी धन्य बिम्ब धरे दोनो निस्तरें वह संघई कहावई। कोऊ पूजा करे आय कोऊ न्हौन देखे आय गंधोदकपाय लाय आनंद बढावई॥ कोई द्रव्य लावे कोई पढे कोई नमे ध्यावे कोई छत्र चामर सिंहासन चढावई। कोई नाचे गावे बा स-

आवे भक्ति को बढ़ावे पुण्य तीन लोक में न पूजा सम पावई ॥ ३६ ॥

॥ दोहा ॥

तीन लोकनिहुं काल में, पूजा सम नहिं पुन्य ।
ग्रहवासी को प्रातही, विन पूजा घर सुन्य ॥३७॥

॥ अडिल्ल ॥

ढूंढक मत के शास्त्र उक्त बातें कही ॥ निज मत पोषा नाही न पर निंदा गही । समझै सज्जन सत वसायन मूढसो । ज्ञान हिये मे नाहि लगे है रूढसों ॥३८॥

॥ दोहा ॥

थोरासा यह कथन है, लेहु बहुत कर मान ।
नित प्रति पूजा कीजिये, यह परभव सुखदान ॥३९॥

॥ चौपाई ॥

दिल्ली तख्तबख्त परकाश । सत्रहसै इक्यासी मास ॥
जेठ शुक्ल कुगचद उदोत । द्यानत प्रगटयो प्रतिमा जीत॥

इति प्रतिमाचालीसी सपूर्णा

मूढ दशा सवैया

ज्ञान के लखनहारे विरले जगत् माहीं ज्ञान के लि-

खनहारे जगत् में अनेक हैं। भाषे निरपक्ष ऐन सज्जन पुरुष केई दीसत बहुत जिन्हैं वचन की टेक हैं ॥ मूकपरे रिस खात ऐसे जीव बहु भ्रात और अचूक थोरे धरे जो विवेक हैं। ज्ञाता जन थोरे मूढ़मति बहुतेरे नर जाने नाहि ज्ञान सर कूप कैसे भेक हैं ॥ शुभम् ॥

ओं नम. सिद्धेभ्यः ॥

७४ बारहखड़ीसूरत ।

॥ दोहा ॥

प्रथम नमू अरहंतको, नमू सिद्ध आचार। उपाध्याय सर्व साधुको, नमूं पंच परकार १ भजन करू श्री आदि को अंत नाम महावीर। तीर्थंकर चौबीसको, नमू ध्यान धर धीर। जिन ध्वनि तैं बाणी खिरी, प्रगट भई संसार। नमस्कार ताको करूं एकचित्त मनधार। ३ ता बाणीके सुनत ही, बाढ़ै परमानन्द। हुई सुरत कछु कहन की बाराखड़ी के छन्द ४ बाराखड़ी के छन्द बनाऊ यह मेरे मन भाई। जो पुराण में जाय बखानी, सो मैने सुन पाई। गुरुप्रसाद भव्यन की संगत, यह उपजी चतुराई। सूरत कहे बुद्धि है थोरी, श्रीजिननाम सहाई॥

॥ कका ॥

कका करत फिरो सदा, जामन मरण अनेक। लख चौरासी में रुलो, काज न सुधरो एक। काज न सुधरो एक दिवाने, तै शुभ अशुभ कमाये। तेरी भूल तोह दुःख देवे बहुतेरे दुःख पाये। भटकत फिरो चहुंगति भीतर, काल अनंत गमाये। सूरत सतगुरु सीख न मानी ताते जग भरमाये। अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म की सारन जाणी, छाड़ सकल मिथ्यात्व। भजो श्रीजिन की वाणी

॥ खखा ॥

खखा खूबी मत तजो, ससारी सुख जान, यह सुख दुःख की खान है, सतगुरु कही बखान, सतगुरु कही बखान जान यह, तू मत होय अयाना। विना शोकसुख इन्द्रियन का यह, तै मीठा कर जाना। यह सुख जान जान है दुःख की, तू क्यो भर्म भुलाना सूरत कहे सुणोरे प्राणी, तू क्यो रहा लुभाना, अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सारन जानी० ॥ गगा ॥

गगा गुरु निर्ग्रन्थ की, सद् वाणी मुख भाष। और विकार सकल तजो, यह थिरता मन राख, यह थिरता

मन राख चाख रस, जो अपना सुख चाहे, और सकल जंजाल दूर कर, ये बातें अक गाहे, पांचों इन्द्रिय बश कर राखो, कर्म मूल को दाह। सूरत चेत अचेत होय मत अवसर बीता जाहे, अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥

घघा ॥

घघा घाट सुघाट में, नाव लगी है आय। जो अब के चेते नहीं, तो गहरे गोते खाय, गहरे गोते खाय जब कौन निकासन हारा, समय पाय मानुष गति पाई, अजहू नाहिं संभारा, बार बार समझाऊं चेतन, मानो कहा हमारा, सूरत कही पुकार गुरुने, यों होवे निस्तारा। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥

नना ॥

नना नाता जगत में, अपस्वार्थ सब कोय, आन भीड़ का दिन पड़े, कोई न साथी होय। कोई न साथी सगा सगाथी, जिस दिन काल सतावे, सब परिवार अपने सुख का है, तेरे काम नहीं आवे। जैसे ज्ञान ध्यान तू कर है, तैसा सुख पावे, सूरत समझ हो मत बौरा, फिर यह दाव न पावे अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार

न आनी० ॥ घघा ।

घघा चंचल विफल मन, तिस मन को वश आन अब लग मन वश मे नहीं, काज न होय निदान। काज न होय निदान जान यह, मन नाही वश तेरा। पाचों इन्द्री छठा और मन, तिनका तू भया चेरा। राग द्वेष अर मोह सलोपी, इने आन्हे मिल घेरा। सूरत जिस दिन मन थिर होगा, तिस दिन होय निवेरा। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी० ॥

। छछा ।

छछा छै रस स्वाद में, रहो छहो रतिमान। छकत रहो छाड़त नही, समझत नाहिं अज्ञान। समझत नाहि अज्ञान पाय यह, इन स्वादन में राचो। दही दूध घी तेल नमक और, मीठा खाखा माचो। आर्त्तचिंता लाग रही है, ज्ञान ध्यान को काचो। सूरत फिरे चहुं गति भटकत, सत् गुरु मिलो न साचो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ जजा ।

जजा जाग सुजान नर, यह जागन की वार। जो अब के जागे नहीं। फेर न होय संभार। फेर न होय सभार

जान यह, जो अबके नहि जागे जो जागे। निरभय पदपावे, जरा मरण भय भागे। नातर फेर फिरे भव सागर, हाथ कछू नहि लागे। सूरत होय भला जब तेरा, संसारी सुख त्यागे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

झझा ॥

झझा झाड़ पिछोड़ कर, कहूं तोहि समझाय। जामें तैं बासा किया, सो तेरी नहिकाय। सो तेरी नहिं जाय संग, तुझे अकेला जाना। तैंने घर बहुतेरे कीने, आवत जात भुलाना। थावर त्रस पत्ती मानुष भया, देव कहाया दाना। सूरत छहों काय तें भुगती, आप नहीं पछताना। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी०॥

नना ॥

नना नरपद हैं भला, ऐसे और न कोय। जे संभालेते तिर गए, भवसागर से सोय। भवसागर से तिरे बहुतेरे, जे इस बार संभारे। तीन काल जिन सही परीषह, कर्म चूर करडारे। आवन जान जगत् सो बीता, लोकालोक निहारे। सूरत जो ऐसा सुख चाहे, तू भी चेत अबारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म की सार न जानी० ॥

टट्टा ॥

टट्टा टारा जिन कियो। ते वहुत रुले ससार। फिरे जगत् मे झटकते, तिन को वार न पार। तिनको वार न पार कहू वे फिरते फिरे विचारे। नर तिर्यंच नरक देवगति, चारो धाम निहारे। जामन मरण धरे वहुतेरे, सहे महा दुःख भारे। सूरत कौतुक आप कमाये, कापे जाय उवारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म की सार न जानी० ॥

ठठा ॥

ठठा ठिठक रहो कहा। वेग करो संभाल। छोड ठाठ ससार को, ज्यो टूटे जग जाल। ज्यों टूटे जगजाल वावरे, वहुर नहीदुख पावे। सत्गुरु कही मान सो शिक्षा फिर नहिं आवे जावे। छाड़ो सग कुमति गणिकाको, जो तुम को वहकावे। सूरत सग सुमति की कीजे, शिवपुर आन दिखावे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

डड्डा ॥

डड्डा डगमग तुम तजो, अडिग होय पद साध। दृढ़ता कर परणाम की, ज्यों सुख लहै समाध। ज्यों सुख लहे समाधि वादतज, आपा खोजो भाई। सिद्ध रूप

तेरे घट भीतर कहा ढूणड्यो जाई ॥ जड चैतन्य भिन्न जानी तुम मिटे कर्म दुखदाई। सूरत आप आपको साधो, ऐसे गुरु फरमाई। अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥

। ढढा ।

ढढा डोरी छाड़दे, इनके ढिंग मत जाय। कुगुरु कुदेव कुज्ञानको, तू मत चित्त लगाय। तू मत चित्त लगाव भाव तज, कुगुरु कुदेव कुज्ञानी। यह तोको दुर्गति दिखलावें, सो दुखमूल निशानी। इनतें काज एक नहिं सुधरत, कर्म भरमके दानी। सूरत तजिये प्रीति इन्हों की, सत्गुरु आप बखानी। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी० ॥

। णणा ।

णणा रण ऐसा करो, संवर शस्त्र सभार। कर्म रूप ये अरि बड़े, तीर ताक कर मार। तीर ताक कर मार बीर तिन्हें, कर्म रूप अरि सोई। ये अनादि के है दुखदाई, तेरी जाति विगोई। नारायण अरुप्रतिहर चक्री, यातें बचा न कोइ। सूरत ज्ञान सुभट जिन जागो, तिन याकी जड़ खोई। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न

जानी० ॥ । तता ।

तता तन तेरा नहीं, तामे रहो लुभाय। नाता तोडे छिनक मे, ताहि कहा पतियाय । ताहि कहा पतियाय पाय सुख, होय रहो या वासी । छण मे मरे छणक में उपजे, होय जगत् मे हासी । याके संग बढ़े ममता बहु पड़े महा दुःख फासी । सूरत भिन्नजान इस तन को या से होय उदासी । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । थथा ।

थथा थिरपद जो चहे, यो थिरपद नही होय । जाके घट थिरता प्रगट थिरपद परसे सोय । थिरपद परसे सोय होय सुख, गति चारोसे छूटे । ज्ञान ध्यानको करिहै जो मन, कर्म अरिन कोकूटे। यह जगजाल अनादि काल को, सो छिन माहि टूटे । सूरत तो थिरपद को परसे, शिवपुर के सुख लूटे । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ ॥ ददा ॥

ददा द्रव्य छहो कहे, प्रगट जगत्के नांहि। और द्रव्य सब छय हैं, ज्ञानी मानत माहि । ज्ञानी मानत माहि द्रव्य छै, जे धातुनके जानो । माटी भूमि शैलकी शोभा

जगमें प्रगट बखानो। पुद्गल जीव अधर्म धर्म अर, काल अकाश प्रमानो। सूरत इन द्रव्यन की चर्चा, ज्ञानीगिने खजानो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जाणी०॥

॥ धधा ॥

धधा ध्यान जगत् विषे, प्रगट कहे हैं चार। आर्त्त रौद्र धर्म शुक्ल, जिन मत कहे विचार। जिनमत कहे विचार चारये, ध्यान जगत् के माहि। आर्त्त रौद्र अ· शुभ के करता, इनसे शुभगति नाहि। धर्म ध्यान के धारक जे नर, शुभ सुख होत सदा ही। सूरत शुक्लध्यान के करता, सो शिवपुर को जाही। अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥

। नना ।

नना नाशे मरण जब, नेह धरे निज माहि। नटकी कला जगत विषे, नेह धरे निज माहि। नेह धरे निज माहि जगत् में, आपा नाहि फसावे। ज्यों पानी बिच रहे कमल तरु, जल भेदन नहिं पावे। शुभ और अशुभ एक से जाने, रीझ नहीं पछतावे। सूरत भिन्न लखे ऐसी विधि, कर्म नाहि ढिंग आवे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

। पपा ।

*पपा प्रभु अपने लखो, पर संगत दे छोड़। पर सं-गत आश्रव बंधे, देय कर्म झकझोर। देय कर्म झकझोर जोरकर, फिर निकसन नहिं पावे। आश्रव बंधकी पड़ी बेड़ियां, लगे कोई न उपावे। ताते प्रीति धरो संयम सो, हित करहै दिल जोवे। सूरत यों संवर को कीजे, कर्म निर्जरा होवे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी० ॥

। फफा ।

फफा फूलो ही रहे, फोकट देख न भूल। फासी फंद अनादिकी कर तोड़न को शूल। कर तोड़न को शूल भूल मत दाव भला तैं पाया। भ्रमते भ्रमते भवसागर मे मानुष गति में आया। याही गति मे भये तीर्थंकर केवल ज्ञान उपाया। सूरत जान बूझ मत चूके दाव भला तैं पाया। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

॥ बबा ॥

बबा बसन कुव्यसन हैं, इन सातनको त्याग। पांचो इन्द्रिय वश करो, शुभ कारज को लाग। शुभ कारज को लाग दिखाने, व्यसन सातये सारी। जूवा मांसमद वेश्या चोरी, और खटक पर नारी। भला चाहे तो

त्याग इन्हें तू, ले ये वरत अवधारी। सूरत इस भवमें सुख पावे, परभव सुख अधिकारी। अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥ भभा ॥

भभा भटकत ही फिरो, गहो महा मिथ्यात। भेद न पायो ज्ञान को, तातैं आवत जात! तातें आवत जात बात सुन भेदज्ञान नहिं पायो। क्रोध लोभ और मान जो माया, तातें नेह लगायो। परमार्थ की रीति न जानी, स्वार्थ देख भुलायो। सूरत जागो भेद ज्ञान जब तब मिथ्यात मिटायो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ ॥ ममा ॥

ममा मति तिनकी सही, जिन मल कीनो दूर। मत वाले मल से भरे, तिनको नाहि शहूर। तिन को नाहि शहूर दूर है, कुमती कुमत विचारैं। तिनके कुगुरु तिन्हें बहकावें, पकरे भवजल डारे। पुण्य पापका भेद न जाने, जीव अनाहक मारैं। सूरत ते नर पड़े कुसगति, किस विधि दोष निवारैं। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ यया ॥

यया अज्ञान पणो बुरो, याते होय अकाज। जाणा

पगो कर्मनि बिषै, चाहि न पावे पाप । चाहि न पावै पाप ज्ञान बिनि, करो नेम व्रत को है । तात मात वधु सुत का मन, तू इनके सुख मोहै । आठो याम मग्न है इनमें यह तुमको नहि सोहै । सूरत तज अज्ञान जिसा गह ज्ञान दृष्टि जिह सुख हो है । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म को सार न जानो० ॥

॥ ररा ॥

ररा रचा अनादि को, रुचि विषयन की प्रीति । रस नहिं चाख्यो आत्मीक, लख्यो न रस की रीति । लख्यो न रस की रीति मीत तैं, विषयन सो सुख जानो । आत्मीक रस है सुख दाई, सो तैं नहीं पिछानो । जिन रस रीति लखी आतम का ते शिवपुर को राणो । सूरत ते भवि मुक्त गये हैं, जिन आतम हित आनो । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म को सार न जानो० ॥

॥ लला ॥

लला लिपटो ही रहे, लगो जगत् के भेक । लखो न आप स्वरूप को, लहो न शुद्ध विवेक । लहो न शुद्ध बि-वेक रीझ ते, पर आपा नहि बूझा । वस्तु प्रकाशी नाहि

विरानी, तू कर्मन सो भूझा । जिन जिन आत्म शुद्ध लखो है, पर सो नाहिं अरूझा । सूरत भिन्न जो है विषयन सो, तिन को आत्म सूझा । अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥ ववा ॥

ववा वह सगत बुरी, जामें होय कुभाव । वह संगत सेलो भली, जामें सहज सुभाव ।

जामें सहज स्वभाव भाव है, सोसेली मोहि प्यारी । तत्व द्रव्य की चर्चा तिनके, तजे कुचर्चा न्यारी । भरमभाव ते दूर रहत हैं, धर्म ध्यानके लारी । सूरत यह वांछा मेरे मन, इन मित्रन सो यारी । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी० ॥

॥ ससा ॥

ससा सज्जन वे भले, सुने सुगुरु की सीख । सदा रहें सुख ध्यान में, सही जैन की टीक । सही जैनकी टीक जिन्होंके, सो सज्जन मोहे भावें । आगम और अध्यात्म वाणी, सुने सुनावे गावें । कुकथा चार विकार जगत् की, तिन को नहीं सुहावे । सूरत वे सज्जन मोहि प्यारे, जे शिव पथ दिखावें । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म

की सारन जानी० ॥ यया ॥

यया गुटक नियार के समाभाव चित लाय। आश्रय सम्यर बन्ध ही गिरे कर्म दुख दाय। गिरे कर्म दुखदाय जाय यह समाभाव चित लावें। होय अभ्यास ताम मज्जन को, अन्तर ज्ञान जगावें। सदा मग्न ह्वै अपने पद में, रीझ आप सुख पावे। सूरत ज्ञानवन्त गुरु भाषो, सो आत्म को ध्यावे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥ शशा ॥

शशा सोहं शुद्ध है। सुगुरु सीख सुनलेत। सदा रहे संतोष में सो साधु जग हेत। सो साधु जग हेत ताहि में भी संतोष विचारे। जो बातें हैं ते संसारी तिन को नाहि निहारे। सकलप विकलप मन के जेते, इन दुश्मन को टारे। सूरत वह साधु है निश्चय शिवपुर वेग सिधारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी०॥

दरस हो केवल, सिद्धपुरी सुखराशि। आठों कर्म विषे है जिनके, आठों गुण परगामी। सूरत सिद्ध जहां सुख पावे, काल अनंते जासी। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । लला

ललालेके परम पद लखों गये निर्वाण। लोक शिखर ऊपर चढ़े लियो सिद्ध शिवथान। लियो सिद्ध शिव थान आनभव, सोई सिद्ध कहाये। दर्शन ज्ञान चरितये तीनों शिवपुरदे पहुंचाये। जो जो भाषे सोई दरसे, आप अटल ठहराये। सूरत ऐसे सिद्ध कहे गुरु जे पुराण में गाये। 'अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्मकी सार न जानी० ॥ । क्षक्षा ।

क्षक्षा लक्ष्मी सो वरी। लक्षण गुण के भेव। लहै सिद्ध गुण अष्ट जो, वढ़े सुलक्षणटेव। बढ़े सुलक्षण टेव भेव लख, सिद्धरूपको ध्यावे। अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधन सीस निवावे। जिनमत धर्म देव गुरु चारों, इनकी दृढ़ता लावें। सूरत यह परतीत धरे मनसो सम्यक् फल पावे। अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्मकीवान् न जानी० ॥ ॥ दोहा ॥

सो अक्षर पढ़तो सही करै गुरुवचन प्रतीत। देव धर्म गुरु जानके, परख गही निज रीत। बारहखडी हितको कही, गुनियनकी नहीं रीत। दोहे सब चालीस हैं, छन्द कहे पैंतीस॥

इति श्रीगुरु की बारहखडी सम्पूर्ण।

७५ सोलहकारण भावना।

॥ चौपाई ॥

आठ दोष मद आठ मलीन। छै अनायतन शठता तीन। ये पचीस मल वर्जित होय, दर्शन शुद्धि कहावै सोय॥ १ ॥ रत्नत्रय धारी मुनिराय, दर्शन ज्ञान चरित समुदाय। उनकी विनय विषय परवीन। दुतिय भावना सो अमलीन ॥२॥ शीलभार धारै समचेत। सहस्र अठारह अंगसमेत। अतिचार नही लागे जहा तृतीय भावना कहिये तहा ॥ ३ ॥ आगम कथित अर्थ अवधार। यथाशक्ति निज बुद्धि अनुसार। करै निरन्तर ज्ञान अभ्यास, चतुर्थ भावना कहिये तास ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

धर्म धर्म के फल विषे, परतै प्रीति विशेष ?

यही भावना पंचमो, लिखीं जिनागम देख ५

॥ चौपाई ॥

औषधि अभय ज्ञान आहार, महादान यह चार प्रकार। शक्ति समान सदा निर्वहै छठी भावना धारक वहै ॥ ६ ॥ अनशन आदि मुक्ति दातार, उत्तम तप बारह परकार। बल अनुसार करे जो कोय। सो सातमी भावन होय ॥ ७ ॥ यति वर्ग को कारण पाय विघ्न होत जो करे सहाय। साधुसमाधि कहावै सोय, यही भावना अष्टम होय। ८ ॥ दशविधि साधु जिनागम कहे, पथ पीड़ित रोगादिक गहे। तिनकी जो सेवा सत्कार, यही भावना नौमीं सार ॥ ९ ॥ परमपूज्य आस्न अरहन्त अतुल अनन्त, चतुष्टय वन्त ॥ तिन की स्तुति नित पूजा भाव, दशम भावना भव जल नाव १० जिनवर कथित अर्थ अवधार, रचना करे अनेक प्रकार आचारज की भक्ति विधान, एकादशम भावना जान ॥ ११ ॥ विद्या दायक विद्या लीन। गुण गरिष्ठ पाठक परवीन। तिनके चरण सदा चित रहे, बहुश्रुति भक्ति बारमी यहै ॥ १२ ॥ भगवत् भाषित अर्थ अनूप, गणधर

ग्रंथित ग्रंथ स्वरूप। तहां भक्ति धरते भगवान, प्रवच न भक्ति तेरमी जान ॥ १३ ॥ षट् आवश्यक क्रिया विधान, तिनकी कबहु करे न हान। सावधान धरते थिर चित्त, सो चौदहमी परम पवित्त ॥ १४ ॥ कर जप तप पूजा व्रत भाव प्रगट करे जिन धर्म प्रभाव। सोई मार्ग पर भावना, यह पंदरमी भावना ॥ १५ ॥ चार प्रकार संघ सो प्रीत। राखे गाय बच्छकी रीत। यही सोलहमी सब सुख दाय। प्रवचन वात्सल्य अभिधाय ॥१६॥

॥ दोहा ॥

सोलह कारण भावना, परम पुण्यकी खेत।
भिन्न भिन्न अरु सोलहो, तिर्थंकर पद देत।
बंध प्रकृति जिनमत विषे, कही एकसौ बीस।
सौ सतरह ११७ मिथ्यात्वमें, बांधत है निशदीस।
तीर्थंकर आहारदुक, तीन प्रकृति ये जान।
इनको बंध मिथ्यात्व में, कहो नहीं भगवान्।
ताते तीर्थंकर प्रकृति, तीनो समकितमाहि।
नाहिं।

॥ सोरठा ॥

पूज्यपाद मुनिराय, श्री सर्वार्थ सिद्ध से। कह्यो कथन अमन्याय, देख लीजिये बुद्धजन।

७६ णमोकार मंत्र महात्म ॥

श्री गुरु शिक्षा देत हैं सुन प्राणीरे। सुमर मंत्र नवकार सीख सुन प्राणीरे॥ लोकोत्तम मंगल सदा सुन प्राणीरे। असर न जन आधार सीख सुन प्राणीरे॥ १ ॥ प्राकृतरूप अनादि है सुन प्राणीरे। मित अक्षर पैंतीस सीख सुन प्राणीरे। पापजाय सब जापते सुन प्राणीरे। भाषो गणधर ईश सीख सुन प्राणीरे॥ २ ॥ मन पवित्रकर मन्त्र को सुन प्राणीरे। सुमरो शंका छोर सुन प्राणीरे॥ वाछतवर वावे सही सुन प्राणीरे। शीलव्रत नरनारि सीख सुन प्राणीरे॥ ३ ॥ विषधर वाघन भय करें सुन प्राणीरे। विनसें विघन अनेक सीख सुन प्राणीरे॥ व्याधि विषम व्यतर भजैं सुन प्राणीरे। विपत न व्यापे एक सीख सुन प्राणीरे॥ ४ ॥ कपिको शिखर समेद ये सुन प्राणीरे। मंत्र दियो मुनि राज सीख सुन प्राणीरे॥ होय अमर नर शिव वसो

सुन प्राणीरे। धर चौथी परयाय सीख सुन प्राणीरे ५
कहो पद्मरुचि सेठ ने सुन प्राणीरे। सुनो बैले के जीव
सीख सुन प्राणीरे॥ नरसुर के सुख भुञ्ज के सुन प्राणी
रे। भयो राव सुग्रीव सीख सुन प्राणीरे॥ ६॥ दीनो
मन्त्र सुलोचना सुन प्राणीरे। विधश्री को जोय सीख
सुन प्राणीरे॥ गंगादेवी अवतरी सुन प्राणीरे। सरप
डसी थी सोय सीख सुन प्राणीरे॥ ७॥ चारुदत्त ये व
निक ने सुन प्राणीरे। पायो कूप मंझार सीख सुन
प्राणीरे॥ परवत ऊपर छागने सुन प्राणीरे। भयो
युगल सुरसार सीख सुन प्राणीरे॥ ८॥ नाग नागनी
जलत है सुन प्राणीरे। देखो पार्श्व जिनेन्द्र सीख सुन
प्राणीरे॥ मंत्र देत तब ही भये सुन प्राणीरे। पद्माव-
ती धरणीन्द्र सीख सुन प्राणीरे॥ ९॥ चेले में हथनी
फंसी सुन प्राणीरे। खगकीनो उपकार सीख सुन प्राणीरे
भव, लेकै सीता भई सुन प्राणीर। परम सती संसार सीख
सुन प्राणीर॥ १०॥ जल मांगे सूली चढ़ो सुन प्राणीरे
चोर कपट गत प्राण सीख सुन प्राणीरे। लहो सुरग
सुख थान। सीख सुन प्राणीरे॥ ११॥ चापापुर में ग्वा-

लिया सुन प्राणीरे । पोषे मन्त्र महान सीख सुन प्राणीरे ॥ सेठ सुदर्शन अवतरो सुन प्राणीरे । पहले भव निरवाण सीखसुन प्राणीरे ॥ १३ ॥ मन्त्र महातम की कथा सुन प्राणीरे । नाम सूचना यह सीख सुन प्राणीरे ॥ श्री पुण्याश्रव ग्रन्थ मे सुन प्राणीरे । न्यारो सो सुन लेय सीख सुन प्राणीरे ॥ १३ ॥ सात व्यसन सेवत हतो सुन प्राणीरे । अधम अजना चोर सीख सुन प्राणीरे ॥ सरधा करते मन्त्र की सुन प्राणीरे । सीझी विद्या जोर सीख सुन प्राणीरे ॥ १४ ॥ जीवक सेठ समोधियो सुन प्राणीरे । पापाचारी स्वान सीख सुन प्राणीरे ॥ मन्त्र प्रतापै पाइयो सुन प्राणीरे । सुन्दर स्वर्ण विमान सीख सुन प्राणीरे ॥ १५ ॥ आगे सीझे सीझ हैं सुन प्राणीरे । अब सीझें निरधार सीख सुन प्राणीरे ॥ तिनके नाम बखानते सुन प्राणीरे । कोई न पावे पार सीख सुन प्राणीरे ॥ १६ ॥ बैठत चलते सोवते सुन प्राणीरे । आदि अन्त लों धीर सीख सुन प्राणीरे ॥ इस अपराजित मंत्र को सुन प्राणीरे । मति विसरो हो वीर सीख सुन प्राणीरे ॥ १७ ॥ सकल लोक

सब कास में सुन प्राणीरे। परमागम में सार सीख सुन प्राणीरे॥ भूधर कवहुं म भूलिये सुन प्राणीरे। मन्त्र राज मन धार सीख सुन प्राणीरे॥ १८॥ इति

[७७] शील महात्म॥

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करुना। भवि वृन्द को अब दीजिये इस शील का शरना॥ टेक॥ शील की धारा में जो स्नान करे है। मल कर्म को सो धोय के शिवनार वरे है॥ अलराज सो वेताल व्याल काल हरे है। उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरे है॥ १॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग आचारा। इस शील से सब धर्म के मुंह का है उजारा॥ शिवपंथ ग्रन्थ मंथ के निर्ग्रंथ निकारा। विन शील कौन कर सके संसार से पारा॥ २॥ इस शीलसे निर्वान नगर की है अवादी। त्रेषठ शलाका कौन ये ही शील सवादी॥ सब पूज्य के पदवी में है परधान ये गादी॥ अठरा, सहस्र भेद भने वंद अवादी॥ ३॥ इस शीलसे सीताका हुआ

पानी। नृप ताप टरा शील से रानी दिया पानी। गंगा मे ग्राह सों बची इस शील से रानी ॥ ४ ॥ इस शील ही से सांप सुमन माल हुआ है। दुख अजना का शील से उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धु में श्रीपालको आधार हुआ है वप्राका परम शील ही से पार हुआ है ॥५॥ द्रोपदी का हुआ शील से अम्बर का अपारा। धातु दीप कृष्ण ने सब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सतीकी व्यथा शील ने टारा। इस शील से ही शक्ति विशल्या ने निकारा ॥६॥ वह कोट शिला शील से लक्ष्मण ने उठाई। इस से ही नाग नथा कृष्ण कन्हाई ॥ इस शीलनेश्रीपाल जी की कोढ मिटाई। अरु रैन मंजूसा को लिया शीले बचाई ॥ ७ ॥ इस शील से रनपाल कुंअरकी कटी वेरी। इस शील से विष सेठ के नन्दन की निवेरी ॥ शूली से सिंह पीठ हुआ सिंह ही सेरी। इस शील से करनाल सुमनमाल गलेरी ॥८॥ सामन्त भद्र जी ने यही शील सम्हारा। शिव पिंडते जिन चन्द का प्रति बिम्ब निकारा ॥ मुनि मानतुंग जीने यही शील सुधारा। तब ज्ञानके

चक्रश्वरी सब बात सम्हारा ॥९॥ अकलकदेव जी ने इसी शील सेभाई। तारा का हरा मान विजय बौद्ध सेपाई॥ गुरू कुन्दकुन्द जीनेइसी शील से जाई। गिर नार पै पाषाण की देवी को बुलाई ॥१०॥ इत्यादि इसी शील की महिमा है घनेरी। विस्तार के कहने मे बड़ी होयगी देरी। पल एक में सब कष्ट को यह नष्ट करेरी। इस हीसेमिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सबेरी ॥११॥ विन शील खता खातेहैं सब कांळके ढीले। इस शील विना तन्त्र,मन्त्र,जंत्र, हीकीले॥ सब देव करें सेव इसी शील के होले। इस शील ही से चाहे तो निर्वान पदीले ॥१२॥ सम्यकत्त्व सहित शील को पाले हैं जो अन्दर सो शील धर्महोय है कल्याण का मन्दिर॥ इस से हुये भवपार हैं कुलकौल और बन्दर। इस शील की महि मा न सके भाष पुरन्दर ॥१३॥ जिस शील के कहने मे थका सहस बदन है। जिस शील से भय पाय भगा कूर मदन है॥ सो शील ही भवि वृन्द को कल्याण प्रदनहै। दश पैंडही इस पैंडसे निर्वान सदनहै ॥१४॥

७८ छहढाला ॥

॥ सोरठा छन्द ॥

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता ।

शिव सरूप शिवकार, नमों त्रियोग सम्हारके ॥१॥

॥ चौपाई छन्द १५ मात्रा ॥

जो त्रिभुवन में जीव अनन्त । सुख चाहैं दुःख से भयवन्त ॥ याते दुःखहारी सुखकार । कहैं शीख गुरु करुणा धार ॥ २ ॥ ताहि सुनो भवि मन थिरआन । जो चाहो अपना कल्यान । मोह महामद पियो अनादि । भूल आपं को भ्रमते वादि ॥ ३ ॥ तासु भ्रमण की है बहु कथा । पै कुछ कहूं कही मुनि यथा ॥ काल अनन्त निगोद मझार । बीतो एकेंद्रीं तन धार ॥ ४ ॥ एक स्वास में अठदश वार । जन्मो मरो भरो दुःखभार ॥ निकस भूमि जल पावक भयो । पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ॥ ५ ॥ दुर्लभ लहिये चिन्ता मणी । त्यों पर्याय लई त्रस तनी ॥ लट पपीलि अलि आदि शरीर । धर धर मरो सही बहुपीर ॥६॥ कबहूं पंचेन्द्रिय पशु भयो ।

मन विन निपट अज्ञानी थयो ॥ सिंहादिक सेनी हो क्रूर । निवल पशू हतखाये भूर ॥७॥ कबहूं आप भयो वलहीन । सबलन कर खायो अतिदीन ॥ छेदन भेदन भूख पिपास । भार वहन हिमतापन त्रास ॥ ८ ॥ वध वन्धन आदिक दुःख घने । कोटि जीभ से जांय न भने ॥ अति सक्लेश भाव से मरो । घोर शुभ्रसागर में परो ॥९॥ तहां भूमि परसत दु:ख इसो । विच्छू सहस्र डसे ना तिसो ॥ तहां राधि श्रोणित वाहिनी । कृमि कुल कलित देहदाहनी ॥ १० ॥ सेम्हल तरु युत दल असिपत्र । असि ज्यों देह विहारैं तत्र ॥ मेरु समान लोह गलजाय । ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ ११ ॥ तिल तिल करें देह के खण्ड । असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड ॥ सिंधु नीर से प्यास न जाय । तोपन एक न बूंद लहाय ॥१२॥ तीन लोक का नाज जुखाय । मिटे न भूख कणा न लहाय ॥ ये दु:ख बहु सागर लौ सहै । कर्म योग से नर गति लहै ॥ १३ ॥ जननी उदर वसो नवमास । अङ्ग सकुचते पायो त्रास ॥ निकसत ये दुःख पाये घोर । तिनका कहत न आवे छोर ॥ १४॥ बालकपन में ज्ञान

न लहो। तरुण समय तरुणी रत रहो॥ अर्द्ध मृतक सम बूढ़ापनो। कैसे रूप लखे आपनो॥ १५॥ कभी अकाम निर्जरा करे। भवनत्रक में सुर तन धरे॥ विषय चाह दावानल दहो। भरत विलाप करत दुःख सहो॥ १६॥ जो विमान वासी हू थाय। सम्यग्दर्शन विन दुःख पाय॥ तहं से चय थावर तन धरे। यों परिवर्तन पूरो करे॥ १७॥

॥ द्वितीय ढाल पद्धड़ी छन्द १६ मात्रा॥

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञान चर्ण। वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण॥ यासे इन को तजिये सुजान। सुनि तिन संक्षेप कहूं बखान॥ १॥ जीवादि प्रयोजन भूत तत्व। श्रद्धे तिन माहि विपर्ययत्व॥ चेतन को है उपयोग रूप। बिन मूर्ति चिन्मूर्ति अनूप॥ २॥ पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल। इनसे न्यारी है जीव चाल॥ ताको न जान विपरीति मान। कर करे देह में निज पिछान॥ ३॥ मै सुखी दुःखी मैं रक राव। मेरो धन गृह गोधन प्रभाव॥ मेरे सुत त्रिय मैं सबल दीन। वेरूप सुभग मूर्ख प्रवीण॥ ४॥ तन उपजत अपनी उपज

जान। तन नशत आपको नाशमान॥ रागादिक ये दुःखं प्रगट देन। तिनही को सेवत गिनत चेन॥ ५॥ शुभ अशुभ बन्धके फल मझार। रति अरति करी निजपद विसार॥ आत्महित हेतु विराग ज्ञान। ते लखे आपको कष्ट दान॥ ६॥ रोकी न चाह निज शक्ति खोय। शिवरूप निराकुलता न जोय॥ याही प्रतीति युत कुछक ज्ञान। सो दु.ख दाई अज्ञान जान॥ ७॥ इन युत विषयों की जो प्रवृत्ति। ताको जानो मिथ्या चरित्र॥ यों मिथ्यात्वादि निसर्ग येह। अबजो ग्रहीत सुनिये सुतेह॥ ८॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव। पोषें चिर दर्शन मोह एव॥ अन्तर रागादिक धरें जेह। वाहर धन अंबर से सनेह॥ ९॥ धारें कुलिग लहि महत भाव। ते कुगुरु जन्म जल उपलनाव॥ जो राग-द्वेष मलकर मलीन। वनिता गदादियुत चिन्ह चीन्ह॥ १०॥ ते है कुदेव तिनकी जो सेव। शठ करत न तिन भव भ्रमण छेव॥ रागादि भाव हिंसा समेत दर्वित त्रसथावर मरण खेत॥ ११॥ जो क्रिया तिन्हें जानो कुधर्म। तिन श्रद्धहि जीव लहे अशर्म॥ याको

ग्रहीत्व मिथ्यात्व जान । अब सुन ग्रहीत जो है अ-
ज्ञान ॥ १२ ॥ एकान्त वाद दूषित समस्त । विषयादिक
पोषक अप्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतिका अभ्यास ।
सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥ आत्म अनात्मके ज्ञान
हीन । जो जो करनी तन करन छीण ॥ १४ ॥ ते सब
मिथ्या चारित्र त्याग । अब आत्मके हित पन्थ लाग॥
जगजाल भ्रमण को देय त्याग । अब दौलत निज आ-
त्मसुपाग ॥ १५ ॥

तृतीय ढाल नरेन्द्रछन्द २८ मात्रा

आत्म का हित है सुख सो सुख अकुलता बिन क-
हिये । अकुलिता शिव माहिं न यासे शिव मग लागो
चहिये ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण शिव मग सो दुविध
विचारो । जो सत्यार्थरूप सो निश्चय कारण सो व्यव
हारो १ परद्रव्योंसे भिन्न आप में रुचि सम्यक्त्व भला
है । आप रूपको जानपनो सो सम्यग्ज्ञान कला है ॥
आपरूपमे लीन रहे थिर सम्यक् चारित्र सोई । अब
व्यवहार मोक्षमग सुनिये हेतु नियत को होई ॥ २ ॥
जीव अजीव तत्व अरु आश्रव बन्धरु संवर जानो। नि-
र्जर मोक्ष कहे जिन तिन को ज्यों का त्यों श्रद्धाणो ॥

है सोई समकित व्यवहारी अब इन रूप बखानो। तिन को सुनि सामान्य विशेषः दृढ़ प्रतीति उर आनो॥३॥ बहिरातम अन्तर आतम परमातम जीव त्रिधा है। देह जीव का एक गिने वहिरातम तत्त्व मुधा है॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधके अन्तर आतमज्ञानी॥ द्विविध संग बिन शुध उपयोगी मुनि उत्तम निज ध्यानी॥४॥ मध्यम अन्तर आतम हैं जो देशव्रती आगारी। जघन्य अव्रत सम्यग्दृष्टी तीनो शिव मगचारी॥ सकल निकल परमातम दोविधि तिन में घाति निवारी। श्रीअर्हन्त सकल परमातम लोकालोक निहारी॥ ५॥ ज्ञान शरीरी त्रिविधि कर्म फल वर्जित सिद्ध महन्ता। सोहैं निकल अमल परमातम भोगे शर्म अनन्ता॥ वहिरातमता हेय जान तज अन्तरातम हूजे। परमातमको ध्याय निरन्तर जो नित आनन्द पूजे॥६॥ चेतनता बिनसो अजीव है पञ्च भेद ताके हैं॥ पुद्गल पंचबरण रसगन्ध दो फरस बसु जाके हैं॥ जिय पुद्गल को चलन सहाई धर्म द्रव्य अनरूपी। तिष्ठत होइ अधर्म सहाई जिन बिन मूर्ति निरूपी॥ ७॥ सकल द्रव्य को वास जास में सो आ-

काश पिछानो। नियत वर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमाणो॥ यों अजीव अब आस्रव सुनिये मन बच काय त्रियोगा॥ मिथ्या अव्रत अरु कषाय परमाद सहित उपयोगा॥ ८॥ ये ही आत्म के दुःख कारण या से इन को तजिये॥ जीव प्रदेश बंधे विधि से सो वन्ध कभी ना सजिये॥ शम दम से जो कर्म न आवें सो संवर आदरिये। तपबल विधि सो करत निर्जरा ताहि सदा आचरिये॥९॥ सकल कर्मसे रहित अवस्था सो शिव थिर सुखकारी। इस विधि जो श्रद्धा तत्वोंकी सो समकित व्यवहारी॥ देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह विन धर्म दयायुत सारो। यहूमान समकित को कारण अष्ट अङ्ग युत धारो॥ १०॥ वसु मद टार त्रिटार मूढ़ता षट अनायतन त्यागो। शंकादिक वसु दोष बिना संवेगादिक चित पागो॥ अष्ट अङ्ग अरु दोष पचीसी अब सक्षेपे कहिये। विन जाने से दोष गुणों को कैसे तजिये गहिये॥ ११॥ जिन वच में शंका न धार वृषभव सुख वाछा भाने। मुनि तन देख मलिन न घिणावे तत्व-कुतत्व पिछाने॥ निज गुण अरुपर औगुण ढाके वा

निज धर्म वढ़ावे। कामादिक कर वृषते डिगते निज पर को सुदृढ़ावे ॥ १२ ॥ धर्मी से गौ वच्छ प्रीति समकर जिन धर्म दिपावे। इन गुण से विपरीति दोष बसु तिनको सतत खिपावे ॥ पिता भूप वा मातुलनृप जो होइ न तो मद ठाने। मदन रूप को मदन ज्ञानको धनबल को मद भाने ॥ १३ ॥ तप को मद न मदन प्रभुता को करे न सो निज जाने। मत धारो ये दोष बसुः विधि समकित को मलठाने ॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की नहीं प्रशंस उचरे है। जिन मुनि जिन श्रुति विन कुगुरादिक तिन्हें न नवन करे है ॥ १४ ॥ दोष रहित गुण सहित सुधी जो सम्यग्दर्श सजे हैं। चारित्र मोहवश लेश न संयम पै सुरनाथ जजे हैं। गेही परिग्रह मे न रचे ज्यों जल में भिन्न कमल है। नगर नारि को प्यार यथा कादो में हेम अमल है ॥ १५ ॥ प्रथम

मोक्ष महल की प्रथम सिढ़ी है या बिन ज्ञान चरित्रा। सम्यकता न लहै सो दर्शन धारो भव्य पवित्रा ॥ दौल समझ सुन चेत सयाने काल वृथा मत खावे। यह नर भव फिर मिलन कठिन है जो सम्यक्तत्व न होवे ॥१७॥

चतुर्थ ढाल (दोहा)

सम्यक् श्रद्धा धार पुन, सेवो सम्यग्ज्ञान।
स्व पर अर्थ बहु धर्म युत, जो प्रगटावनभान ॥१॥

॥ रोलाछन्द २४ मात्रा ॥

सम्यक् साथे ज्ञान होय पै भिन्ना राधो। लक्षण श्रद्धा जान दुहू से भेद अवाधो ॥ सम्यक कारण जान ज्ञान कार्य है सोई। युगपत होते भी प्रकाश दीपक से होई ॥ २ ॥ तासु भेद प्रत्यक्ष परोक्ष दोय तिन माहीं। मति श्रुति दोय परोक्ष अक्ष मन से उपजाही ॥ अवधि ज्ञान मन पर्यय दो है देश प्रत्यक्षा। द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये जाने जियस्वक्षा ॥ २ ॥ सकल द्रव्यके गुण अनन्त पर्याय अनन्ता। जाने एकै काल प्रगट केवल भगवन्ता॥ ज्ञान समान न आन जगति में सुख को कारण। यह परमामृत जन्म जरा मृत्यु रोग निवारण ॥ ३ ॥ कोटि

जन्मतप तपै ज्ञान विन कर्म न झरते । ज्ञानी के क्षण में त्रिगुप्ति से सहजहि टरते ॥ मुनि व्रतधार अनन्तवार ग्रीवक उपजायो । पै निज आतम ज्ञान बिना सुख लेश न पायो ॥ ४ ॥ ताते जिनवर कथित तत्व अभ्यास करीजे । संशय विभ्रम मोह त्याग आपा लख लीजे ॥ यह मानुष पर्याय सुकुल सुनवो जिन वाणी । यह विधि गेयन मिले सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥ ५ ॥ धन समाज गजवाजि राजतो काज न आवे । ज्ञान आपको रूप भये फिर अचल रहावे । तास ज्ञान को कारण स्वपर विवेक वखानो । कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनो ॥ ६ ॥ जो पूर्व शिव गये जात अब आगे जैहें । सो सब महिमा ज्ञान तनी मुनिनाथ कहैं है ॥ विषय चाह दवदाह जगत जन अरण्य दझावे । तास उपाय न आन ज्ञान घन धान बुझावे ॥ ७ ॥ पुण्य पाप फल मांहि हर्षि विलखो मत भाई । यह पुद्गल पर्याय उपजि विनसे फिर थाई ॥ लाख वात की वात यही निश्चल उर लावो । छांड़े सकल जगधन्ध फन्द नित आतमध्यावो ॥ ८ ॥ सम्यक् ज्ञानी होइ

बहुर दृढ़ चारित्र लीजे। एक देश अरु सर्वदेश तसु भेद कहीजे ॥ त्रस हिंसाको त्याग वृथा थावरन स-हारे। परबधकार कठोर निंद्यनहिं बयन उचारे ॥९॥ जल मृतिका बिन और नहीं कुछ गहै अदत्ता। निज बनिता बिन और नारि से रहै विरक्ता ॥ अपनी शक्ति विचार परिग्रह थोड़ा राखे। दश दिश गमन प्रमाण ठान तसु सीमन नाखे ॥ १० ॥ ताहू में फिर ग्राम गली गृहबाग बाजारा॥ गमना गमन प्रमाण ठान अन्य सकल निवारा। काहू की धनहानि किसी जय हारन चिते ॥ देय न सो उपदेश होय अघबाणज कीते ॥ ११ ॥ कर प्रमाद जलभूमि वृथा थावर नवि राधे। असि धनुहल हिंसोपकरण नहीं देय शलाधे ॥ राग द्वेष कर्तार कथा कबहूं न सुनीजे। और हू अनर्थ दंड हेतु अघ तिनहिं न कीजे ॥ १२ ॥ धर उर सम-ता भाव सदा सामायिक करिये। परब चतुष्टय मांहि पाप तज प्रोषध धरिये ॥ भोग और उपभोग नेमकर ममत्व निवारे। मुनि को भोजन देय फर निज करे अहारे ॥ १३ ॥

वारह व्रत के अतीचार पन पन न लगावे। मरण समय संन्यास धार तसु दोष नशावे॥ यों श्रावक व्रतपाल स्वर्ग सोलम उपजावे। तहं सेचय नर जन्म पाय मुनि ह्वो शिव पावें॥ १४॥

पंचम ढाल (मनहरण छन्द)

मुनि सकलव्रती बड़भागी। भव भोगनसे वैरागी। वैराग्य उपावन माई। चिंते अनुप्रेक्षा भाई॥१॥ तिन चिंतत शम सुख जागे। जिमि ज्वलन पवन के लागे॥ यौवन धन गोधन नारी। हैं जग जन आज्ञाकारी॥२॥ इन्द्रिय सुभोग क्षण थाई। सुर धनु चपला चपलाई॥ सुर असुर खगादिक जेते। मृग ज्यों हरि काल दलेते॥ ३॥ मणि मन्त्र यन्त्र बहु होई। मरते न बचावे कोई॥ चहुंगति दुःख जीव भरे है। परिवर्तन पंच करे हैं॥४॥ सब विधि संसार असारा। तामें सुख नाहिं लगारा। शुभ अशुभ कर्म फल जेते। भोगे जिय एक ही तेते॥५॥ सुत दारा होय न सीरी। स्वार्थ के हैं सब भीरी॥ जल पय ज्यों जियतन मेला। पै भिन्न २ नहीं भेला॥६॥ जो प्रगट जुदे धनधामा। क्यों ह्वो इकमिल

सुतरास्ता ॥ पल रुधिर राधमलथैली । कीकर वसादिसे मैली ॥७॥ नवद्वार वहैं घृणकारी। इस देह करी किम यारी ॥ जो योगनकी चलताई। तातै होइ आस्रवभाई ॥ ८॥ आस्रव दुखकार घनेरे। बुधिवन्तहि तिनहि निवेरे ॥ जिन पुण्य पाप नहीं कीना। आतम अनुभव चित दीना ॥ ९ ॥ तिनही विधि आवत रोके। संवर लहि सुख अवलोके ॥ निज काल पाय विधि झरनो। तातै निज कार्य न सरनो ॥ १० ॥ तपकर जो कर्म नशावे। सोई शिव सुखदर पावे ॥ किनहू न करो न धरेको। षट द्रव्य मई न धरेको ॥ ११॥ सो लोकमाहिं विन समता। दुःख सहै जीव नित भ्रमता ॥ अन्तिम ग्रींवकलोंकी हद। पायो अनन्त विरियापद ॥ १२ ॥ पर सम्यग्ज्ञान न लाधो। दुर्लभ निज में मुनि साधो ये भाव मोहसे न्यारे। दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ॥१३॥ सो धर्म जबे जियधारे। तबही सुख अचल निहारे ॥ सो धर्मसुमिन कर धारिये। तिनकी करतूति उचरिये ॥ १४ ॥ ताको सुनिये भविप्राणी। अपनी अनुभूति पिछानी ॥ जबही यों आत्मजाने। तबही निज शिव सुखमाने ॥ १५ ॥

षष्ठमढाल (हरिगीता छन्द)

षटकाय जीवन हनन से भव विधि द्रव्य हिंसाटरी। रागादि भाव निवारते हिंसा जु भाव न अवतारी ॥ जिनके न लेश मृषा न जल तृणहू बिना दीयो गहैं। अठ दश सहस्र विधि शीलधर चिर ब्रह्म मे नितरत रहै ॥ १ ॥ अन्तर्चतुर्दश भेद बाहर संग दशधातें टलें। प्रमाद तज चउकर महीलख समित ईर्यासे चलें ॥ जग सुहित कर सब अहितहर श्रुत सुखद सब संशय हरै। भ्रमरोग हर जिनके वचन मुखचन्द्र से अमृत झरै ॥२॥ छालीस दोष बिनाश कुल श्रावक तने घर अशन को। ले तप बढावन हेत नहि तन पोषते तज रसन को। शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखके गहै लखके धरें। निर्जंतु थान बिलोक तन मल मूत्र श्लेष्मा परिहरें ॥ ३ ॥ सम्यक् प्रकार निरोध मन बच काय आतम ध्यावते। तिन सुथिर मुद्रा देख मृगगण उपलखाज खुजावते ॥ रस रूप गंध तथा परस अरु शब्द अशुभ सुहावने। तिन में न राग विरोध पंचेन्द्रिय जयनपद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारें स्तुति उचारें वन्दना जिन देव को। नित करें श्रुति रति करें प्रतिक्रम तजें तन अह मेवको । जिनके न्हौन न दन्त धोवन लेश अम्बर

आवरण । भूमाहि पिछली रेनि में कुछ शयन एकासन करन ॥ ५ ॥ इक वार लेन आहार दिनमें खड़े लघु निज पान में । कच लुञ्च करत न डरत परिषह से लगे निजध्यान में ॥ अरि मित्र महल मसान कञ्चन काच निन्दन थुतिकरन । अर्घोउतारण असि प्रसारण में सदा समता धरन ॥ ६ ॥ तप तपें द्वादश धरें वृष दश रत्न त्रय सेवें सदा । मुनि साथ में वा एक विचरे चहैं ना भव सुख कदा ॥ यो है सकल संयम चरित सुन यह स्वरूपा चरण अब । जिस होते प्रगटे आपनी निधि मिटे परकी प्रवृति सब ॥ ७ ॥ जिन परम पैनी सुबुधि छेनी डार अन्तर भेदिया । वरणादि अरु रागादि से निज भावको न्यारा किया । निजमाहिं निज के हेत निजकर आपको आपे गहो । गुण गुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मझार कुछ भेद न रहो ॥ ८ ॥ जहां ध्यान ध्याता ध्येय को न विकल्प वच भेद न जहां । चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता चेतना किरिया तहां ॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुध उपयोग की निश्चलदशा । प्रगटी जहां दृग ज्ञान व्रत ये तीन धा एकै लशा ॥ ९ ॥ प्रमाण नयनि-

क्षेप को न उद्योत अनुभव में दिपे। दृगज्ञान सुख सुख बल यमसदा नहिं अन्यभाव जु मोविषें। मैं साध्य साधक मैं अवाधक कर्म अरु तसुफलनते। चित पिंड चंड अखंड सुगुण करंड च्युत पुन कलनते ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निज में थिर भये तिन अकथ जो आनन्द लहो। सोई इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमेंद्र को नाही कहो ॥ तब ही शुक्ल ध्यानाग्नि कर चउघाति विधि काननदहो। सब लखो केवल ज्ञानकर भविलोक को शिवमग कहो ॥ ११ ॥ पुन: घाति शेष अघाति विधि छणमाहिं अष्टम भूवसे। वसुकर्म विनश सुगुण वसु सम्यक्त्व आदिक सब लसे ॥ ससार पार अपार पारावार तर तीरे गये। अविकार अकल अरूप शुध चितरूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥ निज माँहि लोक अलोक गुण पर्याय प्रतिबिंवित थये। रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परणये ॥ धन्य धन्य हैं वे जीव नर भव पाय यह कार्य किया। तिनही अनादी भ्रमण पंच प्रकार तज वर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यों बड़भाग रत्नत्रय धरै। अरु धरेंगे सो शिवलहे तिन सुयश जल जग मलहरे ॥ इमि जान साहस ठान आलस हान तज

शिख आदरो। जबलों न रोग जरा गहै तबलों भक्ति निज हित करो ॥ १४ ॥ यह राग आग दहै सदा यासे समामृत पीजिये। चिरभजे विषय कषाय अब ये त्याग निजपद लीजिये ॥ क्या रचो पर पद में न तेरो पद यहै क्यों दुख सहै। अब दौल होउ सुखी स्वपद रच दावमत चूको यहै ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥

एक नव वसुइक वर्ष की, तीज शुक्ल वैशाख। कह्यो तत्व उपदेश यह लख बुधजन की शाख ॥ १ ॥ लघुधी तथा प्रमादसे, अर्थ शब्द की भूल ॥ सुधी सुधार पढ़ो सदा, ज्यो पावो भव कूल ॥ २ ॥ श्रीमत्पण्डित दौलत राम ने वैशाख शुक्ल तीज सं० १८९१ में रचा।

इति छहढाला समाप्तम् ॥

७९ अथ राजुल पचीसी ॥

प्रथम ही वन्दों यादव राय। पुन शारदा मनावहू वल जीव वे ॥ वन्दों जी अपने गुरु के पाय। राज मती गुण गावहू वल जीव वे ॥ गाऊं मंगल राजुल पचीसी नेम जब व्याहन चढ़े। देख पशुअन दया उप- जी छोड़ सब वन को कढ़े ॥ गिरि नार गिरि परजाय

के प्रभु जैन दिक्षा आदरी । करजोड़ के राजुल तबै यह बाप से बिनती करी ॥ १ ॥ बावे जी मुझे गिरनारि पठाव । मैं मुख देखों नाथ का बल जीवबे ॥ बावेजी मुझे उमाहा चाव । अपने पियके साथ का बल जीवबे ॥ हूवा उमाहा साथ का संसार सकल असार है । प्रिय पुत्र भाई बहिन भाई मोह का जञ्जार है ॥ यह जान सकल अनित्य बावे यथा पानी हाथ का । क्षण एक में खिर जायगा हूवा उमाहा साथ का ॥ २ ॥ बावे जी मेरे शरण न कोई कासे आलो भाषिये बलि जीवबे ॥ बावे जी जबै मरण दिन होय । ता दिन कोई न राखि है बलि जीव बे ॥ कोई न राखै मरण काले आय जब यम घेर है । इन्द्र चन्द्र घनेन्द्र चक्री सबै बैठेही रहै ॥ यो जान सकल अशरण बावे क्यों न आपा ध्याइये । या जगत में कोई शरण नाही बेग मुक्ति पठाइये ॥३॥ बावे जी यह ससार असार । ताते रहिये मोन में बल जीव बे ॥ चहुं गति दुःख अपार । लख चौरासी योनि में बल जीब बे ॥ लख चौरासी योनि बावे मैं बहुत दुःख पाइया । राग द्वेष बियोग भारी जरा मरण सताइया ॥ संसार दुःख भंडार देखा क्यों न मन समझाइये ।

तू वेग मुझे पठाव बावे मिलों अपने साइयें ॥ ४ ॥ बावे जी मेरे सग न कोइ। फिरत अकेली मैं डरों बल जीवव। बावे जी जब मुझे दुर्गति होय। दुःख अकेली मैं भरों वल जीववे। मै भरूं दुःख अकेली भव वने एक सम जग जानिये। देव नर थावर विहंगम एक एक प्रमाणिये ॥ नहीं भरों दुःख अकेली अब मैं देख जगत डराइये। बावे पठाव उतावली मैं मिलों अपने सांइये ॥ ५ ॥ बावे जी पुद्गल मेरा नाहिं इस मुझे अन्तरअति घना वल जीवव। बावेजी देखा इस घट माहिं। मैं चेतन यह जड़ बना बल जीववे ॥ यह बना जड़ चेतन्य मैं अब कहा या से प्रीति है। जीव पुद्गल एक माने यह कहां की रीति है। मैं रहों यासे भिन्न जड़ लख ज्यो जल बीच कमोदनी। तू वेग मुझे पठाव बावे आन अब ऐसी बनी ॥ ६ ॥ बावे जी हड्ड पिंजर यह देह कृमिकुल की यह कोथरी बल जीबवे। बावेजी ता से कैसा नेह। अशुचि अपावन थोथरी बल जीबवे ॥ अशुचि अपावन अति घिनावन कहा यासे नेह है। क्या देख यामें रमे निश दिन यह वड़ा सन्देह है ॥

यह मूत्र पीव पुरीष पूरित कहा या में बास है। तू वेग मुझे पठाव बावे पिय मिलन की आस है॥ ७॥ बावे जी आस्रव तबही होई। जब आपा नहीं जानिये बल जीववे॥ बावे जी बस्तु बिरानी कोइ। सो अपनी कर मानिये बल जीववे॥ वस्तुहि बिरानी लखे अपनी क्या बहुल तृष्णा भई। क्यों राग द्वेष वियोग भारी बुद्धि यह तेरी गई। कोई जानके जो होइ रागी ताहि क्या समझाइये। आस्रव ते सब छोड़ बावे वेग मुझे पठाइये॥ ८॥ बावे जी सम्बर मनहि बिचार। वस्तु आपनी मैं लखी बल जीववे॥ वावे जी अपने चितहि सम्हार। बस्तु विरानी मैं तजी बल जीव वे॥ मैं तजी बस्तु बिरानी बावं राग द्वेष बिड़ारियो। पंच इन्द्रिय मनहिं जीतों आठ मदहि निवारियो॥ मैं आप पर को समझ देखा मुझ क्या समझाइये। सम्बर सम्हार विचार बावे वेग मुझे पठाइये॥९॥ बावजी निर्जरा तबही होइ। जब इन इन्द्रिन दण्डिये बल जीववे॥ वाव जी अपने तन मन ओइ। पंच महाव्रत मडिये बल जीववे॥ पंचमहाव्रत मडि बावे पंच इन्द्रिन बश करो। सब सप्ततत्व विचार बावे नव पदार्थ हिये धरो॥ जब लहै

दर्शन ज्ञान चारित्र और से क्या काज है। बावे पठाव उतावली अब जहां पिय जिन राज है ॥१०॥ बावेजी तीनों लोक अभंग। पुरुषाकार सुजानिये बल जीव वे ॥ बावे जी चौदह राजू उतंग ऊचा करके मानिये बल जीव वे॥ ऊंचा करके मान बावे पवन बलकर घेर है। तीन से तेतालिस राजू घनाकार सुफेर है॥ यह आदि अन्त सुमध्य बावे जैसे का तैसा रहै । तू बेग मुझे पठाव बावे जोड़ कर राजुल कहै ॥ ११ ॥ बावे जी दुर्लभ मानुष जोड़ । दुर्लभ श्रावक धर्म है बल जीव वे ॥ बावे जी दुर्लभ नर भव होइ। दुर्लभ सनकित धर्म है बल जीव वे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र बड़े दुर्लभ पाइये । सन्यास सेती मरण पावे और मन नहीं आणिये । तू बेग मुझहि पठाव बावे कहा मेरा मानिये ॥ १२ ॥ बावे जी कीजे धर्म विचार । धर्म जगत मे सार है बल जीव वे ॥ बावे जी धर्म उतारे पार । धर्म दया चित रखना बलजीव वे ॥ चित राख बावे धर्म दश विधि और मन नहीं ल्याइये । इक धर्म के सुप्रसाद बावे मुक्ति कन्त कहलाइये ॥ यह जान बावे धर्म कीजे द्वादश भावना भाइये । मेरे पिया के संग बावे मुझे शिवपुर जाइये ॥ १३ ॥ बेटीरी तू क्यों होइ

उदास । अब मैं विप्र पठाय स्यौं बल जीव वे ॥ बेटी जी बैठ हमारे पास । अब उत्तम वर लायस्यों बलजीव वे ॥ अब उत्तम वर ढूंढ़ लाऊ कला पूर्ण निर्मला । रूप सुन्दर गुणहि आगर जाति कुल का अति भला । तू देख तो क्या होइ बेटी और मन नहीं आनिये । रति कन्त सा वर ढूढ़ लाऊं तो पिता मुझे मानिये ॥१४॥ बेटीरी ढूढ़ो देश विदेश ढूंढ़ी पट्टन गांव में बल जीव वे ॥ बेटीरी ढूंढ़ो सकल नरेश देश दिशान्तर ठांव में बल जीव वे ॥ द्वीप दिशान्तर ढूंढ़ों बेटी राज कुंवर बर ल्यायस्यो । विद्या निधान समान सुरपति तिसे तुझे परनायस्यों ॥ मैं करूं मंगलाचार बेटी फेर तेरा अब नया । सतोष मन में राख बेटी वह गया तो क्या भया ॥१५ बाब जी क्यों मुझे गालियें देहि । मेरे तो पिय एक है बल जीव वे ॥ बाबे जी मनका तजो स-न्देह । और तो नर तुस टेक है वल जीव वे ॥ और नर तुस टेक बावे यह नीके कर जानियों । ज्यो सती ब्राह्मी सुन्दरी अब त्यों पिता मुझे मानियों । तुम मुझे क्या समझावो बावे और मन का आखता । उग्रसेन क्या तू भया दिवाला गालियां मुझे भाषता ॥ १६ ॥

बावे जी मेरा तो पिय सोइ । तिउकी मैं भी कहाइया वल जीव वे ॥ बावे जी जो युग कलियुग होइ । तऊ न दूजो साइयां वल जीव वे ॥ दूजा न मेरे साइयां अब क्या अकल तेरी गई । इसमें बुरा क्या हुआ मेरा गिरि चढ़े तो भली भई ॥ है नेह मेरा नेम जी से कहो अब कैसे रहों । तू गालियां मत देहि बावं बात मैं साची कहों ॥ १७ ॥ वेटीरी मैं क्या राखों तोहि । ते इतना मुझे भाषियों वल जीव वे ॥ वेटीरी अब सुधि नाहीं मोहि । लाज सुकुल की राखियो वल जीव वे ॥ लाज सुकुल की राख वेटी कहा सोई कीजियो। स्याही न लागे सेत को यदुवंश को यश दीजियो ॥ तप कर उन्हाले शिखर वर्षा तरु तले दृढ धारियो । हेम ऋतु में नीर तीरे कर्म अपने जारियो ॥ १८ ॥ सुन राजुल अब जाय । आज्ञा मांगे मायसे वल जीववे ॥ मैयारी तू मुझे वेग पठाय अब मैं पिय संग जाय स्यों वल जीव वे ॥ मैया पठाव उतावली मोहि जहां मेरा पीव है । और कुछ न सुहाय मैया यह बसी मो जीव है ॥ नेह मेरा नेम जीसे कहो कैसे तोढ़िहों । चारित्र धर

दृढ़ पाल संयम वहुत दिनको ओढ़िहों ॥१९॥ बेटीरी सयम कैसा होय । तू क्या जाने वावरी वलजीव वे ॥ बेटोरी संयम खेल न कोइ । जाको तुम को चावरी वल जीववे ॥ तुझे चाव है चारित्रका आसान कर मत जानियो । सयम खांड़ेकी धार वेटी कहा मेरा मानियो ॥ तू बैठ बेटी आपने घर यही तेरा योग है। शील सयम तहां तेरा जहां परिजन लोग है ॥२०॥ मैयारी यह घर मेरा नाहि कहा घर मेरा सग है बल जीववे॥ मैयारी इन सब लोगों माहि कोई न मेरा अग है बल जीववे। कोई न मेरा अ ग मैया मेरा परियन और है। क्षमा माता पिता धैर्य सत्य पिय शिर मौर है॥ भाई विवेक सुबहिन करुणा सुमति संग सहेलियां। कुटम्ब एसा संग मेरे क्यों तू कहति अकेलियां ॥ २१ ॥ मैयारी तू मेरा लुंच कराउ अब वैनी नही सोहती वल जीवव। मैयारी वे शृ गार वनाउ जासे पियमन मोह ही बल जीव वे ॥ शृ गार षोड़श भाव कारण द्वादशतप आभूषणा। अष्ट विधि को देहुं आहुति होहु जो निर्दूषणा॥ मै लेउ भांवरि जाय पिय सग गहूं दिक्षा पीय की। अब और कुछ न सुहाय मैया वात

सन मो जीय की ॥ २२ ॥ बेटीरी हम करे सुख की आस। तू लागी दुःख देन को बलजीववे ॥ बेटीरी उर सेई दश माश । अब चली सयम लेनको बलजीवबे ॥ तू चली सयम लेन बेटी कहो अब हम क्या कहैं । तैं सराक मोह न किया हम से यह कुशर कैसे सहैं ॥ तू चली पति के सग बेटी और अब क्या भाषिये । स्याकी न लागी सेत कुन को लाज कुल को राखिये ॥२३॥ मैया हो हम को आज्ञा देहु । अब हम सयम लीजिये बल जीववे ॥ भावज हो हमसे तजो सनेह । हम पर मोह न कीजिये बल जीववे॥ मत करो मोह फूफी पड़ोसिन बहिन दादी सब जमा । चाची भतीजी भानजी मो सबन से उत्तम क्षमा ॥ कर जोड़ के रजमति कहै सब सुनत चकित हो रहैं ॥ पूजिये तेरी आश बेटी और अब हम क्या कहै ॥ २४ ॥ पहुंची हो राजुल गढ़ गिरि नारि । अपने पियके सामनी बल जोववे ॥ लीनीहो दिक्षा सुमति विचार । पहुंचत पहिले जाम ही बलजीववे ॥ पहुंचते राजुल लई दिक्षा तप किया तहां अति घना । जारि कर्म निवार दुर्गत भव सुधारो अपना ॥ सोलमें स्वर्ग विमान चढ़कर रानी राजमतीगई

स्त्री लिंग छेद अभेद करके देव ललितांगा भई ॥ २५ ॥ भविजन हो जो यह पढ़े त्रिवार। और जो स्वर धर गावहीं वल जीववे। भवि जनहो जगमें है यह सार द्वादश भावना भावही वल जीववे॥ यह भावना राजुल पचीसी जो कोई सुने भाव सो। इन्द्र चन्द्र धनेन्द्र चक्री अंत शिवपुर जायसो। यह लालचन्द्र विनोदी गावैं सुनत सब जग गहि भरें ॥ राजुल पचीसी नेम जिन सब संग को मगल करे ॥ २६ ॥

इति श्री राजुल पचीसी सम्पूर्ण ॥

८० जलगालनविधि ॥

चौपाई प्रथम वंदि जिनदेव अर्हंत। परम सुभग शीतल शुभमत ॥ शारद गुरु वंदों परमान। जल गालन विधि कहों बखान ॥ १ ॥ कानरि मसक न लीजे मोल। भरिये नहीं चामके डोल ॥ जिहि २ कुवा भरै सब होर। एक लेज सो परै लभेड़ ॥ २ ॥ उभयतनीच हिये मरजाद। भिन्न कुवां मिट जाय विषाद ॥ नीर तीर जहिं होय मसान। सो तजि घाट भरै जल आन ॥ ३ ॥ पानी भरन जाय जो घाट। लेकलश म्हेले भरि

माट ॥ गाढी गजी बड़ं विस्तार । पुनि दूनी करि गाले धार ॥ ४ ॥ लीजे दृढ़ अंगुल छत्तीस । पणहा मित अंगुल चौबीस ॥ चारिउ कोन पकरि पहवाहि । सो छन्ना बिलछइ जल माहि ॥ ५ ॥ छन्ना मध्य न कर सचरे । चारो कोन गहि घट पर धरे ॥ चुकटी धरि दावे नहि तहि । ज्ञान विना समझावे काहि ॥ ६ ॥ छन्नहि लिपट रहे जल जंत । धरि दावे मरि जाय तुरन्त । विन विलछो छन्ना जो रहै । जल सूके जल जन्त सुदहै ॥७॥ सावधान सबही विधि होय । विन प्रमाद सयम लहै सोय ॥ क्रोध लोभ माया विन मनी । अन्तः करण दया रुचि घनी ॥ ८ ॥ छाने जल की दोठेधार । ते सब जीवन नीर मझार ॥ ऐसी करि भरि ल्यावे नीर। पुनि गाले घन्नौची तीर । ९॥ गालि २ जल वर्तत आइ सो छन्ना ले जलहि बुझाइ ॥ छानो नीर रहे घरी दोइ सो जल पुन अन छानो होय ॥ १० ॥ जल छाने तसु दया निमित्त । एकेन्द्री जल रहै सचित्त ॥ ऐसे जल श्रावक व्योपार । चौथी प्रतिमा लघु आचार ॥ ११ ॥

दोहा सो ध्यानी सो मुनि यतीसो श्रावक सो साध। सो आचारज है बड़ो जामे नहो विवाद ॥ १२ ॥ सो

दाता चहुं दान को सो तपशील महंत । गुलाल ब्रह्म गुण आगरो जो जल गालि पिवत ॥ १३ ॥ चौपाई ॥ पचम प्रतिमा श्रावक धरे । तब जल छानि सुप्राशुक करे ॥ खार कषायल तिक्त रससोइ । तामें मिश्रित जल शुक होय ॥१४॥ इतनो करे रहे दिनमान । है वा रहै अस जम पान ॥ राखें रहै न डारी जाइ । तत्छिण सन्मूर्छन उपजाइ ॥ १५ ॥ पहर २ पर प्राशुक करे । तव वह जल संयम प्रति धरे ॥ जो गालो जल प्राशुक रहै । अष्ट प्रहर तातो निर वहै ॥ १६ ॥ दिन ने काल उलघि जबजाइ तब सन्मूर्छन उपजै आइ ॥ तातें कहिये बारम्बार । बिन बिलछो गालो जलधार ॥ १७ ॥ सो बिलछन वासन में धरे । जतन जुगति पनघट विस्तरे ॥ कूप मध्य बिलछन सचरे । द्वय गुडोल जतन कर धरे ॥१८॥ जो बिलछन दीजे लुटकाइ । लगै चपेट बिराध कराइ ॥ जो बिलछन भूमें गिर परे । जापर गिरै सो वहु दुख भरे ॥१९॥ नर्क निगोद पशू गति माहि । वे दुख भाषे कहे न जाइ । असुर कुमार जुदंडत आध । दुख असात परस्पर वाध ॥ २० ॥ छेदन भेदन मुद्गर मार । शीत उष्ण दुख विषम अपार ॥ ऐसो करि दुख भुगते आउ ।

पूरी करि आवे तिह ठाउ ॥ २१ ॥ कै यो जन्म सूक-
री होइ । गादह गाढर जंबुक जोइ ॥ जो विलछन
डारे पनिहारि । सो मरि होइ श्वान की नारि ॥२२॥
ता विलछन में जीव वसंत । होइ घात जेते त्रत जंत
पुद्गल तुच्छ दृष्टि नहि परैं । जल आकृत जल में संच-
रें ॥ २३ ॥ एक बूंद को लेखो करै । केवल वचन साखि
हों भरै ॥ बे जो जीव होइ मरि कोक । त्यों भरि उ-
वर्टे तीनों लोक ॥ २४ ॥ एक बूंद के जीव अपार । वर-
नैं और कहा विस्तार ॥ अनछानों जल आवे जहां ।
दोष अमिष को लागे तहां ॥ २५ ॥ अनगाल्यो जल मं
जन करे । सो तो अंग अशुद्ध अति धरे ॥ तुच्छ जंतु
जल मांहि निहार । मानों वान्हायो पशु मार ॥२६॥
अनगाल्यो जल वरते कोइ । जन्म पाय जलही में
जोइ ॥ परतीति नहीं जन्म की तास । अनादि काल
जल ही वास ॥ २७ ॥ जो जो जल अनगल्यो होइ ।
तासों शुद्ध कहो मति कोइ ॥ जो जल परस परस विस्तरे ।
सो जल जीव राशि करि भरे ॥ २८ ॥ ॥दोहा॥
पिशुन पाय जुग २ वारे नदी जाल अरु पांन । अना
गाल्यो बूंद को पीवे यह वह एक समान ॥ २९ ॥ प-

लरो फाटो फिर फिरो रातो पीरो श्याम। हरित ब-
रण नहिं लीजिये दुहिरे छन्ना काम।३०॥ पहरो अंबर
फारि केजो छन्ना धरि देइ। धर्म गमावेआपनो पाप
वांधि सिर लेइ ॥ ३१ ॥ चौपाई।

तातें गालि करे जल शुद्ध। पक्को होइ अरु वाढ़े बुद्धि
पूरी क्रिया यहै कलिटेक। नतर कहू है एकामेक ॥३२॥
को शूद्र को उत्तम लोग। को धर्मी को पाप सरोग॥
काके छूजे लीजे सीच। को उपशम उत्तम अरु नीच
॥ ३३ ॥ जोन क्रिया पानी की वने। तो कुल उत्तम
कैसे गने॥ जो जल धर्म सकल विधि चले। तो कुल
पलदुहू निरमले ॥३४॥ गालहि जल सुंदरि परवीन। द-
याधर्म जिनके मन लीन॥ जिनके चित्तन उपजे रीस।
सर्व अंग लक्षण वत्तीस।३५॥ शीलवंत गुणवत गंभीर।
सलिल चित्त जानें पर पीर॥ सम्यक दर्शन मन वच
गाल। पूजहि जिन छांड़ मिथ्यात ॥ ३६ ॥ टोना टम-
ना जाने नारि। सो का गाले मूढ गमारि॥ पूजन चले
कुदेवे धाइ। ताके मन को धर्म नसाइ ॥ ३७ ॥ अति
क्रोधी अति खेहरी चोर। दान पुण्यको खरी कठोर॥
सो गाले जल क्यों सत भाइ। उठे रिसाय न धर्म क-

राइ ॥३८॥ जल गाले न लराई करे। लरि बूढन सांई पे चले। गाले वे जल राजकुमारि। कै सुलज्ज साहुनि की नार ॥ ३९ ॥ कोमल कीन्ह होइ वापुरी। माने बात गुरुनि की खरी ॥ ऐसी विधि बरतों नर कोइ। सो उत्तम नर श्रावक होइ ॥ ४० ॥ दोहा।

जो जल गाले जुगति सों इस विधि कहै पुरान।
गुलाल ब्रह्म ते नर सुखी लोक मध्य परवान ॥ ४१ ॥

इति जलगालन विधि समाप्तम्।

८१ धारें भाषा ॥

॥ दोहा ॥

श्री जिनवर चौवीसवर कुनयध्वांत हर भान।
अमित वीर्य दृगबोध सुख युत तिठो इह थान ॥१॥

(परि पुष्पांजलि क्षिपेत्) इति स्थापनम्।

त्रिभंगी छन्द।

निरीश शीस पाण्डु पे सचीश ईश थापियो। महोत्सवो अनंद कंद को सबै तहां कियो ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्त देखि हेतु आपना। यहां करैं जिनेन्द्र चन्द्रकी सु विम्ब थापना ॥ २ ॥

इति विम्ब स्थापना ।   सुन्दरी छन्द ।

कनक मणि मय कुंभ सुहावने । हरि सुक्षीर भरे अति पावने ॥ हम सुवासित नीर यहां भरे । जगत् पावन पांव तरें धरें ॥ ३ ॥   इति कलश स्थापना ।

गीतिका छन्द ।

शुद्धोपयोग समान भ्रम हर परम सौरभ पावनो । आकृष्ट भृंग समूह गंग समुद्भवो अवि पावनो ॥ मणि कनक कुंभ निशुंभ किल्विष विमल शीतल भरि धरों । श्रम स्वेद मल निरवार जिनत्रय धार दे पायन परों ॥ ४ ॥   इति जल धारा ।

अति मधुर जिन ध्वनि सम सु प्रीणित प्राणिवर्ग स्वभाव सों । बुध चित्त सम हर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछाव सों । तत्काल इक्षु समुत्थ प्राशुक रत्न कुंभ विषे भरों । यम त्रास ताप निवार जिन त्रय धार दे पायन परों ॥ ५ ॥ इति इक्षु रस धारा । निष्टप्त त्तिप्त सुवर्ण मद दमनोय ज्यों विधि जैनकी । आयुप्रदा वल वुद्धि दा रक्षा सुयों जिय सैनकी ॥ तत्काल मथित क्षीर उत्थित प्राज्य मणि झारी भरों । दीजे अतुल वल मोहि जिन त्रय धार दे पायन परों ॥ ६ ॥ इति घृत धारा ॥ शरदाभ्र शुभ्र सु हाटक द्युति सुरभि पावन सोहनो ।

क्ति व्यक्त हर वल धरन पूरन पय सकल मन मोहनी॥
कद तण्ण गोथन तें समाहृत घट जटित मणिमें भरो।
दुर्वल दशा मो मेट जिन त्रय धार दे पायन परों॥७॥

इति दुग्ध धारा।

बर विशद जैना चार्य ज्यों मधुराम्ल कर्क शिता धरैं
शुचि कर रसिक मंथन विमंथित नेह दोनों अनुसरे॥
गो दधि सुमणि भृंगार पूरन ल्याय करि आगे धरों।
दुखदोष कोष निवार जिन त्रय धार दे पांयन परौं॥८॥

इति दधि धारा॥

दोहा—सर्वौषधी मिलाय के भरि कंचन भृंगार।
यजों चरण त्रय धार दे तारि तारि भवतार॥९॥

इति सर्वौषधी धारा॥

इति धारैं भाषा समाप्तम्॥

ओं नमः सिद्धं॥

८२ अरिहन्तपरमेष्ठी मंगल॥

वन्दों श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्यजी। उपाध्याय नमि साधु भावधर आर्यजी। पंच परमपद श्रेष्ठ जगति में ये कहे! इन ही के सुप्रसाद भव्यजन सुखलहे॥ लहे लेते

लेयगे सुखमुक्ति रमनीके सही। अहमेंद्र इन्द्र नरेंद्रसुख की तास उपमा है नहीं॥ यासे तिन्हों के एकसौ ति रतालगुण नितध्याइये। उरनेम धरके पंचपद के पंच मगल गाइये॥ १॥ सम चतुर संस्थान सुगन्धित तनल से। एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभवसे॥ मलमूत्र नही होंय पसेव न होइये। क्षीरवर्णवर रुधिर अतुल बल जोइये॥ जोइये हितमित बचन सुन्दर रूप का ना पार जी। लखवज्र ऋषभ नाराच्य सहनन जन्म दश गुण धारजी॥ सुरभिक्ष योजन एक शत लों चार दिश जानिये। छाया विवर्जित चार आनन गगण गमन वखानिये॥ २॥ नही बढ़े नख केश सकल विद्याधनी प्राणी बाधा रहित सहिज अतिशय बनी॥ नही होय उपसर्गाहार कवला नही। नेत्र नही टमकार ज्ञानगुण दश सही॥ सही सब ही जीव केरे भावमैत्री तहा वसें। सकलार्थ मागधी होय भाषा सुनत सब संशय नशें॥ सब लोकमे आनन्द बर्तें भूमि दर्पण समछजे। आकाश निर्मल धान्य सब ही एकठे ही नीपजे॥३॥ छ ऋतु के फलफूल फलें इकवार ही। भू तृण कटक आदि रहित सुख कार ही॥ मन्द सुगन्धि चले पवन सकल जनमन

हरें। गंधोदक की वृष्टि गगण से सुर करें॥ करें जय जयकार सुख से शब्द सुर आकाश में। सुरहेम कमल विहार करते धरत पदतल जासमें। अष्टमंगल द्रव्य राजत धर्मचक्र चले तहां। ये देव कृत गुण जान चौदह जोड़ सबचौंतिस यहां॥ ४॥ सोहै वृक्ष अशोक शोक हरलेत है। दिव्य ध्वनि सुनजीव मिथ्या तज देत है॥ सुरकृत पुष्प सुवृष्टि चमर चौसठ ढुरें। भामंडल सुरगंगण नाद दुंदभी करें॥ करें अपने हेतको ये छत्रत्रय शिर सोहना। मणि जड़ित सिंहासन कनकमय लोकत्रय मन मोहना॥ ये प्रातिहार्य मिलाय आठों जोड़ गुण ब्यालीस जी। येही जनावत प्रगट तुम को तीन जगके ईशजी॥ दर्शन ज्ञान अनत विषे षट द्रव्य से। गुण पर्याय अनत लखें दृष्टि सर्वके॥ राजत सुक्ख अनन्तानन्त केवलधनी। अनन्त चतुष्टय जोड़ सकल छ्यालिस गुणी॥ गणाये सुछ्यालिस गुण विराजत देव अरिहंत सो लखो। गुण और कवलो कहों कैसे बुद्धि थोरी मैं रखो॥ इन्द्रगणधर आदि जिन गुणगणात पार न पाइयो। गणिदोष अष्टादश जिनेश्वर मूल से जु नसाइयो॥६॥ क्षुधातृषा मदमोह जरा चिन्ता टरी। आरति विस्मयरोग शोक निद्राहरी स्वेद खेद भयरोग हनो पुनः द्वेषगी। जन्ममरणका दुःख

नही लवलेशजी ॥ लवलेश इन का नांहियासे मोहि तारण तरण जी । भव दुःख निवारण सुक्खकारण मोह अशरण शरणजी ॥ यासे सदाही प्रातउठ छालीस गुण नित ध्याइये । उरनेस धरपद पचमे अरिहन्त मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥ इति श्री अरिहन्त परमेष्ठीमङ्गल सम्पूर्ण॥

८३ श्रीसिद्ध परमेष्ठी मंगल ।

तिहूं जग शिरतन बात वलयमें जानियो । प्रारम्भ नभक्षेत्र तहां उर आनियो ॥ मनुजक्षेत्र समक्षेत्र महा अद्‌भुतसही । हाटक मणिमय मुक्तिशिला तासमकही ॥ कही तिहूं जग शीर्ष ऊपर छत्रके आकारजी । मध्यभाग योजन आठमोटी अन्तअनुक्रम ढारजी ॥ तापर विराजत सिद्ध शिवथल कायविन विनरूपजी । लखपूर्बतन से ऊन किंचित् आत्मरूप अनूपजी ॥ १ ॥ एक सिद्ध के मांहि अनन्ते सिद्ध हैं । राजत गुण समुदाय लिये निज ऋद्धि हैं ॥ किंचित्कायोत्सर्ग और पद्मासन । सकल सिद्धसन शीर्ष विराजत भासनं । भासना आकार का जे लखो इक दृष्टान्तजी । सांचो करो इक मोम को फिर गारा लेप धरन्त जी ॥ सुकवायता को अग्नि देकर मोम काढ़न ठानिये । पोलारवा में रहै जैसी सिद्ध आकृति जानिये ॥ २ ॥ पौने सोलह सौ धनुमहा गिना-

यजी। वात वलय तन की सुलखो मोटाय जी। पन्द्रह सौ का भागदेय ताको सही। सवापांच सौ धनुष होंय संशय नही॥ संशय नही अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धन की लखो। तनबात की मोटाई पुनः भाग नवलख का रखो॥ अवगाहनाहि जघन्यगिनले हाथ साढ़े तीनजी पुनः मध्य भेद अनेक है अवगाहना के चीत जी॥ ३॥ मोहनी नामाकर्म महाबलवन्त जी। कीन्हीं बातिल वुद्धि सकल जगजन्तु जी॥ ताहिमूल से नाश शुद्ध सम्पति लही। प्रगटो गुण सम्यक्त्वप्रथम अद्भुत सही॥ सही गुण यह जगति के दुःख नाशने को मूल है। या बिना सब ही अकारथ बासना बिन फूल है॥ बिन नीव मन्दिर मूल बिन तरु नीर बिनसागर यथा। सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं सर्वथा॥ ४॥ ज्ञानावरणी कर्म दयो सब टार जी। हस्त रेख समलोक अलोक निहार जी॥ दूजे गुण तब ज्ञान शुद्ध सुप्रगट लहो। यासम और न कोइ जगति मे गुण कहो॥ कहो तीजो कर्म नामी दर्शनावरणी लखो। दीखे नहीं जाके उदय जिमि वस्त्र पर ढाकन रखो॥ इस कर्मको विध्वस करके लहो केवल दर्शना। गुण होय दशन मिटे तब ही वस्तु देखन तर्सना॥ ५॥ अन्तराय बल-

वान महा दुःख देत है । जग जीवों की शक्ति सभी हरलेत है ॥ याको हति निज वीर्य अनन्त लहायजी। सो चौथा गुण वीर्य लखो मन ल्याय जी ॥ मन ल्याय तिहुं जगमाहि जानो नाम कर्म महान हैं । इस कर्म वश जगजीव चहुंगति भटकते हैरान है ॥ याको हनो तब ही अमूर्त्ति भयो आत्मराम है । सो मत्त गुण तब होत जग मे बहुर नाहीं काम है ॥ ६ ॥ आयु कर्म से जीव चहूंगति मे बसै । बंदीखाने माहिं यथा कैदी फँसे ॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना । एक सिद्ध में सिद्ध अनंत समावना ॥ समावना जगजीव सब ही गोत्र विधिके वशपरे । पद ऊच नीच लहें सुबहु विधि दुःख दावानल जरें ॥ इस गोत्र कर्म विनाशने से भाव सम प्रगटे सदा । सो गुण अगुरु लघु होय तबही ऊंच नीच न रहे कदा ॥ ७ ॥ वेदनी कर्म वसाय जगति के जीव जी । भोगे दुःख अपार अचिंत्य सदीव जी अव्याबाध गुण होइ हरे जब याहि जी । सुख दुःख दोनों रहित नही कछु चाहजी ॥ चाह तिहुं जगकाल तिहुके सुख इकट्ठे कीजिये । तिनसे अनन्तः सुख है इक समय माहिं लहीजिये ॥ यासे तिन्हो के आठ गुणको

प्रात उठनित ध्याइये । उर नेम धरके पचपद में सिद्ध मगल गाइये ॥८॥ इति श्री सिद्धपरमेष्ठी मगल सम्पूर्णम् ।

८४ श्री आचार्यपरमेष्ठी मंगल॥

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो । सोही दर्शनाचार भिन्न परसे कहो ॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी । सोही ज्ञानाचार लखोसु प्रवीण जी ॥ प्रवीण निजपद मांहि थिर हो यही चरित्र गुणतही । इच्छा आभ्यन्तर रोक अनसन वाह्यगुण तप जानही ॥ जब कष्ट बहु विधि आवता नहिं टरैं यह गुण वीर्य जी । आचरैं पंचाचार यह गुण लहैं बहुधर धीर्य जी॥१॥ वर्ष अयन ऋतुमास पक्ष आदिक तनो । करे सदा उपवास लहैं गुण अनसनो । पूर्ण ग्रास बत्तीस अन्न जल के गुणी । लेव तामें ऊन ऊनोदर सो सुनो ॥ मुनिचर्या निमित्त बन में व्रत अटपटे धर चलैं । व्रत परिसख्या कहो यह गुण और जन से ना पलै ॥ कोई रस को तजें कबहूं सर्व रस तजदेत हैं । गुण जान रस परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजत हैं ॥ २ ॥ गिरि कन्दर एकांत रहत सु मसानमें । धरैं ध्यान अनागार लीन निज ज्ञान में ॥ विवयक्त शय्यासन सो कहत गुण या-

हिजी । साहस ऐसा धार ममत्व सो नाहिं जी ॥ नाहिं तनको तनक सो भी ममत्व तिनके उर बसे। पावस समय तरुके तले धरें ध्यान पातिक सब नसे ॥ हेमत सरिता ग्रीष्म गिरि शिर महा उग्र जो तप करें। गुण लखो काय कलेश येही सकल दुख को परिहरें ॥ ३ ॥ प्रातः धरैं व्रत जेह सम्हालें सांझजी। कोई लागो दोष लखें ता मांझ जी ॥ गुरु से कह सब दोष दंड को आचरें। प्रायश्चित्त गुण येह महा सुख को करें ॥ करें मन बच काय सेती देव गुरु श्रुतका विनय। अरु पूजनीक पदार्थ तिन की विनय गुण तपको गिनय ॥ रोगादि युत या वृद्ध मुनि वर देख वैयावृत्य धरें। उन्माद मद तज लखे वैयावृत्य गुण तब विस्तरें ॥ ४॥ पचभेद स्वाध्याय आप नित ही करें। बोध बंधके हेतु परन को उच्चरें॥ सोही गुण स्वाध्याय सकल में सारजी। नाशा दृष्टि लगाय खड़े अनागार जी ॥ अनागार दोनोंकर लुमायें लीन निज आतम विषें। गुण यही कायोत्सर्ग कहिये ममत्व तन से ना दिखें ॥ ध्यान धर्मरु सुक्ल ध्यावें आर्तिरौद्र निवार जी। यह ध्यान गुण शिव करनहारा कर्म रिपुक्षयकार जी ॥५॥ क्रोध महा रिपु जीति क्षमा गुण आदरें। मार्दव गुण जब होय अष्ट

मद को हरें ॥ कूट कपट विषनाश होय आर्यव गुणी। झूठ वचन परित्याग सत्यगुण लें मुनी ॥ मुनी धोवें लोभ मलको शौच्य गुण तबही धरें। मनका विकाररु पाच इन्द्री जीति संयम गुण करें। अन सनादिक ठान के तप शील गुण कर निर्मलो। त्याग अंतर्वाह्य परि- ग्रह त्याग गुण लीनो भलो ॥ ६ ॥ निज परभिन्न ल- खाव यही आकिंचना। ब्रह्मचर्य त्रियत्याग सकल बि- धि से भना ॥ शत्रुमित्र समभाव धरें समता गना। देव गुरू श्रुति बंदे यह गुण बन्दना ॥ बन्दन स्तुति देव श्रुति गुरु करें स्तवन गुण धार के। प्रतिक्रमण गुणकर निवारें लगे दोष विच्चार के ॥ पढ़ें निज श्रुतपर पढ़ावें यही गुण स्वाध्यायजी। कायोत्सर्ग धराय निजपद ध्यान शुद्ध लगाय जी ॥ ७ ॥ मन बन्दर को रोक गुप्ति मल को लहैं। वचन गुप्ति गुण काज नही बिकथा कहैं॥ काय गुप्ति तब होय करें तन छीण जी। निज आत्म तल्लीन कर पर हीनजी ॥ पर हीन करके आप अपनी सम्पदा परखें अक्षय। आचार्य सोई श्रेष्ठ जग में तास उपमा को रखय ॥ यासे तिन्हांके प्रात उठ छत्तीसगुण नित ध्याइये। उर नेमधर पदपच में आचार्य मंगल गाइये ॥८॥ इति श्री आचार्यपरमेष्टीमंगल सम्पूर्णम् ॥

८५ श्री उपाध्यायपरमेष्ठी मंगल

आचारांग पद सहस्र अठारह जानियो। सूत्र श्राग छत्तीस सहस्र पद मानियो ॥ स्थानाग पद जान सहस्र ब्यालिस सदा। समवायांग इकलाख सहस्र चौसठ पदा ॥ पदागिन दो लाख ऊपर धर अट्ठाइस सहस्र जी। व्याख्या प्रज्ञप्ति तामें प्रश्न की है रहस्य जी ॥ पद पांच लाख हजार छप्पन जान ज्ञात्र कथागके। पद लाख ग्यारह सहस्र सत्तर उपासका ध्यानाग के ॥ १ ॥ अ तःकृता दशाग लाख तेवीसजी। सहस्र अट्ठाइस जोड़ सकल पद दीसजी ॥ पद गिन बाजने लाख सहस्र चवाल जी। अनुत्तर उत्पाद दशांग सम्हालजी। सम्हाल लाख तिरानवे पद जोड़ सोले हजार जी। लखलेव प्रश्न व्याकरण माही धर्म कथन विचार जी ॥ एक कोड़ि ऊपर धर चौरासी लाख सब गणलीजिये। येही सूत्र विपाक के पद का कथन लख लीजिये ॥२॥ येही ग्यारह अ ग एकादश गुण कहे। इन सबके पद जोड़ सकल कितने लहे ॥ कोड़ि चारि गिनिलेहु लाख पद्रह रखो। दो सहस्र मिलवाय सकल संख्या लखो ॥ लखो अब उत्पाद पूर्व एक कोड़ि जोपद तनी। पद लाख छानवे

गिनो ताके पूर्व जो अग्रायनी । पद लाख सत्तर लखो ताके पूर्व बीर्यानुवाद जी । लखि अस्ति नास्ति प्रवाद के पद साठलख मर्याद जी ॥३॥ पूर्वज्ञान प्रवाद पंचमा जान जी । एक कोड़ि पद माहिं एक पद हानि जी ॥ षष्ठम सत्य प्रवाद पूर्व पहिचानियो । एक कोड़ि पद पैसु अधिक षट मानियो । मानियो आतम प्रवाद पूर्व कोड़ि पद छब्बीस जी । पद पूर्व कर्म प्रवाद इकसौ अ-सीलाख कही सजी ॥ गिनलो चौरासी लाख पदका पूर्व प्रत्याख्यानजी । विद्यानुवादजु कोड़ि इकपर लाख दश पदठान जी ॥ ४ ॥ पूर्व लख कल्याण वाद कहला-यजी । पद गिन कोड़ि छब्बीस सकल दरशाय जी ॥ प्राणवाद लख पूर्व कोड़ि तेरह पदा । क्रिया विशाल पद जान कोड़ि नव सर्वदा ॥ गिन त्रैलोक वि-दुःसार पूर्व खासजी । पद कोड़ि द्वादश पर धरावे लाख गिनो पचासजी ॥ पद पूर्व चौदह के इकट्ठे जोड़ गिन मन ल्याय जी । साढ़े पचानवे कोड़ि ऊपर पाच पद धरवाय जी ॥ ५ ॥ एकादश लख अंग पूर्व चौदह गने । पद दोनों के जोड़ सकल इतने भने ॥ कोड़ि निन्या-नवे और लाख पैंसठ धरो । सहस्र दोइ पद पाच जोड़ निश्चय करो ॥ करौ गिनती एकपद में किते अक्षर

हैं सही। धर अर्व सोलह कोड़ि चौंतिस अरु तिरासी लाख ही॥ हज्जार सात सु आठ शतपै गिन अठासी फिर रखो। एक पदके कहे सो लख सकल पद इस सम रखो॥ ६॥ अङ्ग पूर्वको सकल भयो है ज्ञानजी। ये ही गुण पचीस मुख्य पहिचान जी॥ सोही तिहूं अग ओह लखो उपझायजी। पर परणित से भिन्न आत्मलव ल्याय जी॥ लवल्याय निज गुण सम्पदा में मग्न निशिदिन ही रहैं। भवसिंधु तारण तरण नवका और उपमाको कहैं॥ यासे तिन्हों के प्रात उठ पचीस गुण नित ध्याइये। उर नेम धर पद पंचमें उपाध्याय मगल गाइये७

इति श्री उपाध्याय परमेष्टीमगल सम्पूर्णम्॥

८६ श्रीसाधु परमेष्ठीमंगल॥

मनवच तन षट कायतनी करुणा धरैं। यही अहिंसा व्रत सु प्रथम गुण आचरे॥ करें झूठ परित्याग वचन मन कायजी। कृतकारित अनुमोद भग सब गाय जी॥ सब गाय अनृत त्याग गुण यह सर्व साधुन के लखो। इसही सुविधि से त्याग चोरी व्रतास्तेय सुनो रखो॥ चेतन अचेतन नारि तजना भेद सहस्र अठारसे सोही है व्रत ब्रह्मचर्य साधू धरत हर्ष अपार से॥ १॥ बाह्याभ्यन्तर त्याग परिग्रह का करें। सोही परग्रह त्याग

महाव्रत आदरें ॥ चलत पथ लख शुद्धहाथ गनिचारजी ईर्या समिति सुव्रतहि दयाचित धारजी॥ चितधार करुणा बचन बोलत स्वपर हित मर्यादसे। यह व्रत भाषा समिति साधू धरत उर अहलादसे ॥ गिनले छयालिस दोष बर्जित लेत शुद्ध आहारजी। सो जान ऐषणा समिति सुन्दर व्रत महा सुखकार जी ॥ २ ॥ वस्तु उठावत बार भूमि दृगसे लखें । तैसे भूमि निहार वस्तु विधि से रखें ॥ आदान निक्षेपना समिति याको कहें । धारें श्रीमुनिराज महा सुखको लहें ॥ लहें नाहीं जीव वाधा भूमि ऐसी देख के । प्रति स्थापन समिति यह मल मूत्र क्षेपे पेखके ॥ तज स्नान विलेपनादिक नाहि तन संस्कार जी। तन क्षीणकर स्पर्शनेन्द्री शोर्थणा सविकारजी ॥ ३ ॥ आम्ल मिष्ट कटुकादि स्वाद रसना तनो। तजें मुनी रसनेन्द्रिय रोधन तप भनो ॥ सुगध अरु दुर्गंध विषय नाशातजे। घ्राणेंद्रीय निरोध नाम तप तब भजें ॥ भजें इन्द्रिय रोध चक्षः दृष्टि नाशापर धरे। युतराग दृग से निरखलो रूपादि सबही परिहरें नही सुनें बचन विकार कर्त्ता कान से बहिरे भये। यह करण इन्द्रिय रोध तपधर सुनें जिन बच रुचिलये ॥४॥ तृण कंचन अरि मित्र सुमहल मसान जी। सुख दुःख

जीवन मरण लख जु समानजी ॥ समतावश्यक नाम यही गुण जान जी । धारें सो मुनिराज महा सुख खान जी ॥ सुख खान लख गुण वन्दना है देव श्रुत गुरु की चहे । इन आदि वंदन योग्य पद की वंदना कर गुण लहे ॥ स्तुति देव श्रुत गुरु आदि देकर पूजनीक जु पदतनी । मन वचन तन से करे मुनिवर थुति आवश्यक सांभनी ॥ ५ ॥ प्रायश्चित्त ले दोष लगे दूरी करें । प्रतिक्रमण गुण येह सर्व साधू धरें ॥ पच भेद स्वाध्याय करे नित ही लहां । सोही गुण स्वाध्याय लहें निज सम्पदा ॥ निज सम्पदा के अर्थ मुनिवर करे कायोत्सर्गजी । धर दृष्टि नाशा भुज लुवायें ममत्व हन तन वर्गजी ॥ तृण कण्टकादिक शुद्ध भूपर अल्प निद्रा लेंय जी । लख रैन पिछली नाम तप यह भूमि शयन कहेयजी ॥ ६ ॥ उर उज्ज्वल तन मलिन तजें स्नान जी । स्नान त्याग व्रत येह कहो पहिचान जीं ॥ मात गर्भ से जन्म समान स्वरूप जी । सोही गुण तन वस्त्र त्याग सो अनूप जी ॥ अनूप पच सेती मुष्टी लुच कचका करत है । कौर करुणा धार उरकच लुंचव्रत मुनि धरत हैं ॥ गुण एकवार आहार लघुले दोष विन विन राग जी । सो एकदा लघ भक्त तप है धरें मुनि वड भाग

जी ॥ ७ ॥ खड़े लैंय आहार पात्र करका करें। चरें गाय सम वृत्य खड़ा गुण सो धरें ॥ आनन मल संयुक्त सूग आने नहीं। करो दंतवन त्याग सुव्रत जानो सही ॥ जानो सही गुण गिन अट्ठाइस सर्वही साधू लहो। यह श्रेष्ठ तीनों भुवन माहीं तरण तारण पद कहो ॥ या से तिन्हीं के प्रातः उठकर गुण अट्ठाइस ध्याइये। उरनेम धरके पच पद में साधु मंगल गाइये ॥ ८ ॥ इति

८७ ऋषिपंचमीव्रतकथा भाषा॥

दोहा—वन्दों श्री जिनराज के, चरण कमल गुणहीर। भव समुद्र तारण तरण, हरण सकल भव पीर ॥ १ ॥ वन्दोंजिन वाणी सुभग, जाते दुरित नशाय। कथा पंचमी की कहूं, गुरु के लागों पांय ॥ २ ॥ चौंपाई ॥ राज गृह नगरी शुभ वसै। श्रेणिक महाराज अतिलसै एक दिवस वन्दों जिनराज। श्रेणिक प्रश्न किया सुख काज ॥ ३ ॥ व्रत पचमी कहो जिन देव। किन पायो फलकर व्रत सेव ॥ तब गणधर बोले सुनसत। हस्तनाग पुर बसे महत ॥ ४ ॥ धन पति नगर सेठ तहं वसै। कमल श्री वनिता गृह लसै ॥ पुत्र सुभविकदत्त तिस गेह। भयो पुनीत मदन समदेह ॥ ५ ॥ धनपति और

विवाही त्रिया । नामरूप श्रीपति अति प्रिया ॥ तत्र
कमल श्री अति दुख सहै । पुत्र सहित न्यारे गृहरहै ६
धनपति रूप श्री आनन्द । बन्धुदत्त सुत उपजो चन्द ॥
ज्यों २ बड़े सयाने भये । त्यों २ सकल कला गुण लये ७
एक दिवस मिल दोनो भ्रात । धन बिढ़वन की कहि-
यो बात ॥ तात गात आनदित भयो । रत्नदीप का
आयसुदयो ॥ ८ ॥ सग लये योद्धा बहु धीर । लये पाट
अम्बर वर चीर ॥ वणिज योग्य लीने सब साज । रत्न
भूषणवर गजबाज ॥ ९ ॥ भविकदत्त माता से बात ।
कही वनिजको पठवातात ॥ बन्धुदत्त पुनि संग सुचले
और भी लोग संग है भले ॥ १० ॥ सुन माता तब धध-
को हियो । तुम बिछुड़े सुत कैसे जियो ॥ तुम गृह म-
डन कुल आधार । तुम विन सब सूनों संसार ॥ ११ ॥
अरु तुम संग सोतिका पूत । सो व्यसनी सुनियत है
धूर्त्त ॥ जो हठ पुत्र वणिज को जाव । तो धूर्तको मत
पतिआव ॥ १२ ॥ नदी नखी जो शृंगी जीव । अरु
दुर्जन कर शस्त्रसदीव ॥ अरु वेश्या के घर मे वास ।
तिनका सुत मत करो विश्वास ॥ १३ ॥ यह माता की
सुनिकर वात । रोम २ आनन्द गात ॥ चलत शकुन सब
नीके भये । चलत २ सागर तट गये ॥ १४ ॥ तहा भरे
प्रोहन जो अपार । वस्तु गिणत बाढ़े विस्तार ॥ गये

तिलक पट्टन के तीर । जामें कोई जाय न धीर ॥१५॥ भविकदत्त चित कीनों चाव । गयो नगरमें कर उच्छाव शून्य नगर ना कोई वसे । वस्तु बजार हजारों लसे ॥१६॥ निर्भय भयो गयो सो तहा । चैत्यालय जिनवर को जहां ॥ वंदे चंद्रप्रभू जिन राज । सुफल जन्म तिन मानो आज ॥ १७ ॥ वन्धुदत्त ने कीनों द्रोह । यान चलाये छोडो मोह ॥ कुछ यक दिन मे पहुंचे तहां । रत्न द्वीप पट्टन है जहा ॥ १८ ॥ भविक दत्त फिर आयो थान । शून्य देख मन भयो मलान ॥ माता वचन सु-मर मन धीर । फिर आयो जिनवर के तीर ॥ १९ ॥ इतनी बात यहीं ही रही । अब यह- कथा मात पर गई ॥ पुत्र मोह की व्यापी पीर । कमल श्रीमति धरे न धीर ॥ २० ॥ तथा २ दीर्घले निश्वास । भूली सुधि बुधि भूख न प्यास ॥ संग सखी जो स्यानी लई । अ-वधि ज्ञान मुनिवर ढिंग गई ॥ २१ ॥ वन्दि मुनीश्वर पूछे सोई । जासे पुत्र मिलन अब होई ॥ जासे सुख परमानंद लहो । बिछुरापुत्र मिलेसो कहो ॥ २२ ॥ सुने वचन तब मुनिवर कहे । ज्यासों रोग शोक सब दहे ॥ जासे स्वर्ग मुक्ति फल होइ । व्रत पंचमी करो भविलोइ ॥२३॥ जोड़े कमल श्री कर दोइ । कहो मुनींद्र कौन

विधि होइ ॥ सुनि धुनि मुनि बोले अभिराम । साध अषाढ़ सुक्ख का धाम ॥ २४ ॥ जबहि शुक्ल पंचमि दिन होइ । तब ही व्रत कीजे भवि लोइ ॥ व्रत के दिन छोड़ो आरंभ । जिन वर जजो तजो सब दम्भ ॥ २५ ॥ वर्ष पंच अरुमासहि पच । ये सब व्रत पैसठ सुन पच ॥ जब यह व्रत पूरे हो लोइ । यथा शक्ति उद्यापन होइ ॥ २६ ॥ लीना व्रत कमलश्री भाय । सब दुख ताके गये पलाय ॥ कथा सुभविक दत्त कोठहीं । नगर भ्रमो सो गयो नहिं कही ॥ २७ ॥ पहुंचो राजा के दरबार । बिन आयथो भयो अधिकार ॥ तहां न कोई मानव रहै । कासो बात चित्त की कहै ॥ २८ ॥ नृप की सुता रूप गुण खान । बोली तासो कर सन्मान ॥ अहो धीर तुम आये यहां । कौन जाति पुर निवसो कहां ॥ २९ ॥ कौन भांति तुम आगम भयो । यह सन्देह भयो मोनयो ॥ तासे भविक दत्त वृत्तांत । अपनो कहो भयो तब शांत ॥ ३० ॥ सुन पुनि राजकुंवरि यों कहै । एक महाराक्षस यहं रहै ॥ ताने पुर कीन्हों विध्वंश । नर नारिन का रहा न वंश ॥ ३१ ॥ वह पुत्री कर राखो मोहि । ना जानो अब कैसी होहि ॥ तुम्हे देख वह करि है क्रोध । सदा लेत मानुप का

शोध ॥ ३२ ॥ अब मैं एक जो तुम से कहों। मैं द्वारे मंदिर के रहों। तुम भीतर रहि देउ किवार। तो वारेसे कुछ होइ ववार ॥ ३३ ॥ कुंवर राखि दृढ़ दये किवार। आप रही मंदिर के द्वार ॥ तबै निशाचर आयो तहां। पुत्री मंदिर बाहर जहां ॥ ३४ ॥ सो हठकर मंदिर में गयो। देख कुंवर प्रमुदित मन भयो ॥ अब मेरे सीझे सब काज। तुम दर्शन पायो मैं आज ॥ ३५ ॥ तुमतो मेरे मित्र निदान। कन्या राखी तुम्हरे जान ॥ अब मोको तुम अति सुख देऊ। कन्या राज पाट सब लेऊ ॥ ३६ ॥ तब हि असुर ने कियो बिबाह। कन्या दे कीन्हों उत्साह ॥ भविक दत्त अरु राजकुमारी। सुख से रहत सुमहल मझारी ॥ ३७ ॥ सम खने मदिर के रहैं। तात मात की सब सुधि कहैं। यह तो लब्धि सुझन की भई। कथा जो बधुदत्त की ठई ॥३८॥ वस्तु बेंच अरु लीनी नई। नफा न एक दाम की भई ॥ सो भर यान देश को चले। बीच नीच तस्कर बहु मिले ॥ ३९ ॥ तिन मिल लूट लयो सब संग। कठिन कष्टसे छोड़े नग ॥ आये फेर सिलक पुर थान। भविक दत्त अवलोके जान ॥ ४० ॥ दम्पति लखि आनन्दित भये। तब सब मिल आगे होलये ॥ बन्धु दत्त पांवों पड़गयो।

तुम विन भ्रात महा दुख लयो ॥ ४१ ॥ चोरों लूट लये हम सवे । कठिन कष्ट से छोड़ अवै ॥ भविकदत्त हंस वोलो वीर । कछु शंकामत करो शरीर ॥ ४२ ॥ मेरे वहु लछमी भंडार । रत्न जहाज भरो इक सार ॥ ऐसे कह सव गृह मे गये । वस्त्राभूषण सवको दये ॥ ४३ ॥ षटरस व्यंजन भोजन करे । तासे सवहि कष्ट परिहरे कर सन्मान यानभर दये । सर्व लोग प्रमुदित मन भये ॥ ४४ ॥ वन्धु दत्त विनवे कर सेव । अव तुम चलोदेश को देव ॥ धर्म धुरधर कुल आधार । तुमसम नहीं पुरुष ससार ॥ ४५ ॥ तात मातके दर्शन करो । यासे सकल कष्ट परिहरो ॥ अरु भावज से विनती करी । सुन धुनिमो वोली गुण भरी ॥ ४६ ॥ अव प्रिय जिय कीजे सत भाव । देखे कमल श्री के पांव ॥ अरु सव मिल जुकही हठ वात । भविक दत्त तव मानी भ्रात ॥ ४७ ॥ वनिता सहित चढ़ो सो जहाज । त्रिय वोली भूली प्रिय साज ॥ देव अनर्घ दिया संदूक । वस्त्राभरण भरे गई चूक ॥ ४८ ॥ सुनी धनी वाणी निज त्रिया । ऋद्धि सिद्धि किन कम्पो हिया ॥ भविक दत्त आतुर हो धाय । नगर मध्य सो पहुंचो जाय ॥ ४९ ॥ वन्धुदत्त चित चिंतो क्रूर । भ्रातहि छांड़ गयो पुनि दूर ॥ वणिको

सहित मंत्र तिन कियो । सबहि दान मन बांछित दियो ॥ ५० ॥ पहुंचे जाय समुद के तीर । निज नगरी आये धर धीर ॥ मिले सबहि जन गण अरु तात मात मिली प्रमुदित मत गात ॥५१॥ देख अपूर्व वस्तु संयोग । भये सर्व विस्मय युत लोग ॥ अरु सुन्दरि घर भीतर लई । रूप श्री आनन्दित भई ॥५२॥ ताहि देख सब पुर नर नारी । कोई नहीं तासु उनहारी ॥ माता बन्धु दत्त से कहै । यह सुन्दरि दुःखित क्यों रहै ॥५३॥ कौन नगरी किसकी यह धिया । किन उपकार सु तुम पर किया ॥ सुन ध्वनि बन्धदत्त मुखहसो । रत्न द्वीप सागर में बसो ॥ ५४ ॥ पृथ्वी पाल नृपति की सुता । राजा दई हमे गुणयुता ॥ मात तात गृह की सुधि करै, दुखित देख धीर नहिं धरै ॥ ५५ ॥ हम तुम बिनना कियो विवाह । सुन ध्वनि सो अनन्दो साह ॥ ऐसे ही सब साथिन कही । तब सबके मन आई सही ॥ ५६ ॥ सुन सबके मन भयो उछाह । कीजे बंधुदत्त का व्याह ॥ शोध घड़ी पंडित ने कही । व्याह करो तिन दूजे सही ॥ ५७ ॥ कामिन गावें मंगल चार विविध भांति दीनी ज्योनार ॥ कुंवर रही मंदिर मत खनै । निन्दि कर्म सुख जिनवर भनै ॥ ५८ ॥ कर सा-

हस दूढ़ दये किवार। त्यागे तिलक ताम्बूलाहार ॥ ऐसे यहां कथांतर होइ। भविकदत्त सुधि कहै न कोइ ॥ ५९ ॥ भविक दत्त नगरी में गयो। सब सामग्री ले आइयो ॥ देख शन्य थन लई पछार। मुख जंपे धिक् २ संसार ॥ ६० ॥ नब वह देव भ ो प्रतयक्ष। भविक दत्त हम तुम्हरी पक्ष ॥ अब तुम हमको आज्ञा देव। पुजवों मन वांछित करसेव ॥ ६१ ॥ भविकदत्त यह कही निदान। पहुंचो जाय म त के थान ॥ देव सुभग बहु-लीनो शाज। रत्न पटाम्बर गज अरु बाज ॥ ६२ ॥ चढ़ि विमानमे पहुंचो तहां। कमल श्री पौढ़ी थी जहां, देख विभूति पुत्र की सोइ। सत्य किधों यह स्वप्ना होइ ॥ ६३ ॥ भविक दत्त बोलो वर बीर। मिलो माय मोको धरधीर ॥ सुने वचन तब संशय गयो। गह भर अंक पुत्र भेटयो ॥ ६४ ॥ बंधु दत्त जो कीनो पाप। कहा सर्व मातासे आप ॥ माता बोली कर उत्साह। तासे बंधुदत्त करे व्याह ॥६५॥ सो तिन चित्त परि-व्रत धरै। तासे मूढ़ व्याह विधि करै ॥ सो तो बहू तु-म्हारी आइ। ताको देहु पारनो जाइ ॥ ६६ ॥ वस्त्राभ रन वहू के जिते। माता को पहिराये तिते ॥ अरु

निज कर की मुंदरी दई । बैठ सुखासन सों तहं गई ॥ ६७ ॥ कमल श्री आवत ही देख । रूप श्री मन भई विशष ॥ मिलों परस्पर जिय सुख भयो । कर सन्मान बैठका दयो ॥ ६८ ॥ कमल श्री मंदिर पर गई । वचन सुनाय सो ठाढ़ी भई ॥ तब तिन जानी अपनी सास । पड़ी पांव दूढ़ लई उसास ॥ ६९ ॥ अरु सुत को आगमन सुनाइ । दे भोजन गृह पहुंची आय ॥ ,भविक दत्त राजा पर गयो । मिल राजा आनन्दित भयो ॥ ७० ॥ तबै राय सुन दो वृत्तंत । क्रोध न सको सम्हारि महंत किंकर पठये पहुंचे जाय । वंधुदत्तको लाये धाइ॥७१॥ आये लोग संग के सबै । पूछी तिन्हें छोड़ दे तबै ॥ तिन राजासे सांची कही । सब धन भविकदत्तको सही ॥७२ राजा सुनत कोप अति कियो । बन्धुदत्त कोदण्ड जु दियो ॥ अपनिसुता पुनि दीनी राइ । कर विवाह मन्दिर पहुंचाइ ॥७३॥ भविकदत्त माता गुण भरी । पुत्र लयो मैंने शुभ घरी । मैं व्रत कियो पंचमी तनो । जाते भयो अतुल धनधनो ॥७४॥ तिन भी धुनि सुनके व्रत लियो । भाव सहित विधिपूर्वक कियो ॥ उद्यापन विधिपूरण करी । जाते भूरि लच्छि विस्तरी ॥७५॥ दोय २

सुत तिन के भये । नित२ करत महोत्सव नये॥ भविकदत्त दीक्षा व्रत लयो । दशवें स्वर्ग जायसुर भयो ॥७५॥ भुगते भोग परम सुखनयो। दयावन्त फिर मुक्तहिगयो॥ श्रेणिक सुनत सबहि व्रत करो। तिन सब घोर दुःख परिहरो ॥७७॥ और जो करे भावसे कोय। ताको स्वर्ग मुक्ति सुख होय ॥ सत्रहसो सत्तावनजान। मिती पौष सुदि दशमी मान ।७८॥ हती कन्तपुर में रचिकथा। श्री सुरेन्द्र भूषण मुनि यथा ॥ श्रावक पढ़ो सुनो धरध्यान जासे होय परम कल्याण ॥७९॥

इति श्रीऋषिपञ्चमी व्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

८८—सुगन्ध दशमी व्रतकथा।

चौपाई ॥

वर्द्धमान-वंदो जिनराय। गुरु गौतम वंदों सुखदाय ॥ सुगन्ध दशमी व्रत की कथा। वर्द्धमान सुप्रकाशी यथा ॥१॥ मगध देश राजगृह नाम। श्रेणिक राज करे अभिराम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि । चन्द्ररोहिणी रूप समान ॥२॥ नृप बैठो सिंहासन परे। बनमाली फल लायो हरे ॥ कर प्रणाम वच नृपसे कहो। चित्त प्रमोद से ठाढ़ोरहो ॥३॥ वर्द्धमान आये जिन स्वामि। जिन जीतो

उद्यम अरिकास ॥ इतनी सुनत नृपति उठचलो। पुरजन युत दलबल से भलो ॥ ४ ॥ समोशरण बन्दे भगवान। पूजा भक्ति धार बहुमान ॥ नरकोटा बैठो नृप जाय। हाथ जोड़ पूछे शिरनाय ॥ ५ ॥ सुगन्ध दशमी व्रतफल भाषि। ता नर को कहिये अब साखि ॥ गणधर कहैं सुनो मगधेश। जम्बूद्वीप विजयार्द्ध देश ॥६॥ शिवमन्दिर पुर उत्तर श्रेणी। विद्याधर प्रीतङ्कर जैनी ॥ कमलावती नारि अतिरूप। सुर कन्या से अधिक अनूप ॥ सागर दत्त बसे तहां साह। जाके जिन व्रतमें उत्साह ॥ धनदत्त वनिता गृह कही। मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगु-साचार्य गृह आइयो। देख मुनीन्द्र दुःख पाइयो ॥ कन्यासुनिकी निन्दा करी। कुछ मनमे नहि शका धरी ॥९॥ नग्न गात दुर्गन्ध शरीर। प्रगट पने देही नहिचीर मुख ताम्बूल हतो मुनि अग। मानो मुखको कीनो भग ॥१०॥ भोजन अन्तराय जब भयो। मुनि उठजाय ध्यान बन दयो ॥ समताभाव धरै उरमांहि। किञ्चित खेदचित्त मे नाहि ॥११॥ बीत अवधि समय कछु गयो। मनोरमा का काल सुभयो ॥ भई गधी पुनि कुकरी ग्राम। अपर ग्राम भई सूकरी नाम ॥ १२ ॥ मगध सुदेश तिलकपु

जान। विजयसेन तहंका नृप मान ॥ चित्र रेखा ता रानी कही। ता पुत्री दुर्गन्धा भई ॥ १३ ॥ एक समय गुरुबन्दन गयो। पूजा कर विनती को ठयो ॥ मोपुत्री दुर्गंधशरीर। कहो भवान्तर गुण गंभीर ॥१४॥ राजा बचन मुनीश्वर सुने। मुनि वृतान्त राय से भने ॥ सब वृतान्त हाजिलो जान। मुनि राजा से कहो बखान ॥१५॥ सुन दुर्गंधा जोड़ हाथ। मो पर कृपा करो मुनि नाथ ॥ ऐसा व्रत उपदेशो मोहि। यासे तनु निरोग अबहोहि ॥ १६ ॥ दयावन्त बोले मुनिराय। सुन पुत्री व्रत चित्त लगाय ॥ समता भाव चित्त में धरो। तुम सुगंध दश-मीव्रत करो ॥ १७ ॥ यह व्रत कीजे मन बचकाय। यासे रोग शोक सब जाय ॥ दुर्गंधा विनवे निकुताय। कहिये सविधि महा मुनिराय ॥ १८ ॥ ऐसे बचन सुने मुनि जवै। तब बोले पुत्री सुन अबै ॥ भादो शुक्ल पक्ष जब होय। दशमी दिन आराधो सोय ॥ १९ ॥ चारों रसकी धारा देव। मन में राखो श्री जिनदेव ॥ शीतलनाथ की पूजा करो। मिथ्या मोहदूर परिहरो ॥ २० ॥ व्रत के दिन छोडो आरंभ। यासे मिटे कर्म का दंभ ॥ या के करत पाप क्षय जाय। सो दश वर्ष करो मन लाय

॥ २१ ॥ जब यह व्रत संपूर्ण होय । उद्यापन कीजे चित जोय ॥ दश श्री फल अमृत फल जान । नोबू सरससदा फल आन ॥ २२ ॥ दश दीजे पुस्तक लिखवाय । यह विधि सब मुनि दई बताय ॥ विधि सुन दुर्गंधा व्रत लयो । सब दुर्गंध ततक्षण गयो ॥ २३ ॥ व्रत कर आयु जो पूरण करी । दशवें स्वर्ग भई अप्सरी ॥ जिन चैत्यालय बंदन करे । सम्यक् भाव सदा उर धरे ॥ २४ ॥ भरत क्षेत्र तहं मगध सुदेश । भूति तिलकपुर वसे अशेष ॥ राजा महीपाल तहां जान । मदन सुन्दरी त्रिया बखान ॥ २५ ॥ दशवें दिवसे देवी आन । त के पुत्री भई निदान ॥ मदनावली नाम धरतास । अति सुरूपतनु सकल सुवास ॥ २६ ॥ बहुत बात को करे बखान । सुर कन्या नाता उन्मान ॥ कोसांबी पर मदन नरेंद्र । रानी सती करे आनन्द ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम सुत सुन्दर जान । विद्यावंत सुगण की खान ॥ जो सुगंध मदनावलि जाय । सो पुरुषोत्तम को पर नाय ॥ २८ ॥ राजा मदन सुन्दरी वाल । सुख से जात न जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर वंदियो । धर्म श्रवण मुनि वर पर कियो ॥ २९ ॥ हाथ जोड़ पूछे तव राय । महा मुनींद्र कहो

समझाय ॥ मोगृहरानी मदनावली । ता शरीर और· मताभली ॥ ३० ॥ कौन पुराय से सुभग सुरूप । सुर व· निता से अधिक अनूप ॥ राजा बचन मुनीश्वर सुने । सब वृतांत राय से भने ॥ ३१ ॥ जैसे दुर्गंधाव्रत लहो । तैसी विधि नरपति से कहो ॥ सुने भवांतर जोड़े हाथ दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजा ने जब दिक्षा लई । रानी तबे अर्जिका भई । तप कर अन्त स्वर्गको गई । सोलम स्वर्ग प्रतेंद्र सो भई ॥ ३३ ॥ वाइस सागर काल जो गयो । अन्त काल ता दिवसे चयो ॥ भरत सुक्षेत्र मगध तहदेश । वसुधा अमर केतुपुर वेस ॥ ३४॥ ता नृप ग्रेह जन्म उन लहो । जो प्रतेन्द्र अच्युत दिव कहो ॥ कनिक केतु कंचन द्युति देह । बनिता भोग करे शुभ ग्रेह ॥ ३५ ॥ अमर केतु मुनि आगम भयो । कनिक केतु तहं बन्दन गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवण सं· योग । तजे परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घा· तिया केवल लयो । पुन अघाति हनि शिवपुर गयो ॥ व्रत सुगंध दशमी विख्यात । ताफल भयो सुरभियुत गात ॥ ३७ ॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सो दुःख संकट भूलि न परे ॥ शहर गहेली उत्तम बास । जैन धर्म

को जहा प्रकाश ॥ ३८ ॥ सब श्रावक व्रत संयम धरें। पूजा दान से पातक हरें ॥ उपदेशी विश्व भूषण सही। हेमराज पंडित ने कही ॥ ३९ ॥ मन वच पढ़े सुने जो कोय। ताको अजर अमर पद होय ॥ यासे भविजन पढ़ो त्रिकाल। जो छूटे विधि के भ्रम जाल ॥ ४२ ॥

इति श्रीसुगंधदशमीव्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

८८ अनन्त चौदश व्रत कथा॥

दोहा—अनन्त नाथ वन्दों सदा, मन में कर बहु भाव।
सुर असुर सेवत जिन्हैं, होय मुक्ति परचाव ॥१॥

॥ चौपाई ॥

जंबूद्वीप द्वीपोमें सार। लख योजन ताका विस्तार॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान। भरत क्षेत्र ता दक्षिण मान ॥ २ ॥ मगध देश देशों शिरमणी। राजगृह नगरी अतिबनी ॥ श्रेणिक महाराज गुणवंत। रानी चेलना गृह शोभत ॥ ३ ॥ धर्म वंत गुण तेज अपार। राजा राय महागुण सार ॥ एक दिवस विपुलाचल वीर। आये जिन वर गुण गंभीर ॥ ४ ॥ चार ज्ञान के धारक कहे गौतम गणधर सों संग रहे ॥ छह ऋतु के फल देखे न-

यन । वन माली ले चाली ऐन ॥ ५ ॥ हर्ष सहित वन माली भयो । पुष्प सहित राजा पर गयो ॥ नमस्कार कर जोड़ हाथ । मोपर कृपा करो नरनाथ ॥ ६ ॥ विपुलाचल उद्यान कहंत । महा मुनीश्वर तहां बसंत ॥ सुन राजा अति हर्षित भयो । वहुत दान माली को दयो ॥ ७ ॥ सप्तध्वनि वाजे वाजंत । प्रजा सहित राजा चालंत ॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राव । जिनवर देख करो चित चाव ॥ ८ ॥ द्वै विधि धर्म कहो समझाय । यासे पाप सर्व जर जाय ॥ खग तहं आयो एक तुरन्त । सुंदर रूप महा गुणवंत ॥९॥ नमस्कार जिनवर को करो । जयजंयकार शब्द उच्चरो ॥ ताहि देख आश्चर्यित थो । राजा श्रेणिक पूछत भयो ॥ १० ॥ सेना सहित महा गुण खानि । को यह आयो सुदर वाणि ॥ याकी वात कहो समझाय । ज्ञानवंत मुनिवर तुम आय ॥११॥ गौतम बोले बुद्धि अपार । विजया नगर कहो अतिसार ॥ मनो कुंभ राजा राजंत । श्रीमती रानी को कंत ॥ १२ ॥ ताका पुत्र अरिंजय नाम । पुण्यवंत सुन्दर गुणधाम ॥ पूर्व तप कीनो इन जोय । ताका फल भुगते शुभ सोय ॥ १३ ॥ ताकी कथा कहूं विस्तार । जंबू द्वीप

द्वीपों में सार ॥ भरत क्षेत्र तामें सुख कार । कोशलदेश विराजे सार ॥१४॥ परम सुखद नगरी तहंजान । विप्र सोम शर्म्मा गुण खान ॥ सोमिल्या भामिन ता कही । दुख दरिद्र की पूरित मही ॥१५॥ पूर्व पाप किये अतिघने । ताको दुःख भुगत ही वने ॥ सुन राजा याका वृत्तांत । नगर २ सो भूमें दुःखान्त ॥ १६ ॥ देश विदेश फिरे सुख आश । तोहु न पावे सुक्खनिवास ॥ भ्रमत२ सो आयो तहाँ । समो शरण जिनवर को जहां ॥१७॥

॥ दोहा ।

अनंतनाथ जिन राज का, समो शरण लिहिबार ॥
सुर नर अति हर्षित भये, देख महा द्युति सार ॥१८॥

॥ चौपाई ॥

विप्र देख अति हर्षित भयो । समो शरण वन्दन को गयो ॥ वन्दि जिनेश्वर पूछे सोइ । कहा पाप मैं कीनो होइ ॥ १९ ॥ दरिद्र पीड़ा दहे शरीर । सो तो व्याधि हरो गंभीर ॥ गणधर कहें सुनो द्विज राय । अनन्त व्रत कीजे सुख दाय ॥ २०॥ तबे विप्र बोलो कर भाय । किस विधि होइ सो देहु वताय ॥ किस प्रकार

या व्रत को करों । कहा विधान चित्त में धरों ॥२१॥ भादों मास सुक्ख की खान । चौदश शुक्ल कही सुख दान ॥ कर स्नान शुद्ध हो जाय । तब पूजे जिनवर सुखदाय ॥२२॥ गुरु वन्दना करे चितलाय । याबिधिसे व्रत लेय बनाय ॥ त्रिकाल पूजे श्री जिन देव । रात्रि जागरण कर सुखलेव ॥२३॥ गीतरु नृत्य महोत्सव जान । धार जिनवर करो वखान ॥ वर्ष चतुर्दश विधिसेधरे । तापीछे उद्यापन करे ॥२४॥ करे प्रतिष्ठा चौदह सार । यासे पाप होइ जर छार ॥ झारी धारी अधिक अनूप । चरण कलश देवे शुभ रूप ॥२५॥ दीवट झालर सकल माल । और च. दोवे उत्तम जाल ॥ छत्र सिंहासन बिधि से करे । ताते सर्व पाप परिहरे ॥ २६ । चार प्रकार दान दीजिये । याते अतुल सुक्ख लीजिये ॥ अन्तावस्था ले संन्यास । ताते मिले स्वर्ग का वास ॥ २७ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय । कीजे व्रत दूनो भवि लोइ ॥ विप्र क्रिया व्रत विधिसे आय । सर्व दुःख तसु गयो विलाय ॥ २८ ॥ अंतकाल धरके सन्यास । ताते पायो स्वर्ग निवास ॥ चौथे स्वर्ग देव सो जान । महा ऋद्धि ताके सो वखान ॥२९॥ विजयार्द्धगिरि उत्तम ठौर । कांचीपुर पत्तनशि-

रमीर ॥ राजा तहं अपराजित बीर। विजया तास प्रिया गम्भीर ॥ ३० ॥ ताका पुत्र अरिजय नाम। तिन यह आय करी सो प्रणाम ॥ कंचन मयसिंहासन आन तापर भूप बैठो सुख खान ॥ ३१ ॥ व्योम पटल विन शत लख संत। उपजो चित वैराग महंत ॥ राज पुत्रको दयो बुलाय। आप लई दीक्षा शुभ माय ॥३२॥ सही परीषह दृढ़ चित धार ॥ ताते कर्म भये अति क्षार ॥ धाति घातिया केवल भयो। सिद्ध बुद्ध सो पद निर्भयो ॥ ३३ ॥ रानी ने व्रत कीनो सही। देव देह दिव अच्यु त लही ॥ तहा सु सुख भुगते अधिकाय। तहासे आय भयो नरराय ॥ ३४ ॥ राज ऋद्धि पाई शुभ सार। फिर तपकर त्रिधि कीने क्षार ॥ तहा से मुक्ति पुरी को गया। ऐसा तिन व्रत का फल लयो॥ ३५ ॥ ऐसा व्रत पाले जो कोइ। स्वर्ग मुक्ति पद पावे सोइ ॥ विनय सागर गुरु आज्ञा करी। हरि किल पाठ चित्त में धरी ॥३६॥ तब यह कथा करी मन लाय। यथा शास्त्र में वरणी आय ॥ विधि पूर्वक पाले जो कोइ। ताको अ-जर अमर पद होइ ॥ ३७ ॥

इति श्री अनंत चौदश व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

८० रत्नत्रयव्रत कथा ।

दोहा—अरह नाथ को वन्दि के, वन्दों सरस्वति पांय ॥
रत्न त्रय व्रत की कथा, कहूं सुनो मनलाय ॥ १ ॥

चौपाई ॥ जंबूद्वीप भरत शुभ क्षेत्र । मगध देश सुख सम्प्रति हेत ॥ राजगृह तहां नगर वसाय । राजा श्रेणिकराज कराय ॥ २ ॥ विपुला चल जिन वीर कुंवार केवल ज्ञान विराजत सार ॥ माली आय जनावो दयो तत्क्षण राजा वदन गयो ॥ ३ ॥ पूजा वंदन कर शुभ सार । लागो पूछन प्रश्न विचार ॥ हे स्वामी रत्न त्रय-सार । व्रत कहिए जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥ दिव्य ध्वनि भगवान वताय । भादों सुदि द्वादशि शुभ भाय ॥ कर स्नान स्वच्छ पटश्वेत । पहिनो जिन पूजन के हेत ॥ ५ ॥ आठों द्रव्य लेय शुभ जाय । पूजो जिनवर मन बचकाय ॥ जीर्णन्यूतन जिनके ग्रेह बिंव धरावो तिन में तेह ॥ ६ ॥ हेम रूप्य पीतल के यत्र । तांबा यथा भोज के पत्र ॥ यंत्र करो वहुमन थिर देव । रत्नत्रय के गुण लिख लेव ॥ ७ ॥ निश्शंकादि दर्शन गुण सार । संशय रहित सो ज्ञान अपार ॥ अहिंसादि महा व्रत

सार। चारित्र के ये गुण है धर ॥ ८ ॥ ये तीनों के गुण हैं आदि। इन्हे आदि जेते गुण वाद ॥
शिव मार्ग के साधने हेत। ये गुण धारे व्रती सुचेत ॥ ९ ॥
भादों माघ चैत्र में जान। तीनों काल करो भविजान ॥
या विधि तेरह वर्ष प्रमाण। भावना भावे गुणहि नि-धान ॥ १० ॥ लवंगादि अष्टोत्तर आन। जपो मंत्र मन कर श्रद्धान ॥ पुनि उद्यापन विधि जो एह। कलशा चमर छत्र शुभ देह ॥ ११ ॥ संग चतुर्विधि को आहार। वस्त्राभरण देउ शुभसार ॥ बिंब प्रतिष्ठा आदि अपार पूजो श्री जिन हो भव पार ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥
इस विधि श्री मुख धर्म सुन, भनो चित्त धर भाय ॥
कौने फल पायो प्रभू, सो भाषो समझाय ॥ १३ ॥

॥ चौपाई ॥

जंबू द्वीप अलंकृत हेर। रहो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरु से दक्षिण दिशि है सार। है सो विदेहधर्म अवतार ॥ १४ ॥ कच्छवती सुदेश तहा बसे। वीत शोक पुर तामें लसे ॥ वैस्त्रिव नाम तहा का राय। करे राज सुर पति सम भाय ॥ १५ ॥ वन माली ने जनावो दयो। विपुल बुद्धि प्रभु वन मे ठयो ॥ इतनी सुन नृप वंदन

गयो । दान बहुत माली को दयो ॥ १६ ॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म । मोसो कहौ मिटै सब भर्म ॥ तब स्वामी ने सब विधि कही । जो पहिले मो प्रकाशी सही ॥१७॥ पंचामृत अविशेक सुठयो । प्रणा प्रभुकी कर सुखलयो ॥ जा गिरना दिठयो बहु भाय । इस विधि व्रत कर श्रिस्त्रिव राव ॥ १८ ॥ भाव सहित राजा व्रत करो । धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो ॥ षोड़श भावना भावत भरो। अंत समाधि मरण तिन करो ॥ १९ ॥ गोत्र तीर्थंकर वांधो सार । जो त्रिभुवन में पूज्य अपार ॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुंचो जाय । भयो तहां अहमेंद्र सुभाय ॥२०॥ हस्त मात्र तनु ऊंचो भयो । तेंतिस सागर आयु सोलयो ॥ दिव्य रूप सुख को भंडार । सत्य निरूपण अवधि विचार ॥ २१ ॥ सो धर्मेन्द्र विचारी धरी । यच्छेश्वर को आज्ञा करी ॥ वेग देश निर्मापयो जाय । थापो सुथरा पुर अधिकाय ॥ २२ ॥ कुंभपुर राजा तहां वसे । देवी प्रजावती तिस लसे ॥ श्री आदिक तहां देवी आय । गर्भ से सोधना कीनी जाय ॥ २३ ॥ रत्न वृष्टि नृप अंगन भई । पन्द्रह मास ज्यों वरसत गई ॥ सर्वार्थ सिद्धि से सुर आय । प्रजावती सुकुच्छ उपजाय ॥ २४ ॥

मल्लि॰ाथ सो नाम को पाय। द्विज चंद्रसम बढ़त सुभाय ॥ जब विबाह मंगल विधि भई । तब प्रभु चित विरागता लई ॥ २५ ॥ दिक्षा धर वन में प्रभु गये। घाति कर्म हनि निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण सो जाय। पूजा करी सुरेशो आय ॥ २६ ॥ यह विधान श्रेणिक ने सुनो। व्रत लीने चित अपने गुणो ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय। पहुंचे अपने गृह को आय ॥ २७ ॥ या विधि जो नर नारी करे। सो भवसागर निश्चय तरे ॥ नलिन कीर्ति मुनि संस्कृत कही। ब्रह्म ज्ञान भाषा निर्मही ॥ २८ ॥

॥ इति श्री रत्नत्रयव्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

९१ दशलक्षणव्रतकथा ।

॥ दोहा ॥

प्रथम वन्दि जिनराज के, शारद गण धर पांय।
दश लक्षण व्रत की कथा, कहूं अगम सुख दाय ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

विपुलाचल श्री वीर कुंवार। आये भवभंजन भरतार सुन भूपति तहां वंदन गयो। सकल लोक मिलि आनन्द भयो ॥२॥ श्रीजिन पूजे मनधर चाव। स्तुतिकरी जोड़कर

भाव ॥ धर्म कथा तहां सुनी विचार । दान शील तप भेद अपार ॥ ३ ॥ भव दुःख नाशक दायक शर्म । भाषो प्रभु दश लक्षण धर्म ॥ ताको सुन श्रेणिक रुचिधरी । गुरु गौतम सें विनती करी ॥ ४ ॥ दश लक्षण व्रत कथा विशाल । मुझसे भाषो दीन दयाल ॥ बोले गुरु सुन श्रेणिक चन्द्र । दिव्य ध्वनि कहो वीर जिनेन्द्र ॥ ५ ॥ खंड धातुकी पूर्व भाग । मेरु थकी ,दक्षिण अनुराग ॥ सीतोदाउ पकठी सही । नगरी विशालाक्ष शुभ कही ॥ ६ ॥ नाम प्रीत कर भूपति बसे । प्रीयकरी रानी तसु लसे ॥ मृगांकरेखा सुता सुजान । मति शेखरनामा सो प्रधान ॥ ७ ॥ शशि प्रभा ताकी वरनारि । सुता काम सेना निरधार ॥ राज सेठ गुण सागर जान । शील सुभद्रा नारि बखान ॥ ८ ॥ सुता मदन रेखा तसु खरी । रूप कला लक्षण गुणभरी ॥ लक्षण भद्र नामा कुतवाल । शशि रेखा नारी गुण माल ॥ ९ ॥ कन्या तास धरे रोहनी । ये चारों वरणी गुरु तनी ॥ शास्त्र पढ़े गुरु पास विचार । स्नेह परस्पर बढ़ा अपार ॥१०॥ मास वसंत भयो निरधार । कन्या चारो वनहिं संभार ॥ गईं मुनीश्वर देखे तहा । तिनको बंदन कीनो वहां

॥ ११ ॥ चारों कन्या मुनिसे कही । त्रिया लिंग ज्यों छूटे सही ॥ ऐसा व्रत उपदेशो अवै । यासे नर तनु पावे सबै ॥ १२ ॥ बोले मुनि दश लक्षण सार । चारों करो होहु भवपार ॥ कन्या बोली किम् कीजिये । किस दिन से व्रतको लीजिये ॥ १३ ॥ तब गुरु बोले बचन रसाल । भादों मास कहो गुण माल ॥ धवल पंचमी दिनसे सार । पंचामृत अभिषेक उतार ॥ १४ ॥ पूजार्चन कीजे गुण माल । जिन चौबीस तनी शुभसाल ॥ उत्तम क्षमा आदि अति सार । दशमो ब्रह्मचय गुणधार ॥ १५ ॥ पुष्पांजलि इस बिधि दीजिये । तीनों काल भक्ति कीजिये ॥ इस बिधि दश वासर आचरो । नियमित व्रत शुभ कार्य करो ॥ १६ ॥ उत्तम दश अनशन कर योग । मध्यम व्रत कांजी का भोग ॥ भूमि शयन कीजे दश राति । ब्रह्मचर्य पालो सुख पांति ॥ १७ ॥ इस विधि दश वर्ष जब जांय । तव तक व्रत कीजे धर भाय ॥ फिर व्रत उद्यापन कीजिये । दान सुपात्री को दीजिये ॥१८ ॥ औषधि अभय शास्त्र आहार । पचामृत अभिषेक हि सार ॥ माडनो रचि पूजा कीजिये ।

छत्र चमर आदिक दीजिये ॥ १९ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय । तो दूनों व्रत कीजे लोय ॥ पुण्य तनो संचय भंडार । पर भव पावे मोक्ष सो द्वार ॥ २० ॥ तब चारों कन्यों व्रत लायो । मुनिवर भक्ति भावलखि दियो । यथा शक्ति व्रत पूरण करो । उद्यापन विधिसे आचरो ॥२१॥ अंतकाल वे कन्या चार । सुमरण करो पंच नवकार ॥ चारोंमरण समाधि सु कियो । दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥ २२ ॥ षोड्स सागर आयु प्रमाण । धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्र में करे विहार । क्षायक सम्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देस विशाल उज्जयनी नगरी गुण माल ॥ स्थूल भद्र नामा नरपती रानी चारुसो अति गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भ में आये चार । ता रानी के उदर मझार ॥ प्रथम सुपुत्र देव प्रभु भयो । दूजो सुत गुण चन्द्रभाषियो ॥ २५ ॥ पद्म प्रभा तीनों बलवीर । पद्म स्वारथी चौथो धीर ॥ जन्म महोत्सव तिन को करो । अशुभ दोषग्रह दोनों हरो ॥ २६ ॥ निकल प्रभा राजा की सुता । ते चारों परनी गुण युता । प्रथम सुता सो ब्रह्मी नाम । दुतिय कुमारी सो गुण धाम ॥ २७ ॥ रूपवती तीजी सुकुमाल ।

मृगाक्ष चौथी सो गुणमाल॥ करो व्याह घर को आइयो। सकल लोक घर आनन्द लियो ॥ २८ ॥ स्थूल भद्रराजा एकदिना। भोग विरक्त भयो भवतना ॥ राजपुत्र को दीनो सार। वन में जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तप कर उपजो केवल ज्ञान। वसु विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब वे पुत्र राज को करें। पुण्य का फल पावें ते धरें ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान। अहिनिशि धर्म तनो फल मान ॥ एक समय विरक्त सो भये। आतम कार्य्य चिन्तवत ठये॥३१॥ चारों बांधव दिक्षा लई। वन में जाय तपस्या ठई ॥ निज मन में चिद्रूपारधि। शुक्ला ध्यान को पायो साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊपनो। सुख अनन्त तब ही सो ठनो ॥ करो महोत्सव देव कुमार। जय २ शब्द भयो तिहिवार॥ ३३ ॥ शेष कर्म निर्बल तिन करे। पहुंचे मुक्ति पुरी में खरे ॥ अगम अगोचर भव जल पार। दश लक्षण व्रत के फल सार ॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सुजान। शीतल जिन के बाड़े मान ॥ गौतम गण धर भाषी सार। सुन श्रेणिक आये दरवार

॥३५॥ जो यह व्रत नरनारी करे। ताके गृह सम्पति अनुसरे॥ भट्टारके श्री भूषण वीर। तिन के चेला गुण गंभीर॥ ३६॥ ब्रह्मज्ञान सागर सुविचार। कही कथा दश लक्षण सार॥ मन वचन व्रत पाले जोइ। मुक्ति वरांगणा भोगे सोइ॥ ३७॥

॥ इति श्रीदशलक्षणव्रतकथाभाषासम्पूर्णम्॥

९२ मुक्तावली व्रत कथा॥

॥ दोहा॥

ऋषभनाथ के पद नमो, भविसरोज रविजान।
मुक्तावलिव्रत की कथा, कहूं सुनो धरध्यान॥१॥

मगध देश देशा मे प्रधान। तामें राज गृह शुभथान॥ राज्य करे तहा श्रेणिकराय। धर्म वंत सब को सुख दाय॥ २॥ ता गृह नारि चेलना सती। धर्म शील पूरण गुण वती॥ इकदिन समो शरण महावीर। आयो विपुला चल पर धीर॥ ३॥ सुन नृप अत्यानन्दित भयो। कुटुम सहित वंदन को गयो॥ पूजा कर बैठो सुख पाय। हाथ जोड़कर अर्ज कराय॥ ४॥ हे प्रभु मुक्तावलि व्रत कहो। यह कर कौने क्या फल लहो॥ तब गौतम बोले हर्षाय। सुनौ कथा मुक्तावलि राय

॥५॥ याही जंबू द्वीप मझार। भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार॥ अंगदेश सोहे रमनीक। नगर बसे चंपापुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य एक ब्राह्मण बसे। नाम सोमशर्मा तसुलसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई। यौवन मदकर पूरण ठई ॥ ७ ॥ एक दिन देखे श्रीगुरु जबे। नग्न गात सो निंदे तबे ॥ अति खोटे दुर्वचन कहाय। बहुत ही ग्लानि चित्त मे लाय ॥८॥ ताकर महा पाप बाधियो। अवधि व्यतीते मरण जु कियो ॥ नरक जाय नाना दुख सहे। छेदन भेदन जाय न कहे ॥ ९ ॥ नरक आयु पूरी कर जोइ। भव भूमि द्विज गृह पुत्री होइ ॥ निर्नासिका पड़ा तिस नाम। अति दुर्गंधा देह निकाम ॥ १० ॥ कोई ढिंग आवे नहिंतहां। क्रम कर वड़ी भई सो वहां ॥ अन्न पान कर दुखित महा। जूठन भखे कष्ट अति लहा ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय। कर प्रणाम विनवे शिरनाइ ॥ कौन पाप मैं कीनो देव। मैं पायो अति दुख अभेव ॥ १२॥ तब मुनिवर पूर्व भव कहे। गुरु की निन्दा से दुख लहे ॥ तब दुर्गंधा जोड़ हाथ। ऐसा व्रत दीजे मोहिं नाथ ॥ १३ ॥ यासे रोग शोक सब जाय। उत्तम भव पाऊं गुरुराय ॥

तब श्रीगुरु बोले हर्षाय। मुक्तावली करो मन लाय ॥ १४ ॥ तासे सर्व पाप जर जाय। सुख सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कहे विचार। कौन भांति कीजे व्रतसार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इम वचन कहाइ। सुनो भेद व्रत का चितलाइ ॥ भादों सुदि सप्तमि दिन होइ। तादिन व्रत कीजे भविलोइ ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मंदिर जाइ। पूजा कथा सुनो मनलाइ ॥ सब आरंभ तजो दिन मान। संयम शील सजो गुण खान ॥ १७॥ भोर भये जिन दर्शन करो। शुद्ध अशन कीजे तब खरो ॥ दूजो व्रत पूर्व वत करो। अश्विन बदि छठि पाप निहरो ॥ १८ ॥ तीजो व्रत कीजे उरधार। अश्विन बदि-तेरसि सुखकार ॥ कर उपवास पालो गुण रसी। चौथो अश्विन सुदिग्यारसी ॥ १९ ॥ पंचमव्रत कीजे मनलाइ। कार्तिकवदि बारसि सुख दाय ॥ फिर छठवा उपवास सुजान। कातिक शुक्ल तीज गुण खान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनवरने कहो। कार्तिक सुदिग्यारसि शुभ लहो ॥ फिर करो अष्टम व्रत लोइ। मार्ग बदि ग्यारसि जब होइ ॥ २१ ॥ नवमोंव्रत मार्ग सुदितीज। ये व्रत धर्म वृक्ष के बीज ॥ या विधि करो नव वर्ष प्रमान। मन

वच काय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूर्ण होइ नि-
दान । उद्यापन कीजे गुणवान ।। श्री जिनवर अभिषेक
कराइ । करो माड़नो जिनगृह जाइ ॥ २३ ॥ अष्ट प्र
कारी पूजा करो । जन्म २ के पातक हरो ॥ यथाशक्ति
उपकरण बनाय । श्री जिन धाम चढ़ावो जाय । २४ ।
उद्यापन की शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥
सब विधि सुन दुर्गधा बाल । मन वच तन व्रत लीनो
हाल ॥ २५ ॥ गुरु भाषित तिन विधि ये कियो । पूर्व
भव अघ पानी दियो ॥ ताफल नारि लिंग छंदियो ।
सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहां आयु पूरण
कर सोय । चलत भयो मथुरा को लोय ।। श्रीधर राजा
राज करंत । ताके सुत उपजो गुणवंत ॥ २७॥ नाम
पद्म रथ मंडित भयो । एक दिवस वन क्रीड़ा गयो ॥
गुफा मध्य मुनिवर को देख । वन्दनकर सुन धर्म वि-
शेष ॥२८॥ तहां पूछे मुनिवर से सोय । तुम से अ-
धिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले सुन बाल ।
वास पूज्य दिन दीप्ति विशाल ॥ २९ ॥ चंपापुर राजें
जिनराज। तेज पुंज प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म
विषे चित दयो । समो शरण जिन वंदन गयो ॥३०॥

नमस्कार कर दीक्षा लई। तपकर गणधर पदवी भई ॥ अष्ट कर्म इस बिधि से जार। पहुंचो शिव पुर सिद्धि संभार ॥ ३१ ॥ लखो भव्यव्रत का सो प्रभाव। राजभोगि भयो शिव पुर राव ॥ जो नर नारि करे व्रतसार। सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ ३२ ॥

॥ इति श्रीमुक्तावलीव्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

९३ पुष्पांजलि व्रतकथा ।

। दोहा ।

वीर देवको प्रणमि कर, अर्चा करों त्रिकाल ।
पुष्पांजलि व्रतकी कथा, सुनो भव्य अघटाल ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

पर्वत विपुलाचल पर आय। समो शरण जिन वर का पाय ॥ तहं सुन राजा श्रेणिकराय। वन्दन चले प्रिया युत भाय ॥ २ ॥ वन्दन कर पूछे नृप तवे। हे प्रभु पुष्पाजलि व्रत अवे ॥ मोसे कहो करों चितलाय। कोने करो कहा भई आय ॥ ३ ॥ बोले गौतम बचन रसाल। जवू द्वीप मध्य सो विशाल। सीता नदी दक्षि-

दोहा—रत्न संचयपुर तहां, वजूसेन नृप आय।
जयबती वनिता लसे, पुत्र बिहानीथाय ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

पुत्र चाह जिन मंदिर गई, ज्ञानोदधि मुनि बदित भई ॥ हे मुनि नाथ कहो समझाय। मेरे पुत्र होइ के नाय ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

मुनि बोले हे बालकी, पुत्र होय शुभ सार। भूमिळ खंड सुसाधि है, मुक्ति तनो भरतार ॥ ७ ॥ सुनके मुनि के बचन तब, उपजो हर्ष अपार। क्रम से पूरे मान सब, पुत्र भयो शुभसार ॥ ८ ॥ यौवन वयस सो पाय के, क्रीडा मंडपसार। तहा व्योम से आइयो, खग भूप रतिसवार ॥ ९ ॥ रत्न शेखर को देख कर, बहुत प्रीति उत्साहि। मेघबाहनने पाचसो विद्या दीनी ताहिं ॥१०॥ ॥ चौपाई ॥ दोनो मित्र परस्पर प्रीति। गये मेरु बन्दन तज भीति॥ सिद्धि कूट चेत्यालयवन्दि। आये पंचपित आनन्दि ॥ ११ ॥ ताकी सखी जनाई सार। वेग स्वयम्बर करो तयार। भूरि भूप आये तत्काल। माल रत्न शेखर गलडाल ॥ १२ ॥ धूमकेत विद्याधर देख। क्रोध कियो मन माहिं विशेष ॥ कन्या काज दुष्टता धरी।

विद्यावल वहुमाया करी ॥ २३ ॥ रत्नशेखर से युद्ध सो करो । वहुत परस्पर विद्याधरो ॥ जीतो रत्न शेखर तिसवार । पाणि ग्रहण कियो व्यवहार ॥ १४ ॥ मदन मजूषा रानी संग । आयो अपने ग्रेह असंग ॥ वज्रसेन को कर नमस्कार । मातताता मन सुक्ख अपार ॥१५॥ एक दिना मन्दिर गिर योग । पहुंचेमित्र सहित सब लोग ॥ चारण मुनि वंदे तिहिवार । सुणो धर्म चित भयो उदार ॥ ॥१६॥ हे मुनि पूर्व जन्म सम्बन्ध । तीनोंके तुम कहो निव न्ध ॥ तव मुनि कहें सुनो चितधार । एक मृणालनगर सुखकार ॥ १७ ॥ नृप मंत्री एक तहां श्रुति कीर्ति । वन्धु मती वनिता अति प्रीति ॥ एक दिना वन क्रीड़ा गयो । नारी संगरमत सो भयो ॥ १८ ॥ पापी सर्प सो भक्षण करी । मंत्री मृतक लखी निजनरी ॥ भयो विरक्त जिनालय जाय । दिक्षालीनी मन हर्षाय ॥१९॥ यथाशक्ति तप कुछ दिन करो । पीछे भ्रष्ट भयो तपटरो ॥ गृह आरंभ करन चित ठनो । तब पुत्री मुख ऐसे भनों ॥ २० ॥ तात जो मेरु चढ़ोकिहि काज । फिर भव सिंधु पड़े तज लाज ॥ यों सुन प्रभावती वच सार मंत्री कोप कियो अधिकार ॥ २१ ॥ तव विद्या को

आज्ञा करी । पुत्री को ले बन मे धरी ॥ विद्या जब
बनमे ले गई । प्रभावती सब चिंता भई ॥ २२ ॥ अर
हंत भक्ति चित्त में धरी । तब विद्या फिर आई खरी ।
हे पुत्री तेरा चित जहां । वेग बोल पहुंचाऊं तहां ॥२३॥
पुत्री कही कैलाश के भाव । जिन दर्शन को अधिक ही
चाव ॥ पूजा करके बैठी वहां । पद्मावति आई सो
तहां ॥ २४ ॥ इनने भव्य देव आइयो । प्रभावती तब
पूछन लयो ॥ हे देवी कहिये किस काज । आये देवी
देव सो आज ॥ २५ ॥ पद्मावति बोली बचसार । पुष्पां
जलि व्रत है सुखकार ॥ भादों मास शुक्ल पंचमी । पंच
दिवस आरंभ न अमी ॥२६॥ प्रोषध यथाशक्ति व्यवहार ।
पूजो जिन चौवीसी सार ॥ नाना विधि के पुष्प जो
लाय । करो एक माला जो बनाय ॥२७॥ तीन काल वह
माला देय । बहुत भक्तिसे विनय करेय ॥ जपो जाप
शुभ मंत्र विचार । या विधि पंच वर्ष अवधार ॥२८॥ उ-
द्यापन कीजे पुनिसार । चार प्रकार दान अधिकार ॥
उद्यापन की शक्ति न होइ । तो दूनो व्रत कीजेसोय ॥२९॥
यह सुन प्रभावतीव्रत लयो । पद्मावती कृपा कर दयो ॥

स्वर्ग मुक्ति फलका दातार। है यह पुष्पांजलि व्रतसार ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

पद्मावति उपदेश से, लीना व्रत शुभ सार।
पृथ्वी पर सो प्रकाशि के कियो भक्ति चित धार ॥३१॥
तप विद्या श्रुतकीर्तिने, पाई अति जो प्रचंड।
प्रभावती व्रतखंड ने, आई सो बलवंड ॥ ३२ ॥

। चौपाई।

बासर तीन व्यतीते जबे। पद्मावति पुनि आई तबे ॥ विद्या सब भागी तत्काल। करो संन्यास मरण तिस काल ॥ ३३ ॥ कल्प सोलहवें मध्यसों जान। देव भयो सो पुण्य प्रमाण ॥ तहा देवने कियो विचार। मेरा तात भ्रष्ट आचार ॥ ३४ ॥ मैं सम्बोधो वाको अबे। उत्तम गति वह पावे तबे ॥ यही विचार देव आइयो। मरण संन्यास तात को कियो ॥ ३५ ॥ वाही स्वर्ग भयो सो देव। पुण्य प्रभाव लयो फल एव ॥ वसुमती माता का जीव। उपजाता ही स्वर्ग अतीव ॥ ३६ ॥ दोहा ॥

प्रभावती का जीव तू रत्नशेखर भयो आय।
माता का जो जीव है, मदन मंजूषा थाय ॥ ३७ ॥

। चौपाई ।

श्रुतिकीर्ति को जीवजो तहां । मंत्री मेघ वाहन है यहां ॥ ये तीनों के सुन पर्याय । भई सो चिन्ता अंग न माय ॥ ३८ ॥ सुन व्रत फल अरु गुरु की वानि भयो सुचित व्रत लीनो जानि ॥ अपने थान बहुरि आइयो । चक्रवर्ति पद भोग सु कियो ॥ ३९ ॥ समय पाय वैराग सो भयो । राज भार सब सुतको दयो ॥ त्रिगुप्ति मुनिके चरणो पास । दिक्षा लीनी परम हुलास ॥ ४० ॥ रत्न शेखर दिक्षाली जवे । भये मेघ वाहन मुनि तवे ॥ भवि जीवोंको अति सुखकार । केवल ज्ञान उपार्जो सार ॥ ४१ ॥ घाति कर्म निर्मूल सुकरे । पाछे मुक्ति पुरो अनुसरे ॥ या विधि व्रत पाले जो कोइ अजर अमर पद पावे सोइ ॥ ४२ ॥

इति श्री पुष्पांजलिव्रतकथा सम्पूर्णम् ।

८४ नंदीश्वर व्रत कथा ॥

दोहा-चरण नमों जिनराज के, जाते दुरित नशाय ।
शारद वदों भावसे, सद्गुरु सदा सहाय ॥१॥

। चौपाई ।

जंबू द्वीप सुदर्शन मेरु । रहो ताहि लवणोदधि

घर ॥ मेरु से दक्षिण भारत क्षेत्र । मगध देश सुख सम्पति हेतु ॥ २ ॥ राजगृह नगरी शुभ बसे । गढ मठ मंदिर सुन्दर लसे ॥ श्रेणिक राज करे सुप्रचंड । जिनलीमो अरियण परदंड ॥ ३ ॥ पटरानी चेलना सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठो सो राय । बन माली शिरनायो आय ॥ ४ ॥ दो कर जोड़ करे सो सेव । विपुलाचल आये जिन देव ॥ वर्द्धमान को आगम सुनो । जन्म सुफल चित अपने गुनो ॥ ५ ॥ राजा रानी पुरजन लोग । वंदन चले पूजने योग ॥ चलत २ सो पहुंचे तहां । समो शरण जिनवर का जहां ॥ ६ ॥ दे प्रदक्षिणा भीतर गये । वर्द्धमान के चरणों नये ॥ पुनि गण धर को कियो प्रणाम । हर्षित चित्त भयो अभिराम ॥ ७ ॥ दश विधि धर्म सुनो जिन पास । जाते गयो चित्त का त्रास ॥ दोकर जोड़ नृपति वीनयो । अति प्रमोद मेरे मन भयो ॥ ८ ॥ प्रभु दयाल अब कृपा करेव । व्रत नंदीश्वर कहो जिन देव ॥ अरु सब विधि कहिये समझाय । भाव सहित यों पूछो राय ॥ ९ ॥ अवधि ज्ञान धर मुनिवर कहें । कौशलदेश स्वर्ग सम रहें ॥ ताके मध्य अयोध्या पुरी । धनकण

सुखी छत्तीसो कुली ॥ १० ॥ तिहिपुर राज करे हरिसेन
त्याग तेग बल पूरण सेन ॥ वंश इक्ष्वाकु प्रगटे चक्रवे
ताकी आनि खंड षट चवे ॥ ११ ॥ पाट वंध रानी
नृप तीन । गधारी जेठी गुण लीन ॥ प्रिय मित्रा रूप
श्री नाम । साधे धर्म अर्थ अरुकाम ॥ १२ ॥ सुख से र-
हत बहुत दिन भये । ऋतु बसत वन राजा गये ॥ जल
क्रीड़ा यन क्रीड़ा करे । हास्य बिलास प्रीति अनुसरैं
॥ १३ ॥ ता वन मध्य कल्पद्रुम मूल । चंद्र कांति मणि
शिलानुकूल ॥ मंडप लता अधिक विस्तार । चारण
मुनि आये तिहिवार ॥१४॥ आरिंजय अमितंजय नाम
सोमदयालु धर्म के धाम ॥ राजा रानी पु जन नारि ।
देखे मुनि तिन दृष्टि पसारि ॥ १५ ॥ सब नर नारि
अनदित भये । क्रीडातज मुनि वन्दन गये ॥ त्रिया
पुरुष चरणों अनुसरे । अष्ट द्रव्य मुनि पूजे खरे ॥ १६
धर्म ध्यान कहो मुनि राय । श्रद्धा सहित सुनो कर भाय
राजा प्रश्न करी मुनि पास । सुनो धर्म भयो चित्त हु
लास ॥ १७ ॥ दल बल सहित सम्पदा घनी । और
भूमि षट खड जीतनी ॥ महापुण्य जो यह फल होइ ॥
गुरु बिन ज्ञान न पावे कोइ ॥ १८ ॥ बार २ विनय कर

सेव । पूर्व कहो भवान्तर देव ॥ अवधि ज्ञान बल मुनि
वर कहै । पर अहि क्षेत्र वनिक एक रहै ॥ सुखित कु
वेर मित्रता नाम । साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥ जेष्ठ
पुत्र श्री वर्म्मा कुमार । मध्यम जय वर्मा गुण सार ॥२०॥
लघु जय कीर्ति कीर्ति विख्यात । तीनों शुभ आनंदि
त गात ॥ एक दिवस उपजो शुभ कर्म । वन में आये
मुनिसौ धर्म ॥ २१ ॥ सेठ पुत्र मुनिवर वंदियो । श्री
वर्म्मा जो अठाई लियो॥ नन्दीश्वर व्रत विधि से पाल।
भव २ पाप पुंज को जाल ॥ २२ ॥ अंत समाधि मरण
को पाय । इस पुर वज्र बाहु नृप आय । ताके विमला
रानी जान । तुम हरि सेन पुत्र भये आन ॥ २३ ॥ पूर्व
व्रत पालो अभिराम । ताते लहो सुक्ख को धाम ॥
जय वर्म्मा जय कीर्ति वीर । निकट भव्य गुण साहस
धीर ॥ २४ ॥ वन्दे गुरु जो धुरधर देव । मन वच काय
करी बहुसेव ॥ तब मुनि पंच अनुव्रत दिये । दोनों
भाव सहित व्रत लिये ॥२५॥ अरु नन्दीश्वर व्रत तिन
लियो । अन्त समाधि मरण तिन कियो ॥ हस्तनागपुर
शुभ जहां वसे । तहां विमल वाहन नृपलसे ॥ २६ ॥
ताके नारि श्रीधरा नाम । आरिंजय अमितंजय धाम॥

पुत्र युगल हम उपजे तहां । पूर्व पुण्य भल पायो जहां ॥ २७ ॥ गुरु समीप जिन दिक्षालई । तप बल धारण पदवी भई ॥ याते हम तुम पूर्व भ्रात । देखत प्रेम उपजो गात ॥ २८ ॥ पूर्व व्रत नन्दीश्वर कियो । ताते राज चक्र पद लियो ॥ अब फिर व्रत नन्दीश्वर करो । ताते स्वर्ग मुक्ति पद धरो ॥ २९ ॥ तब हरिसेन कहे कर जोर । व्रत नन्दीश्वर कहो बहोर ॥ मुनिवर कहें द्वीप आठमो । तास नाम नन्दीश्वर नमो ॥ ३० ॥ ताके चहुं-दिशि पर्वत परे । अञ्जन दधि मुख रति कर धरे ॥ तेरह तेरह दिशि दिशि जान । ये सब पर्वत बावन मान ॥३१॥ पर्वत पर्वत पर जिन ग्रेह । वह परिमाण सुनो कर नेह ॥ सौ योजन ताका आयास । अरु पचास विस्तार सुतास ॥ ३२ ॥ उन्नति है योजन पचीस । सुर तहं आय नवासें शीश ॥ अष्टोत्तर सौ प्रतिमा जान । एक २ चैत्यालय मान ॥ ३३ ॥ गोपुर मणिमय के सुप्रकार । छत्र चमर ध्वज वंदन वार ॥ प्राति हार्य विधि शोभा भली । तिन रवि कोटि सोम छवि छली तास द्वीप मे सुरपति आय । पूजा भक्ति करे बहु भाय ॥ देव अव्रती व्रत तहां करें । भाव भक्ति कर पातिक हरें

॥ ३५ ॥ तास द्वीप सम्बन्धी सार। व्रत नंदीश्वर को अधिकार॥ यहां कहो जिनवर सुप्रकाशि। आदि अनादि पुण्य की राशि॥ जो व्रत भव्य भाव से करे। भव २ जन्म जरामय हरें॥ ताव्रत को सुनिये अधिकार। वर्ष २ में त्रय २ बार ॥३७॥ आषाढ़ कार्त्तिक अरु जो फाग। शाखा तीन करो अनुराग॥ आठो दिन आठैं पर्यंत। भक्ति सहित कीजे व्रत संत ॥३८॥ सातैं को एकासन करो। कर संयम जिनवर मन धरो॥ आठैं के दिन कर उपवास। जासे छूटे कर्म का आस ॥३९॥ करो प्रथम जिनका अभिषेक। जाते पातिक जांय अनेक॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो। सुख परमेष्टि पंच उच्चरो॥ तादिन व्रत नंदीश्वर नाम। ताका फल सुनियो अभिराम॥ फल उपवास लक्ष दश जान। श्री जिनवर ने करो बखान ॥ ४१ ॥ दूजे दिन जिन पूजा करो। पात्र दान दे पातिक हरो॥ अष्ट विभूति नाम दिन सोय। तादिन एकासन कर लोइ ॥२४॥फल उपवास सहस्र दश होइ। अब तीजो दिन सुनियें जोइ जिन पूजा कर पात्र हि दान। भोजन पानी भात प्रमान ॥४३॥ नाम त्रिलोक सार दिन कहो। साठ लाख

प्रोषध फल लहौ ॥ चतुर्थ दिन कर आमौदर्य । नाम चतुर्मुख दिनसोहर्य ॥ ४४ ॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ । पंचम दिन विधि करियो सोइ ॥ जिन पूजा एकासन करो । हय लक्षण जु नाम दिन धरो ॥४५॥ फल चौरासी लक्ष उपास । जासे जाय भ्रमण भव त्रास षष्टम दिन जिन पूजा दान । भोजन भात आसिली पान ॥४६॥ ता दिन नाम स्वर्ण सोपान । व्रत चालीस लक्ष फल जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान । कीजे भविजनका सन्मान ।४७॥ सब सम्पति नाम दिन सोइ भोजन भात त्रिवेली होइ ॥ फल उपवास लक्षकों जान अष्टम दिन व्रत चितमे आन ।४८॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो । पात्र दान दे सुकृत गुनो ॥ इन्द्रध्वज व्रत दिन तस नाम । सुमिरो जिनवर आठो जाम ॥ ४९ ॥ तीन करोड़ अतिलाख पचास । यह फल होइ हरे सब त्रास ॥ यह विधि आठ वर्षमें होइ । भाव सहित कीजे भवि लोइ ॥५०॥ उत्तम सात वर्ष विधि जान। मध्यम पांच तीन लघुमान ॥ उद्यापन विधिपूर्वक सचो। वेदी मध्य मंडलो रचो ॥५१ ॥ जिन पूजारु महा अभिषेक। चन्द्रोपम ध्वज कलश अनेक ॥ छत्रचमर सिंहासन करो

। बहुविधि जिन पूजो अघहरो ॥ ५२ ॥ चारों दान सुपात्रहि देउ । बहुत भक्ति कर विनय करेउ ॥ बहुविधिजिन प्रभावना होइ । शक्ति समान करो भविलोइ ॥५३॥ उद्यापन की शक्ति न होइ । तो दूनोव्रत कीजो सोइ ॥ जिन यह व्रत कीनो अभिराम । तिन पद लयो सुक्ख का धाम ॥ ५४ ॥ यह व्रत पूर्व महा फल लियो प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥ अनन्त वीर्य अपराजित पाल । चक्रवर्ति पदवी भई हाल ॥ ५५ ॥ श्रीपाल मैना सुन्दरी । व्रत कर कुष्ठ व्याधि सब हरी ॥ बहुतक नर नारी व्रत करी । तिन सब अजर अमर पद धरी ॥५६॥ सुनो विधान राय हरिसैन । अतिप्रमोद सुख उपजे चैन ॥ सब परिवार सहित व्रत लयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर दयो ॥५७। व्रतकर फिर उद्यापन करो । धर्मध्यान कर शुभ पद धरा ॥ अन्त समाधि मरण को पाय । भये देव हरिसैन सुराय ॥ ५८ । पर्यायान्तर जैहै मुक्ति । अशोक सुनो सकल व्रत युक्ति । गौतम कहो सकल अधिकार सुनो मगधपति चित्त उदार ॥५९॥ जो नरनारी यह व्रत करैं । निश्चय स्वर्गमुक्ति पद धरैं । संकट रोग शोक सब जाहिं । दुःख दरिद्रता दूर बिलाहिं ॥ ६० ॥ यह व्रत

मंदीश्वर की कथा। हेमराज सु प्रकाशी यथा। शहर इटावा उत्तम स्थान। श्रावक करें धर्म शुभ ध्यान।६१। सुने सदा ये जैन पुराण। गुणी जनों का राखें मान। तिहिठा सुना धर्मसम्बन्ध। कीनी कथा चौपईबंध।६२। कहें सुनें देवें उपदेश। लहें भावसे पुण्य अशेष। जाके नाम पाप मिट जाय। ताजिनवर के वंदों पांय ॥६३॥

इति श्री नन्दीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

८५ चेतन चरित्र।

(लावनी)

कुमति सुमति दो त्रिय चेतन के तिनका कथन सुनो नर नार। जासु श्रवण से निज स्वरूप लखि भव थिति घटि छूटे संसार ॥ टेक ॥ निश्चया नींद से अचेत होकर सोवे सेज चतुर्गतिया। वक्त तीव्र बीता चिन्मूरति काल लब्धि आई हतिया। सुरुचि तिष्ठ हिय सम्यग् दर्शन छोड गये अघ निज लतिया। सचेत होकर सुमति से क्यों न लगी मेरी छतिया। शैर। सुबुधि बोली कंथ से वैरिन कुमति बलवान रे। लखि आपको के जिन भनो कर जेर डारें खानरे। वर बुद्धि वाला सीख धरि तब कुबुधि रिस हाकर चली। तात

से पुत्री भने पिय हरी मोकों वेकली ॥ सुता वात सुन अनग भेजा चलो वुलाया है दरवार ॥ जासु० ॥ १ ॥ कहा दूत से जाउ न जावें लड़ने का वाना होगा। कही आय नृप से नही आवे लड़ने फौज जाना होगा ॥ राग द्वेष को हुक्म दिया सब सुभट यहां लाना होगा । सात व्यसन सरदार साथ हो चल के समर ठाना होगा ॥ शैर–करते गमन दल ले वहां से सम को आगे किया । पहुंच पुर चित को लखो गढ़ निकट जा डेरा किया । चिदानंद लखि सैन को अव तुरत ही वुलाया ज्ञान को । आके कहा लड़नेकी त्यारी कर हरो वेईमानको ॥ कहे वोध से वड़े शूरमा वुलावो आवें मम दरवार ॥ जासु० ॥ २ ॥ दान शील नव भाव धार सत चारित्र वल धर सजि आया । दर्शन उपशम सतोष समभाव सुभाव को वुलवाया ॥ विवेक चेतन सुध्यान युत वल दल का पार नही पाया । सावधान हो प्रवोध लड़ने का डंका वजवाया ॥ ॥ शैर ॥

युद्ध दोनों मिल हुआ मोहन भजा होगाफला । मारा विवेक ने सात को पुर देश भागा काफला ॥ हार अवृत कहे जा प्रतिख्याना पकड़ला । और सेना साथ ले व्रत भंग करके जकड़ला ॥ पहुंचे लड़न को सव

दल लेकर साजे सूरमा ले हथियार ॥ जासु० ॥ ३ ॥
दोनोंमें मिल पड़ी लड़ाई मची मार होड़ा होड़ी। मिथ्या
सास्वादन मैं जीव को करे मोह छोड़ा छोड़ी ॥ मोह
बली जित्ते करे जेर राखे सत्तर कोड़ा कोड़ी । तिवे
जीत जा मिले अवृतपुर जोड़ा जोड़ी ॥ शेर ॥
मिल एक दश प्रतिमासु पहुंचे देश व्रत पुर सार मे ।
आगे न जाते शस्त्र देवे रोक बैठ द्वार मे ॥ ध्यान तेगा
मार के सप्तम नगर चलता हुवा । तब मोहने सब शूर
ले लड़ने को फिर चलता हुआ ॥ राग सैन चले कषाय
निन्दा विषय त्याय प्रमत्त मे डार ॥ जासु० ॥ ४ ॥ अ
प्रमत्त किम राज होय कहै हम इन्से कैसे छूटे । अ-
ट्ठाइस गुण दो दश तप वे वाइस परीष सहै इम लूटे ॥
सप्तम पुर आजा रावल जब ध्यान तेज की लौ फूटे ।
प्रथम शुक्ल बल अष्टम शिरता नव में मोह नही टूटे ॥
शेर–सब ग्राम जीते जाय के हता मोह यह कैसे टले ।
जा शूर ले घेरा गांव सब उपसत तक मेरा चले ॥ पौं-
हुचे वहा छिप शूरना जिय निकस जास हराय के ।
सूक्ष्म सापराय नगरी आप प्रगटे आय के ॥ लोभ
मार वह भये निशंकित कौन लड़ेगा बारबार ॥जासु०॥

॥ ५ ॥ पकड़ बांह मिथ्यात में डाला करा लोहने ऐसा वल । चिदानंद निजबुला लडने को जोरा अपना दल॥ तीन करण से सातों दथ करि लीना अवृत पुर भट चल । देश व्रत पुर लिया अनूपम अप्रतिख्यान डारा दल मल ॥ शेर ॥ प्रतिख्यान को नाश कर षट् सप्त पहुंचे आय के । दो करण से तीन मारे लीना वसुपुर जायके । अनुव्रत करण छत्तीस मारे लोभ को ततछिण हरा । तबही उपशम जलधि के बारह में पोंहचा जा-खरा ॥ प्रतिख्यान चारित्र प्रघट तहां द्वितीय शुक्ल असि कर गहि सार ॥ जाखु० ॥ ६ ॥ सोलह शूरमा तहा विनाशे दोष अठारह गये कट फट । प्रघटे गुण छया-लीस जहां पर लोकालोक लखा घट पट ॥ निरोध योग निर्वृत्य क्रिया कर कृपाण गहि लीना झट पट । अयोगपुर का राज्य लिया जहां प्रकृति पचासी गईं हट छट ॥ शेर ॥ पहुंचे जाकर मोक्ष पुर जहां गुण होते भये । अक्षय अनादि अनंत सुखने लीन जब होते भये ॥ निज शरीर से हीन कछुक पुरुषाकार प्रदेश है । आपे आप जिनम्न पर का नहीं लवलेश है ॥ क्षमा धार शोधो ज्ञानी जन लघु धी रूपचंद कहै पुकार ॥जाखु० ७॥

॥ इति ॥

९६ अद्याष्टक ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥ १ ॥ अद्य संसार गंभीर पारावारः सुदुस्तरः । सुतरोऽय क्षणो नैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातो ऽहं धर्म तीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्व मङ्गलम् । संसारार्णव तीर्णो ऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्माष्टक ज्वालं विधूतं सकषायकम् । दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्याग्रहाः सर्वे शुभाश्चैका दशतिस्थाः । नष्टानि विघ्न जालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः। सुखसङ्ग समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥ अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनि मग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ । अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ताज्ञानदिवाकरः । उदितो मच्छरीरेस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽह जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमा-

मसः । तस्य सर्वार्थ संसिद्धि र्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥११॥

इति अष्टाष्टक समाप्तम् ॥

८७ महावीराष्टक ॥

[शिखरणी छन्द]

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः । समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥ जगत्साक्षी मार्गप्रगटनपरो भानुरिव यो । महावीरस्वामी नयन पथगामी भवतु मे ॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्द रहितं, जनान्कोपापायं प्रगटयति बाह्यन्तरमपि ॥ स्फुट मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला । महावीर० ॥ २ ॥ नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं । लसत्पादाम्भोजद्वयमिह यदीयं तनुभृता ॥ भवज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि । महावीर० ॥ ३ ॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इव । क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगति । महावीर० ॥ ५ ॥ यदी-

या वागाङ्गा विविधनयकल्लोलविमला । वृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः । कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ॥ स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः । महावी० ॥ ७ ॥ महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग् । निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्गलकरः ॥ शरण्यः साधूनां भव भयभृतामुत्तमगुणो । महावीर० ॥८॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । यः पठेच्छृणुयाच्चापि सयाति परमांगतिम् ॥ ९ ॥

॥ इति महावीराष्टकं स्तोत्रं समाप्तम् ॥

९८ अकलंकस्तोत्र ।

शार्दूल विक्रीडित छन्दः ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकाल विषयं सालोकमालोकितम् साक्षाद्येन यथा स्वय करतले रेखात्रयं सांगुलि॥ राग द्वेष भयामयान्तक जरा लोलत्व लोभादयो, नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया वन्द्यते ॥ १ ॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा वन्हिना, यो वा नृत्यति मत्त

वतिपतृवने यस्यात्मजोवागुहः ॥ सोऽयं किं मम शङ्करो भयतृषारोषार्तिमोहक्षयं । कृत्वायः स तु सर्वबित्तनुभृता क्षेमंकर, शङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येन्द्रवक्षःस्थलम् । सारथ्येन धनञ्जयस्य समरेयोऽमारयत्कौरवान् । नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतम् । विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥ उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीय पुनः । पात्रीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिम् ॥ आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । क्षुत्तृष्णाश्रमर गरोगरहितो ब्रह्माकृतार्थोऽस्तुन. ॥४॥ योजग्ध्वापिशितंसमत्स्यकवलं जीवच शून्यंवदन्। कर्त्ताकर्मफलंन भुंक्त इतियो बक्ता स बुद्धः कथम् ॥ यज्ज्ञानं क्षणवर्त्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तंसदा। योजानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धोमम ॥ ५ ॥ स्रग्धरा छंद ॥

ईशः किं छिन्नलिगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात् । नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च । आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं । संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेश विभ्रान्तचेताः । शम्भुःखट्वाङ्गधारीगिरि

पतितनयापांगलीलानुविद्धः । विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्य मोहादर्हन्निध्वस्तरागो जितसकल भयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥७॥ शार्दूलविक्रीडित छन्दः ॥

एको नृत्यति विप्रसार्य कुकुभा चक्रे सहस्रंभुजा नेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यदाय निद्रायते। दृष्टुं चारुतिलोत्तमासुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता । मेते मुक्तिपथं वदन्तिविदुषा मित्येतदत्यद्भुतम् ॥८॥ स्रग्धरा छन्दः ॥

यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् । तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषंतंबुद्धंवा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवंवा शिवंवा ॥९॥

शार्दूलविक्रीडित छंद ॥

मायानास्ति जटा कपालमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रमुखं । कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः सोऽस्मान्पातुनिरञ्जनो जिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मः शिवः । नो ब्रह्मांकित भूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं नो चन्द्रार्क्करांकितं सुरपतेर्वज्राङ्कितं नैव च । षड्वक्त्राङ्कित बौद्धदेव हुतभुग्यक्षोरगैर्नाङ्कितं नग्नंपश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितं ॥ ११ ॥ मौञ्जी दण्डकमण्डलुप्रभृतयो नो

लाञ्छनंब्रह्मणो। रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कोपीन
खट्वाङ्गना। विष्णोश्चक्रगदादि शङ्खमतुलं बुद्धस्य रक्ता-
म्बरं। नग्नंपश्यतवादिनो जगदिदं जैनेद्रमुन्द्राङ्कितम्॥१२
नाहङ्कारवशी कृतेन मनसा नाद्वेषिणा केवल, नैरात्म्यं
प्रतिपद्यनश्यति जनेकारुण्यबुद्ध्यामया। राज्ञ· श्रीहिम
शीतलस्य सदसिप्रायो विदग्ध·त्मनोबौद्धोघान्सकलान्
विजित्यसघटः पादेनविस्फालित·॥१३॥ स्रग्धराछन्दः॥

खट्वाङ्गंनैवहस्ते नच हृदिरचितालम्बते मुण्डमाला,
भस्माङ्ग नैवशूलं नच गिरिदुहिता नैवहस्तेकपाल। च
न्द्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः, त
वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं॥१४॥

शार्दूलविक्रीडित छन्दः॥

किं वाद्योभगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ,
काले यो जनतासुधर्म निहितो देवोऽकलङ्कोजिनः। यस्य
स्फारविवेकमुद्रलहरी जालेऽप्रमेयाकुला। निर्मग्ना तनु
तेतरां भगवती ताराशिरः कम्पनम्॥ सा तारा खलु दे
वता भगवती मन्या·पिमन्यामहे, षण्मासावधि जाड्य
सांख्यभगवद्भट्टाकलकप्रभोः। वा कल्लोल परम्पराभिरमते
नूनं मनो मज्जनव्यापारं सहते स्म विस्मितमतिः सन्ता
ड़ितेतस्तत·॥ इति श्रीअकलङ्कस्तोत्र सम्पूर्णम्॥

 भक्तामरस्तोत्रम् ॥

वसन्ततिलकावृत्तम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापतमोवितानम् । सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादावालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधादुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठः स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् । बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्बमन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥ वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र शशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या । कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश । कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् । यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥ ६ ॥ त्वत्संस्तवेन भव-

सन्ततिसन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् । आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद मारभ्यते तनुधियापि तवप्रभावात् । चेतो हरिष्यति सतांनलिनीदलेषु मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदविन्दुः॥८॥ आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोष त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥ नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः । तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥ दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः । पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत । तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति॥१२॥ वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् । बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥ १३ ॥ सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घय-

न्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति
संचरतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशा-
ङ्गनाभिर्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम्। कल्पा-
न्तकालमरुता चलिताचलेन किं मन्दिराद्रिशिखरं चलितं
कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्त्तिरपवर्जिततैलपूरः कृत्स्नं
जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो न जातु मरुतां च-
लिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः
॥ १६ ॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीक-
रोषि सहसा युगपज्जगन्ति। नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहा-
प्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ॥ १७ ॥
नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहुवदनस्य
न वारिदानाम् । विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु
शशिनाह्नि विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु
नाथ । निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके कार्यं कि-
यज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि वि
भाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजो महामणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काचशकले
किरणाकुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा

दृष्टेषु येषु हृदय त्वयि तोषमेति । किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता । सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः परस्तात् । त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिव पदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्य-मसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् । योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः२४ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्र-यशङ्करत्वात् । धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्व्यक्तं त्वमेवभगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति हराय नाथ तुभ्य नमः क्षितितलामलभूषणाय । तुभ्य नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशो-षणाय ॥ २६ ॥ को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश । दोषैरुपात्तविबुधाश्र-यजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥ उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो

नितान्तम्। स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो वितान बिम्ब र॰
वेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥ सिंहासने मणिमयूखशि-
खाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्। बिम्बं
वियद्विलसदंशुलतावितान तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र
रश्मेः ॥२९॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते
तव वपुः कलधौतकान्तम्। उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवा
रिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रयं
तव विभाति शशाङ्ककान्तमुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर
प्रतापम्। मुक्ताफलप्रकरजालविवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रि-
जगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥ गम्भीरताररवपूरितदिग्वि-
भागस्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः। सद्धर्मराजजयघो-
षणघोषकःसन् खेदुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥
मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजात सन्तानकादिकुसुमोत्कर
वृष्टिरुद्धा। गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता दिव्या
दिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥ ३३॥ शुम्भत्प्रभावल-
यभूरिविभाविभोस्ते लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ति
प्रोद्यद्दिवाकरनिरन्तरभूरिसंख्या दीप्त्या जयत्यपि नि-
शामपि सोमसौम्याम् ॥३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्ग
णेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः। दिव्यध्वनिर्भवति
ते विशदार्थसर्वभाषास्वभावपरिणामगुणप्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ। पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि तत्र विबुधः परिकल्पयन्ति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य। यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकासिनोऽपि॥ ३७ ॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥ भिन्नेभकुम्भगलदुज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः। बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३९॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्। विश्वं जिघत्सुमिव सन्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥ ४० ॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्। आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्कस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः॥ ४१ ॥ वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्। उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥ ४२ ॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाह वेगावतारतरणातुरयोधभीमे। युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ । रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयान-पात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥ ४४ ॥ उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः । त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः । त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥ ४६ ॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रं समाप्तम्।

१०७ तत्त्वार्थ सूत्राणि ॥

॥ मङ्गलम् ॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

शास्त्रप्रारम्भः ॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमा-
र्गः ॥१॥ तत्वार्थश्रद्धानंसम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिग-
माद्वा ॥३॥ जीवाजीवाश्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्वम्
॥४॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयै-
रधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थिति
विधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्याक्षेत्र स्पर्शनकालान्तरभावा-
ल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्य्ययकेवलानि
ज्ञानम् ॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्येपरोक्षम् ॥ ११ ॥
प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनि
बोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमि-
त्तम् ॥ १४ ॥ अवग्रहेहावाय धारणाः ॥ १५ ॥ बहुबहु-
विधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अ-
र्थस्य ॥ १७ ॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥ १८ ॥ न चक्षुरनिन्द्रि-
याभ्याम् ॥ १९ ॥ श्रुतं मतिपूर्वंद्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥
भवप्रत्ययोवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥ क्षयोपशमनि-
मित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥ ऋजु विपुलमती
मनःपर्य्ययः ॥ २३ ॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः
॥ २४ ॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनः पर्ययोः
॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥
रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥ तदनन्तभागे मनः पर्य्ययस्य ॥ २८ ॥
सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि भाज्यानि

युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसंग्रहव्यवहार ऋजुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूतानयाः ॥ ३३ ॥ ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयानां चैव लक्षणम् । ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोध्यायः ॥ १ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रद्वितीयाध्यायः ।

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रिभेदा यथाक्रमम् ॥ २ ॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोऽपभोगवीर्य्याणिच ॥ ४ ॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपंच भेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासयमाश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिङ्ग मिथ्यादर्शनाज्ञानासंयमासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकषड्भेदाः ॥ ६ ॥ जीव भव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगोलक्षणम् ॥ ८ ॥ स द्विविधोष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥ समनस्कामनस्काः ॥ ११ ॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियं ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगो

भावेन्द्रियम् ॥ १८ ॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुः श्रोत्राणि ॥ १९ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥ वनस्पत्यन्तानामेकं ॥ २२ ॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २३ ॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥ अनुश्रेणिगतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहाजीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाविग्रहाः ॥ २९ ॥ एकंद्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥ ३० ॥ सन्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥ ३१ ॥ सचित्तशीतसंवृताः सेतराम्मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजांडजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥ शेषाणां सन्मूर्छनं ॥ ३५ ॥ औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परम्परं सूक्ष्मं ॥ ३७ ॥ प्रदेशतो संख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥ ३८ ॥ अनन्त गुणे परे ॥ ३९ ॥ अप्रतीघाते ॥ ४० ॥ अनादिसम्बन्धे च ॥ ४१ ॥ सर्वस्य ॥ ४२ ॥ तदादीनि भाज्यानियुगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥ निरूपभोगमन्त्यम् ॥ ४४ ॥ गर्भसन्मूर्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥ औपपादिकं वैक्रियकं ॥ ४६ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥ तैजसमपि ॥ ४८ ॥ शुभंविशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥ नारकसन्मूर्छनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥ नदेवाः ॥ ५१ ॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येय वर्षायुषोनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोध्यायः ॥२॥

अथ तत्वार्थसूत्र तृतीयोध्यायः ।

रत्नशर्करावालुकापंकधूमतमोमहातमः प्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोधः ॥ १ ॥ तासुत्रिंशत्पंचविंशति पंच दश दश त्रिपंचोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमं ॥ २ ॥ प्रथमायाम्प्रतरास्त्रयोदशादयो द्विहीनाः ॥ ३ ॥ नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणाम देहवेदनाविक्रियाः ॥ ४ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ५ ॥ संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥ ६ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतिः त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा स्थितिः ॥ ७ ॥ जंबूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥ ८ ॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः ॥ ९ ॥ पूर्वपूर्व परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ १० ॥ तन्मध्येमेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भोजंबूद्वीपः ॥ ११ ॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १२ ॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायत ॥ १३ ॥ हिमवन् महाहिमवन् निषधनील रुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ १४ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १५ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १६ ॥ पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरिमहा-

पुण्डरीक पुण्डरीकाः ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १७ ॥ प्रथमो योजन सहस्रायामस्तदर्द्धं विष्कम्भोह्रदः ॥ १८ ॥ दश-योजनावगाहाः ॥ १९ ॥ तन्मध्ये योजन पुष्करं ॥ २० ॥ तद्द्विगुणाद्विगुणाह्रदाः पुष्कराणि च ॥ २१ ॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्त्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ २२ ॥ गङ्गासिंधुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नरकान्ता सुवर्णरूप्यकूला रक्तारक्तोदा सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २३ ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २४ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २५ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृत्ता गंगासिन्ध्वाद्योनद्यः ॥ २६ ॥ भरतः षट्विंशतिः पञ्चयोजनशतविस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २७ ॥ तद्द्विगुणाद्विगुणविस्ताराः वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥ २८॥ उत्तरा दक्षिण तुल्याः ॥ २९ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट् समयाभ्यामुत्सर्प्पिण्यवसर्प्पिणीभ्याम् ॥ ३० ॥ ताभ्यामपरा भूमयोवस्थिताः ॥ ३१ ॥ एक द्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदेवकुरुवकाः ॥ ३२ ॥ तथोत्तराः ॥ ३३ ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३४ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जंबू द्वीपस्य नवति शतं भाग ॥३५॥ द्विर्धातुकीखण्डे॥३६॥ पुष्करार्द्धे च ॥३७॥ प्राङ् मानुष्योत्तरान्मनुष्याः॥३८॥आर्याम्लेच्छाश्च ॥३९॥भरतैरावतविदेहाःकर्म्म

भूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥४०॥ नृस्थितिः परावरे त्रिपल्योपमान्तरमुहूर्ते ॥४१॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र चतुर्थोध्यायः ।

देवाश्चचतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्च द्वादश विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः । ३ ॥ इन्द्रसामानिक त्रयस्त्रिंशत् पारिषदात्मरक्षलोकपालानीक प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रयस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ काय प्रवीचारा आईशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः ॥ ८ ॥ परेप्रवीचाराः ॥९॥ भवन वासिनोसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितो धि द्वीपदिक्कुमाराः ।१०। व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगंधर्व यक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११। ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह नक्षत्रप्रकीर्णक तारकाश्च ॥ १२ । प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उ युपरि ॥ १८ ॥ सौधर्मैशानसनत्कुमारमाहेन्द्र ब्रह्म ब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारेष्वान

तप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्त-
जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभा-
वसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोधिकाः॥२०॥
गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतोहीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्म-
शुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यःकल्पः ॥२३॥
ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादित्य-
वन्ह्यरुणगर्द्द तोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥ विज
यादिषु द्विचरमा ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषा
स्तिर्य्यग्योनयः ॥ २७ ॥ स्थितिरसुरनाग सुपर्णद्वीपशे
षाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्ध हीनमिताः ॥ २८ ॥ सौ
धर्मैशानयोः सागरोपमेधिके॥२९॥ सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः
सप्त॥३०॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानितु
॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसुग्रैवेयकेषुविजया
दिषु सर्वार्थसिद्धौच॥३२॥ अपरापल्योपममधिकं ॥३३॥
परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥ नारकाणा च ॥३५॥
द्वितीयादिषु ॥३६॥ दशवर्ष सहस्राणि प्रथम याम्॥३७॥
भवनेषु च॥३८॥व्यन्तराणा च॥ ३९॥परापल्योपममधिकम्
॥४०॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ४१ ॥ तदष्टभागोपरा ॥ ४२ ॥
लौकान्तिकानामष्टौसागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४३ ॥
इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रपञ्चमाध्यायः ।

अजीवकाय¹ धर्म्माधर्माकाशपुद्गलाः॥१॥ द्रव्याणि ॥ २ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि । ६॥ निःक्रियाणिच ॥ ७ ॥ असंख्येयाः प्रदेशाधर्म्माधर्म्मैक जीवानाम् । ८ ॥ आकाशस्यानंताः ॥ ९ ॥ संख्येया-मंख्येयाश्चपुद्गलानां ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोका काशेवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एक प्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असंख्येयभा गादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहारविसर्पाभ्यास्प्र दीपवत् ॥ १६ ॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपका रः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापाना पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवितमर-णोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरसगंधवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्य स्थौल्य संस्थानभेदतमश्छाया तपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवस्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेदसंघातेभ्यः उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥ २७ । भेद संघाताभ्या चाक्षुषः ॥ २८ ॥ स-द्द्रव्य लक्षणं ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ।३०। सद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः॥३२॥

स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्ध. ॥ ३३ ॥ नजघन्य गुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिक दिगुणानांतु ॥ ३६ ॥ बन्धोधिकौपारि णामिकौच ॥ ३७ ॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यं ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनंतसमय ॥ ४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणागुणः ॥४१॥ तद्भाव.परिणामः ॥ ४२ ॥ इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथतत्वार्थसूत्रषष्ठाध्यायः ।

कायवाङ्मनः कर्म्मयोगः ॥ १ ॥ स आश्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकाषायाकषाययोः साम्परायिकेर्य्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकषाया व्रतक्रियाः पञ्च चतुः पञ्चपञ्चविंशतिसख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भसमरम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतिकषायविशेषस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्त्तनानिक्षपसंयोगनिसर्गाद्द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परं ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिन्हव मात्सर्यान्त रायासादनोपघाताज्ञानदर्शनावरणयोः ।१०। दुःख शोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थापनान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूत वृत्यनुकम्पादानमराग संयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलि श्रुत संघ धर्म देवावर्णवादो दर्शन मोहस्य

॥ १३ ॥ कषायोदयात् तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ वह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥ मायास्तैर्य्यग्योनस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥ स्वभाव मार्द्दवंच ॥ १८ ॥ निश्शीलव्रतत्व च सर्वेषां ॥१९॥ सराग संयम संयमासंयमाकामनिज्जरा बालतपांसिदेवस्य ॥ २० ॥ सम्यक्त्वंच ॥ २१ ॥ योगवक्रताविसम्वादनंचाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शन विशुद्धिविनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोभीक्ष्णज्ञानोपयोग संवेगौशक्तिस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य बहुश्रुत प्रवचन भक्तिरावश्यकापरिहाणि मार्ग प्रभावनाप्रवचन वात्सल्यत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिंदा प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥तद्विपर्य्ययोनीचैर्वृ त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥विघ्नकरणमन्तरायस्य॥२७॥ इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथतत्वार्थसूत्रसप्तमाध्यायः ।

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्योविरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्वतोणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङमनोगुप्तीर्यादान निक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानिपंच ॥ ४ ॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च ॥४॥ शून्यागारविमो-

चितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्मा विसंवादाः पंच ॥ ६ ॥ स्त्रीरागकथाश्रवण तन्मनोहरांग निरीक्षण पूर्व रतानुस्मरण वृष्येष्ट रसस्वशरीर संस्कार परित्यागाः पंच ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषय रागद्वेषविवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहा मुत्रा पायावद्यदर्शनं ॥ ९ ॥ दुःखमेववा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोद कारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमाना विनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेग वैराग्यार्थं॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणंहिंसा ॥ १३ ॥ असदभिधान मनृत ॥ १४ ॥ अदत्तादान स्तेयम् ॥ १५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परग्रहः ॥१७। निश्शल्यो व्रती ॥१८॥ आगार्यनगारश्च। १९॥ अणुव्रतोगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदंडविरति सामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणान्तिकीसल्लेखनायोषिता ॥२२॥ शंकाकांक्षाविचिकित्सान्यदृष्टि प्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टरतीचाराः ॥२३ ॥व्रतशीलेषु पंच पच यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्धवधछेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः । २५ ॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेख क्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगस्तादाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरण

त्वरिकापरिगृहीतपरिगृहीता गमनानंगक्रीड़ा काम तीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यभांड प्रमाणातिक्रमाः॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम क्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयन प्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपः ॥३१॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि॥३२॥योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादर स्मृत्युपस्थानानि ॥३४॥सचित्त सम्बन्धसन्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः॥३५॥सचित्तनिक्षेपा पिधानपरव्यपदेशकरणमात्सर्य कालातिक्रमाः॥३६॥जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥३७॥अनुग्रहार्थंस्वस्यातिसर्गोदान।३८।विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः।३९। इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अथ तत्वार्थसूत्रअष्टमाध्यायः ॥

मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगाः बंध हेतवः ॥ १ ॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्तेसबन्धः॥२। प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः॥३। आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम गोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पंच नवद्व्यष्टाविंशतिश्चतुर्द्विचत्वारिंशतद्विपंच भेदा यथाक्रमम् ॥ ५॥ मतिश्रुतावधिमनः

पर्य्ययकेवलानाम् ॥६॥ चक्षुरवधिकेवलाना निद्रा निद्रा निद्रा प्रचलाप्रचलाप्रचलास्थान गृद्धयश्च ॥ ७ ॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शनचारित्र मोहनीयाकषाया कषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः ॥९॥ सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायाकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सा स्त्रीपुंनपुन्सकवेदानन्तानुवन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोध मान मायालोभाः ॥ १० ॥ नारकतैर्य्यग्योनिमानुष्यदैवानि ॥११॥ गतिजातिशरीरागोपागनिर्माणवन्धन संघातसंस्थान संहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यगुरूलघूपघातपरघाततपोद्योतपच्छ्वास विहायो गतयः प्रत्येकशरीर त्रस सुभग सुस्वर शुभ सूक्ष्म पर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चै र्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदितेस्तिसृणामतरायस्य घत्रिंशत्सागरोपमकोटी कोटयः परास्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नाम गोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमान्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा द्वादश मुहूर्त्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नाम गोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ताः ॥ २० ॥ विपाकोनुभवः ॥ २१ ॥ सयथानाम् ॥ २२ ॥ ततश्च निर्ज्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययायो सबतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिता, सर्वात्मप्र

देशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे अष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र नवमाध्यायः ।

आस्रावनिरोधःसंवरः॥ १ ॥सगुप्तिसमिति धार्म्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २॥ तपसा निर्जराच ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहोगुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चनब्रह्मचर्याणि धर्माः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्व शुच्यास्त्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षा ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशबधबन्धनयाचना लाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥ एकादश जिने ॥ ११ ॥ बादसाम्पराये सर्वे॥१२ ॥ ज्ञानावरणप्रज्ञाज्ञाने॥१३॥दर्शनमोहान्तरराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥ चारित्र मोहेनाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याशय्याक्रोशयाचनासत्कार पुरस्काराः॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयोभाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः॥१७॥ सा

मायिकछेदोपस्थापनपरिहास विशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनावमौदर्य वृत्ति परिसंख्यान रस परित्याग विविक्तशय्यासनकायक्लेशवा ह्यन्तपः॥ १९॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्तस्वाध्यायव्युत्सर्ग ध्यानान्यन्तरम् ॥ २० ॥ नव चतुर्दश पंचद्विभेदाः यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचन प्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्वी शैक्ष ग्लानगण कुलसंघसाधु मनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचना प्रच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्यो ॥ २६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्ता निरोधोध्यानमन्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्तरौद्रधर्मशुक्लानि॥२८॥ परे मोक्षहेतुः ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य ॥ सम्प्रयोगेतद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥ ३४ ॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥ ३५ ॥ आज्ञापायविपाक संस्थानविचयाय धर्म्मम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविद, ॥३७॥, परे केवलिनः ३८ पृथक्त्वैकत्व वितर्क सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरितक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोगकाय योगा योगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवित-

र्कविचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अविचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥ वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोग संक्रान्तिः ॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोप शान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिना ॥ क्रमशो संख्येय गुण निर्ज्जरः ॥ ४५ ॥ पुलाक वकुशकुशीलनिर्ग्रंथाः ॥ ४६ ॥ संयमश्रुत प्रति सेवना तीर्थलिंग लेश्योपपादस्थान विकल्पतः साध्याः ॥ ४७ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रदशमोऽध्यायः ॥

मोह क्षयात्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्चकेवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्याकृत्स्न कर्म विप्रमोक्षोमोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि भव्यत्वानां च ॥ ३ ॥ अन्यत्र केवल सम्यक्त्व ज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥ ४ ॥ तदनन्तररूर्ध्वं गच्छत्य लोकांतात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्बन्धछेदात्तथागति परिणामाच्च ॥६॥ आविद्ध कुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालां-वुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकाया भावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिंगतीर्थ चारित्रप्रत्येकबुद्धवोधित ज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

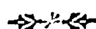
इति तत्वार्थाधिगमेमोक्षशास्त्र दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

॥ इति जैनार्णव समाप्तम् ॥

वन्देजिनवरम् ॥

जैनार्णवके ग्रन्थोंका

सूचीपत्र ।



नाम पुस्तक ।	पृष्ठ	नाम पुस्तक ।	पृष्ठ
१ पंच मंगल	१	१२ बा० सीता	८१
२ देवशास्त्रगुरुपूजा	११	१३ बा० राजुल	८५
३ सिद्ध पूजा	१७	१४ बा० मुनिराज	९४
४ सप्तऋषि पूजा	२२	१५ बा० बज्रदन्त	१०९
५ शान्ति पाठ	२७	१६ सामायक	१११
६ सहस्रनाम	२९	१७बारहभा०(भैयालाल)	११७
७ भक्तामर भाषा	४८	१८ बारहभा० भूधर)	११९
८ कल्याणमंदिरभाषा	५६	१९बारहभा०(बुधजन)	१२१
९ विषापहार भाषा	६३	२०बारहभा०(रत्नचंद)	१२४
१० एकीभाव भाषा	६८	२१ बाईसपरीषह (भैयालाल)	१२८
११ जिनचतुर्विंशति	७४	२२ बाईसपरीषह(भूधर)	१३८

नाम पुस्तक ।	पृष्ठ	नाम पुस्तक ।	पृष्ठ
२३ बाईसपरीषह (रत्नचंद)	१४६	३८ निशभोजनकथा	२१०
२४ बाईसपरीषह (नन्दलाल)	१५२	३९ रविव्रत कथा	२१३
२५ प्रश्नोत्तरसै० रा०	१५९	४० बाराजुलसोरठमें	२१०
२६ नेमव्याह (खेमचंद)	१६६	४१ पुकार पचीसी	२१८
२७ नेमव्याह (विनोदी)	१७२	४२ कृपण पचीसी	२२३
२८ आरती संग्रह	१७५	४३ उपदेश पचीसी	२३१
२९ होली संग्रह	१७८	४४ धर्म पचीशी	२३४
३० प्रभाती संग्रह	१८३	४५ अध्यात्मपचीसी	२३८
३१ जैनभजनसंग्रह	१८६	४६ हुक्का निषेध	२४१
३२ लावनी संग्रह	१९४	४७ स्तोत्र (भूधर)	२४७
३३ गौरी संग्रह	१९७	४८ स्तोत्र (उदयराज)	२४९
३४ परमार्थज० (दौलत)	२००	४९ स्तोत्र (दौलत)	२५१
३५ परमार्थज० (रामकृष्ण)	२०१	५० स्तोत्र (द्यानत)	२५४
३६ परमार्थज० (दौलत)	२०४	५१ वैराग्य भावना	२५६
३७ समाधिमरण	२०८	५२ निर्वाणकांड भाषा	२५९

नाम पुस्तक।	पृष्ठ	नाम पुस्तक।	पृष्ठ
५३ निर्वाणकाण्डगाथा	२६३	६८ जिनवरपचीसी	३०४
५४ आलोचनापाठ	२६६	६९ जिनगुणमुक्तावली	३१२
५५ संकट हरण	२७७	७० साधुवन्दना	३१७
५६ दुःख हरण	२७५	७१ सूवा बत्तीसी	३२२
५७ जिनेन्द्र स्तुति	२७९	७२ सुगुरुशतक	३२६
५८ विनती (भूधर)	२८०	७३ प्रतिमाचालीसी	३३६
५९ विनती (भूधर)	२८१	७४ बारहखडी	३४४
६० विनती नाथूराम	२८३	७५ सोलहकारणभा०	३५९
६१ विनती (भूधर)	२८४	७६ णमोकारमाहात्म	३६२
६२ विनती (भूधर)	२८६	७७ शील माहात्म	३६५
६३ विनती (भूधर)	२८७	७८ छहढाला	३६८
६४ अढ़ाईरासा	२८९	७९ राजुल पचीसी	३८४
६५ जिनगिर स्तवन	२९३	८० जलगालन विधि	३९३
६६ जिनदर्शन भाषा	२९५	८१ धारे भाषा	३९८
६७ नरकोंकेदोहे	२९६	८२ अरहन्त मंगल	४००

नाम पुस्तक।	पृष्ठ		नाम पुस्तक।	पृष्ठ
८३ सिद्ध मंगल	४०३	९८	अकलंकस्तोत्र	४६४
८४ आचार्य मंगल	४०६	९९	भक्तामरस्तोत्र	४६८
८५ उपाध्याय मंगल	४०९	१००	तत्वार्थ सूत्र	४७४
८६ साधु मंगल	४११		इति।	
८७ ऋषि पञ्चमीकथा	४१४			
८८ सुगन्ध दशमी कथा	४२३			
८९ अनन्त चौदशकथा	४२८			
९० रत्नत्रय कथा	४३३			
९१ दशलक्षण कथा	४३६			
९२ मुक्तावली कथा	४४१			
९३ पुष्पांजलि कथा	४४५			
९४ नन्दीश्वर कथा	४५०			
९५ चेतन चरित्र	४५८			
९६ अष्टाष्टक	४६२			
९७ महावीराष्टक	४६३			

